

# निके चमत्कार

10.3

है।

ज

आई एक्सेसरीज  
से संपर्क करें

ENTERPRISES  
DISTRIBUTY  
54, BARAL  
UTOMOBIL  
Y 233167, 7  
AGENCY 2  
RUKKHAB  
06, VASA  
, HARDOI  
RS 234541  
I AUTO SA  
2465200, 2  
0, MORAI  
2644136,  
0801/03, C  
2283, 2327  
RANPIE  
RS 231281  
MPANY 2

भावतीप्रसाद श्रीवास्तव





Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

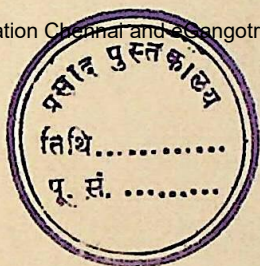
## परमाणु शक्ति

(ले०-श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव)

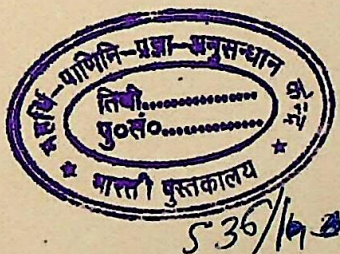
उक्त लेखक द्वारा अपने  
विषयकी एक मात्र प्रामाणिक  
पुस्तक प्रकाशित हो गयी है।  
शक्तिकी खोजमें, अणु परमाणुओं-  
की दुनिया, तथा परमाणु बम  
सरीखी अनेक समस्याओंकी  
विशद विवेचना इस पुस्तकमें  
आपको मिलेगी। परमाणु शक्तिके  
युगमें प्रवेश करती हुई दुनियाके  
भविष्यका आभास भी इस  
सचित्र पुस्तक द्वारा आप पा  
सकेंगे।

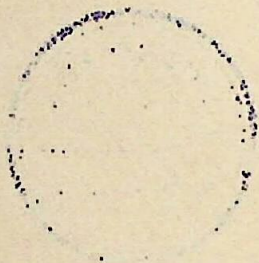
मूल्य  
२/७५  
न०पै०





२. सं. २०२  
हिन्दी २६







# विज्ञानके चमत्कार

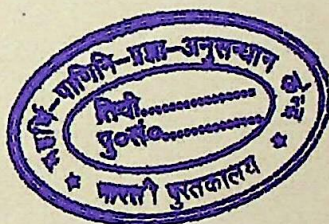


536

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# विज्ञानके चमत्कार



भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव

एम० एस-सी०

वाराणसी

ज्ञानमण्डल लिमिटेड

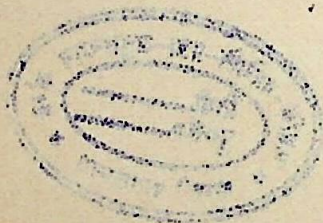
## मूल्य तीन रुपये

प्रथम संस्करण, संवत् १९९६

द्वितीय संस्करण, संवत् २००३

तृतीय संस्करण, संवत् २०१०

चतुर्थ संस्करण, संवत् २०१४



प्रकाशक—ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी (बनारस)

मुद्रक—ओम् प्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी ५२६७-१४





## प्रथम संस्करणकी भूमिका

साप्ताहिक 'आज'में लगभग प्रति सप्ताह विज्ञानसम्बन्धी मेरे लेख प्रकाशित होते रहे हैं। यह पुस्तक उन्हीं लेखोंमेंसे कुछका संग्रह है। ये लेख जनसाधारणके लिए लिखे गये थे अतः इनमें ऐसे ही शब्दोंका प्रयोग किया गया है, जिन्हें हम आप आसानीसे समझ सकते हैं। विज्ञानकी अपनी एक अलग भाषा-शैली हुआ करती है—इस शैलीका अवलम्ब लेकर टेक्निकल शब्द, सूत्र और फार्मूलोंकी मददसे वैज्ञानिक गूढ़ बातोंको भी थोड़ेमें व्यक्त कर लेता है। किन्तु उन्हीं बातोंको आम बोल-चालकी भाषामें समझाते समय अनेक अड़चनों आ खड़ी होती हैं। इन अड़चनोंको दूर करनेमें मैं कहाँतक सफल हो सका हूँ, इसका निर्णय स्वयं पाठक ही करेंगे। इन लेखोंको पुस्तकके योग्य बनानेके लिए थोड़ी-बहुत काट-छाँट भी करनी पड़ी है, किन्तु ऐसा करनेमें उनकी रूपरेखामें विशेष परिवर्तन नहीं होने पाया है।

पुस्तकके रूपमें इन निबन्धोंको जनताके सामने रखनेका एकमात्र उद्देश्य है जनताके अन्दर विज्ञानके प्रति अभिरुचि उत्पन्न करना, क्योंकि विज्ञानके इस युगमें जीवनके हर एक क्षेत्रमें हम विज्ञानके आविष्कारोंसे फायदा उठाते हैं। एक जमाना था जब वैज्ञानिक अपनी विज्ञानशालामें बैठा हुआ विज्ञानकी जटिल गुत्थियोंको सुलझानेकी कोशिशमें दिन-रात संलग्न रहा करता था। साधारण जनताको उसके अनुसन्धानोंमें विशेष दिलचस्पी न थी। वैज्ञानिकको लोग एक बाजीगर समझा करते थे। विज्ञान उन दिनों मुट्ठीभर वैज्ञानिकोंकी निजकी चीज समझा जाता था। हमारे प्रति दिनके जीवन और विज्ञानके बीच किसी प्रकारका सम्बन्ध नजर नहीं आता था।

किन्तु समयकी प्रगतिके साथ विज्ञानने भी प्रयोगशालाकी ऊँची

दीवारोंको लपेटकर जनसाधारणकी दुनियामें प्रवेश करनेका साहस किया, यहाँतक कि आजका सभ्य संसार विज्ञानके प्रभावसे एकदम ओतप्रोत हो रहा है। जिधर नजर डालिये उधर आप अपनेको वैज्ञानिक आविष्कारोंसे घिरा हुआ पायेंगे।

विज्ञानके नूतनतम आविष्कारोंने मनुष्यके हाथोंमें अपार शक्ति सौंप दी है। दूरी और समय दोनोंपर उसने विजय हासिल कर ली है। स्थलपर चलनेके लिए सैकड़ों मील प्रति घण्टेकी गतिसे भागनेवाली मोटर-गाड़ियाँ उसने बना ली हैं। आकाशमें भी मीलोंकी ऊँचाईपर वह द्रुतगामी वायुयानोंमें बैठकर भ्रमण करता है। पानीकी सतहपर भी वह मोटर व बोटकी मददसे थिरकता फिरता है। जल, स्थल और वायुपर विजय प्राप्त कर लेनेके उपरान्त उसने पानीके अन्दर डुबकी लगाकर एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेके लिए सबमैरीनका भी निर्माण कर लिया है।

अपने बहुमुखी आविष्कारों द्वारा वैज्ञानिकने कर्मेन्द्रियोंकी शक्ति तो बढ़ायी ही है, साथ ही उसने मनुष्यके ज्ञान-चक्षुओंको भी खोल दिया है। आजका मानव पहले-जैसा कूपमण्डूक न रहा। तीन सौ वर्ष पहले गैलीलियोने दूरबीनका ईजाद करके बताया था कि हमारी पृथ्वी अखिल ब्रह्माण्डका केन्द्र नहीं है, बल्कि यह सौर परिवारका एक अदना-सा सदस्य है, और अब हम यह भी जानने लग गये हैं कि इस बृहत्तर विश्वमें हमारे सौर परिवारकी कोई विशेष हस्ती नहीं है। आकाशके ये जगमगाते हीरे वास्तवमें आगके विशालकाय दहकते हुए गोले हैं, जिनमेंसे कई-एक तो आकारमें इतने बड़े हैं कि हमारे सूर्य-जैसे हजारों सूर्य उनमेंसे निकल आयें !

जगत्की सूक्ष्मताका भी कहीं अन्त नहीं है। अणुवाक्ष्ण यन्त्रसे देखनेपर पानीकी एक बूँदके अन्दर एक अजीब-सी दुनिया नजर आती है, जिसमें सैकड़ों हजारों कीटाणु तुमुल जीवन-संग्राममें संलग्न हैं। नन्हें-नन्हें जरोंके अन्दर भी एक छोटे पैमानेपर सौर जगत् मौजूद है।





विद्युत्कण (एलेक्ट्रान) धनाणुकेंद्रकी परिक्रमा इससे स्पष्ट हो जाता है।  
लगाया करते हैं।

विश्वके इस चमत्कारपूर्ण रहस्यको देखकर आजका मानव कुछ चकित, हैरान-सा है। उसके मनमें एक जिज्ञासा-सी उठती है कि करोड़ों मीलकी दूरीपर यह टिमटिमाते हुए तारे किस शक्तिपर वहाँ टिके हुए हैं? उनमें प्रकाश कहाँसे आता है? विज्ञानशालामें बैठे-बैठे किस प्रकार वैज्ञानिकने पता लगा लिया कि सूर्य हमसे साढ़े नौ करोड़ मीलकी दूरीपर है? वैज्ञानिकने कैसे मात्स्र किया कि अमुक नक्षत्रमें आक्सीजन मौजूद है? या अमुक नक्षत्र पृथ्वीसे दूर भागा जा रहा है? जिज्ञासु व्यक्ति मन-ही-मन पूछ बैठता है कि बटन दबाते ही रेडियोसेटमें गानेकी आवाज कहाँसे आ जाती है? टेलीविजन क्या चीज है? पशु-पक्षियोंमें क्या सोचनेकी शक्ति मौजूद है? पौधे क्या मांस-भक्षी भी हो सकते हैं।

इस पुस्तकमें इसी ढङ्गके अनेक प्रश्नोंपर प्रकाश डालनेकी कोशिश की गयी है। विज्ञान सम्बन्धी जानकारी हासिल करना वांछनीय तो है ही, किन्तु आत्मसंस्कृतिके लिए उससे अधिक जरूरी है इस अखिल ब्रह्माण्डके प्रति अपने अन्दर एक कुतूहलपूर्ण दृष्टिकोण उत्पन्न करना, और यदि यह पुस्तक आपके अन्दर कुतूहल-जन्य जिज्ञासा तथा 'क्यों' और 'कैसे' की भावना थोड़ी-बहुत भी उत्पन्न कर सकी तो मैं अपना परिश्रम सार्थक समझूँगा।

भौतिक विभाग,  
किशोरीरमण कालेज  
मथुरा  
१५-१२-४०

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव





## द्वितीय संस्करणकी भूमिका

सन्तोषकी बात है कि इस पुस्तकके प्रथम संस्करणको हिन्दी-संसार-ने चावसे अपनाया । द्वितीय संस्करणमें अनेक नवीन अनुसन्धान तथा आविष्कारोंका समावेश किया गया है जो गत महायुद्धकी आवश्यकताओं द्वारा प्रेरित हुए हैं । चित्रोंकी संख्या भी बढ़ाकर पुस्तकको अधिक रोचक तथा बोधगम्य बनानेका प्रयत्न किया गया है ।

जनसाधारणकी विज्ञान-सम्बन्धी जिज्ञासाकी पूर्तिके उद्देश्यसे ही यह पुस्तक लिखी गयी है । प्रत्येक विचारशील नागरिककी बुनियादी शिक्षामें प्राकृतिक विज्ञानको महत्त्वका स्थान मिलना चाहिये, तभी वह समझ सकता है कि आधुनिक समाजकी रूपरेखाके निर्माणमें विज्ञानका कितना बड़ा हाथ है । इस युगमें प्रत्येक जागरूक नागरिकके लिए विज्ञानके नूतनतम अनुसन्धानोंकी जानकारी हासिल करना इसलिए भी जरूरी है कि वह विज्ञानको मानवहितके लिए रचनात्मक कार्योंमें प्रयुक्त करानेमें सहायता दे सके । वरना कुछ मुट्ठीभर महत्वाकांक्षी (?) व्यक्तियोंके हाथमें पड़कर विज्ञान मानवसमाजके नाशका अव्यर्थ साधन बन सकता है । परमाणुबमका निर्माण इसी सम्भावनाका एक ज्वलन्त उदाहरण है ।

प्रस्तुत पुस्तकमें स्कूल तथा कालेजके विद्यार्थियोंके लिए भी मनन-योग्य सामग्री यथेष्ट मात्रामें मिलेगी । पाठ्य-पुस्तकोंके सीमित दायरेसे बाहरके बृहत्तर संसारकी झलक इस पुस्तक द्वारा वे अवश्य पा सकेंगे ।

नयी दिल्ली,  
फरवरी, १९४७ }

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव



## तृतीय संस्करणकी भूमिका

इस पुस्तकके तृतीय संस्करणके प्रकाशित करनेके अवसरपर हमें इस बातकी प्रसन्नता है कि जनतामें विज्ञानके प्रति अभिरुचि बढ़ रही है। जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें हम आधुनिक विज्ञानकी एक गहरी छाप देखते हैं। अतः यह वांछनीय है कि विज्ञानके लोकशिक्षणको समुचित प्रोत्साहन मिले। लेखकको सन्तोष है कि यह पुस्तक इस उद्देश्यकी पूर्तिमें सहायक बन सकी है।

उत्तरप्रदेशके अतिरिक्त अन्य प्रान्तोंके लोगोंने भी इस पुस्तकको विशेषरूपसे पसन्द किया है। स्कूल-कक्षाओंसे लेकर यूनिवर्सिटी स्तर-तकके लिए तैयार की गयी पाठ्यपुस्तकोंमें 'विज्ञानके चमत्कार'से ग्रहण की गयी सामग्री संकलित की गयी है। कतिपय उत्साही अध्यापक अपने विद्यार्थियोंकी ज्ञानवृद्धिके लिए इस पुस्तकको नियमित रूपसे व्यवहारमें ला रहे हैं।

विज्ञानके नूतनतम अन्वेषणोंके आधारपर अनेक संशोधनोंका समावेश भी इस संस्करणमें किया गया है ताकि यह पुस्तक हर प्रकारसे 'अप-टू-डेट' बन सके।

भौतिक-विज्ञान विभाग,  
धर्मसमाज कालेज,  
अलीगढ़  
१५-८-५३

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव





## चतुर्थ संस्करणकी भूमिका

‘विज्ञानके चमत्कार’का चतुर्थ संस्करण पाठकोंके सम्मुख उपस्थित है। परमाणु शक्ति तथा स्पूतनिकके इस युगमें यह वाञ्छनीय है कि देशका प्रत्येक नागरिक विज्ञानकी गतिविधिका परिचय हासिल करे। इस संशोधित संस्करणमें आधुनिक विज्ञानके नवीनतम अनुसन्धानोंका समावेश किया गया है। अतः हमें विश्वास है कि इस पुस्तक द्वारा पाठक विज्ञान-जगत्की सफलताओंका मूल्याङ्कन करनेमें समर्थ हो सकेंगे।

धर्मसमाज कालेज }  
अलीगढ़  
फरवरी १९५८ }

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव



## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१ विज्ञानके कँटीले पथपर	१
२ चन्द्रमा—हमारा निकटतम पड़ोसी	५
३ उल्कापात	१२
४ पुच्छल तारे क्या हैं ?	१८
५ आसमानसे बिजली क्यों गिरती है ?	२६
६ दुनियाकी सबसे बड़ी दूरबीन	३३
७ फोटोग्राफीके चमत्कार	४०
८ रेडियो समाचारपत्र	४६
९ टेलीविजन या दूरदर्शन	५१
१० रेडियम	६१
११ विज्ञानका नोबेल पुरस्कार	६८
१२ परमाणु शक्तिका भविष्य	७६
१३ अतुल जलराशिके नीचे	८२
१४ सबमैरीन	८८
१५ भूकम्प	९८
१६ वैज्ञानिक पृथ्वीके भीतर कैसे देखता है ?	१०४
१७ भविष्यके वायुयान	१०८
१८ पैराशूट	११७
१९ जानवरोंमें सोचनेकी शक्ति	१२३
२० साँपका जहर कैसे दुहते हैं ?	१३१
२१ अपराधियोंके पकड़नेमें विज्ञानकी सहायता	१३६
२२ मनुष्यके शरीरकी विचित्रताएँ	१४५



२३ भविष्यके मनुष्य	...	१४९
२४ मस्तिष्कके अन्दर विद्युत्-तरंगें	...	१५४
२५ बुद्धिकी नाप-जोख	...	१५८
२६ जीवधारियोंके आकारकी उपयुक्तता	...	१६८
२७ प्रकृतिकी भयंकर भूलें	...	१७३
२८ शारीरिक पीड़ाकी नाप-जोख	...	१७८
२९ विद्युत्-तरंगोंके चमत्कार	...	१८४
३० चमत्कारी चिकित्सा-विज्ञान	...	१८९
३१ रक्तदान-चिकित्सा	...	१९९
३२ पेनिसिलिन	...	२०९
३३ डी० डी० टी०	...	२१४
३४ वनस्पति संसार	...	२१८
३५ कृषिमें नवीन युगका आविर्भाव	...	२२३
३६ मांसाहारी पौधे	...	२२८
३७ विटैमिन क्या है ?	...	२३३
३८ दूध और लकड़ीके बने वस्त्र	...	२४१
३९ काँच—एक अद्भुत पदार्थ	...	२४६
४० गोल सूराखमें चौकोर खूँटा	...	२५४
४१ विज्ञानको दोषी मत ठहराइये	...	२६०
४२ अन्तरिक्षमें प्रवेशका साधन—स्पूतनिक	...	२६५

## चित्र-सूची

चित्र	पृष्ठ
१ चन्द्रमाके धरातलपर ऊँचे-ऊँचे पर्वत ...	९
२ चन्द्रलोककी यात्राका स्वप्न ...	१०
३ अरिजोना प्रान्तकी वृहत्काय उल्का ...	१६
४ विल्सन वेधशालाकी १०० इंच व्यासवाली प्रसिद्ध दूरबीन	३६
५ दिनके प्रकाशमें और अल्ट्रावायलेट रश्मियोंके प्रकाशमें ली गयी फोटो ...	४३
६ अँगुलियोंका एक्स-रेके द्वारा लिया गया चित्र ...	४४
७ पट्टेपर बड़े साइजका टेलीविजन चित्र ...	५५
८ टेलीविजनका 'एमिट्रान' कैमरा ...	५८
९ मैडम क्यूरी ...	६२
१० परमाणु विभंजन यन्त्र साइक्लोट्रोन ...	७५
११ प्रो० चैडविक ...	७८
१२ लार्ड रदरफोर्ड ...	७८
१३ डा० बीबका पीपेके भीतर प्रवेश ...	८५
१४ एटनाका प्रसिद्ध ज्वालामुखी ...	१०४
१५ ब्रिटिश स्पिटफायर वायुयान ...	१११
१६ ब्रिटेनका सर्वप्रथम जेट वायुयान ...	११३
१७ अँगूठेके निशानकी फोटो ...	१४०
१८ डा० आइन्सटाइन ...	१६४
१९ चेहरा सुडौल बनाया जा रहा है ...	१९४
२० अर्द्ध पारदर्शक झिल्ली ...	२०८
२१ पेनिसिलिनके आविष्कर्ता प्रो० एलेक्जेंडर फ्लेमिंग ...	२११



२२	पेनिसिलिनका नमूना	...	...	२१२
२३	काँचकी रकावियाँ	...	...	२४७
२४	फूँककर काँचकी वस्तुएँ बनानेवाला अमेरिकाका कुशल कारीगर	...	...	२५०
२५	गिर्रियोंपर लिपटे हुए काँचके धागे	...	...	२५१
२६	काँचके धागेसे बनी डोरीके सहारे झूला	...	...	२५३
२७	राकेटके उड़नेका सिद्धान्त	...	...	२६७
२८	तीन सोपानका राकेट	...	...	२७०
२९	स्पूतनिक नं० २ में जानेवाला कुत्ता लाइका अपने सुरक्षाकक्षमें	...	...	२७४
३०	स्पूतनिक नं० २ का अग्रभाग	...	...	२७५
३१	स्पूतनिक नं० २ के अग्रभागमें रखा गया सौर-किरणोंकी शक्ति नापनेवाला यन्त्र	...	...	२७६
३२	स्पूतनिक नं० २ में रखा गया कास्मिक किरणकी शक्ति नापनेवाला यन्त्र	...	...	२७७



# विज्ञानके चमत्कार

## विज्ञानके कँटीले पथपर

स्वभावसे ही मनुष्य जिज्ञासु प्राणी है। उसकी जिज्ञासा भी वृक्ष होनेवाली वस्तु नहीं है। नयी बातोंके जाननेके लिए वह सदैव उत्सुक रहता है। एक समस्याके हल होनेके बाद वह दूसरीकी खोजमें आगे बढ़ता है। इसी जिज्ञासाके वश होकर अनेक साहसी वीरोंने समय-समयपर अपनी जानकी भी बाजी लगायी है। इतिहासके पन्ने उलटने-पर आप देखेंगे कि प्रत्येक आविष्कार और शोधके साथ कष्ट-सहन, त्याग और आत्मबलिदानकी अमर गाथा छिपी हुई है, और आज भी विज्ञानके इस कँटीले पथपर सहस्रों नर-नारी निर्भयतापूर्वक अग्रसर हो रहे हैं।

ओषधि-विज्ञानकी प्रगतिमें तो एक-एक पगपर वैज्ञानिकोंको अपने प्राणोंकी आहुति देनी पड़ी है। जरा सोचिये, स्वयं अपने ही देशमें साधारण फोड़ेमें नश्वर देनेके पहले रोगीको चार-पाँच जबरदस्त व्यक्ति पकड़ते थे। जराह महोदय अपने पुराने ढंगके औजारोंसे धीरे-धीरे नश्वर लगाते, और इस बीच बेचारा निस्सहाय रोगी असीम वेदनाके कारण निरन्तर चिल्लाता रहता। कितना दर्दनाक दृश्य था ! किन्तु अब—आपरेशन रूममें आप शौकसे लेट गये, डाक्टरने क्लोरोफार्म सुँघाया, आप १, २, ३ गिनते-गिनते थोड़ी देरके लिए वास्तविक जगत्से कूच कर गये। डाक्टरने घण्टे आध घण्टेक चीरफाड़ की, पेटकी अँतर्द्विषाँतक बाहर निकालीं और उन्हें ज्योंकी त्यों अपने स्थानपर पुनः बैठा दिया पर आपने 'सी' तक नहीं की। इस बेहोशीकी दवाके आविष्कारसे मानवसमाजका

जितना कल्याण हुआ है, कदाचित् संसारके सर्वश्रेष्ठ दार्शनिकोंकी कृतियों द्वारा भी उतना कल्याण नहीं हो सका है ।

लेकिन आप जानते हैं कि इस दवाके आविष्कारके लिए सैन-चेस्टरके प्रतिष्ठित डाक्टर सिडनी रासन विलसनको क्या मूल्य देना पड़ा ? उनके चेहरेपर गैसमास्क लगा हुआ था, उनका शरीर मशीन-पर झुका हुआ था जिसमें बेहोश करनेवाली गैसोंके सम्बन्धमें वे प्रयोग किया करते थे—इसी अवस्थामें वेचारे एक दिन प्रयोगशालामें मरे पाये गये !

नयी-नयी बीमारियोंके बारेमें ठीक-ठीक निदान करना भी जोखिमसे परे नहीं है । अमेरिकामें पीले बुखार (येलो फीवर) से लोग बेहद डरते हैं । डाक्टरोंमें मतभेद था कि यह रोग एक विशेष प्रकारके मच्छरोंके काटनेसे होता है या नहीं । डाक्टर जेसी लेजीरका कहना था कि यह रोग मच्छरके काटनेसे ही होता है, लेकिन और लोग यह बात माननेको तैयार न थे । डाक्टर महोदयने सर्वसाधारणके सामने अपनेको इन मच्छरोंसे कटाया । फलस्वरूप पीले बुखारसे वे पीड़ित हुए । इस प्रकार उन्होंने विज्ञानकी बलि-वेदीपर अपने प्राणोंकी आहुति चढ़ा दी ।

पागल कुत्तेके विपका इलाज कुछ दिनों पूर्वतक मालूम नहीं था । लूई पाश्चर नामक एक फ्रेंच डाक्टरने इस समस्याको हल करनेका बीड़ा उठाया । उसने पागल जानवरोंके खूनके कीटाणुओंका इंजेक्शन देकर अनेक जानवरोंकी, जिन्हें पागल कुत्तोंने काट खाया था, प्राणरक्षा की । किन्तु कोई आदमी डाक्टर लूई पाश्चरकी इस उक्तिमें विश्वास ही नहीं करता था कि इस प्रकारके इंजेक्शनसे आदमीकी भी रक्षा हो सकती है । पागल कुत्तेके काटनेपर लोग असीम व्यथा सहते हुए प्राण गँवा देते, किन्तु इतनी हिम्मत नहीं होती कि डाक्टर लूई पाश्चरसे इंजेक्शन ले लें । अपनी ओपधिकी सच्चाई साबित करनेके लिए आखिर डाक्टर लूई पाश्चरने निश्चय किया कि स्वयं अपनेको वे पागल कुत्तेसे कटायेंगे और फिर अपने ऊपर इस इंजेक्शनका प्रयोग करेंगे । सौभाग्यवश



उसी दिन उन्हें एक ऐसा लड़का मिल गया जिसे प्रागल कुत्तेका विष इतना अधिक व्याप गया था कि लोगोंने उसके वचनेकी आशा एकदम त्याग दी थी। डाक्टर लुईने उस लड़केके ऊपर अपने नये इंजेक्शनका प्रयोग किया और इस प्रकार उनकी दवाका गुण संसारके सामने प्रकट हो सका। वह लड़का थोड़े ही दिनोंमें पूर्णतया स्वस्थ हो गया।

पदार्थ-विज्ञानमें आये दिन विपैली चीजोंसे काम पड़ता है। आरम्भके दिनोंमें जब लोगोंको ऐसे विपैले पदार्थोंकी जानकारी बहुत कम थी, अनेक वैज्ञानिक कालके सुखमें पड़ गये। अभी कुछ ही वर्ष हुए, कलकत्तेके श्री प्रभातकुमार मित्रने विज्ञानके लिए अपने प्राणोंकी बलि देकर संसारके सामने यह बात प्रमाणित कर दी है कि भारतीय युवक भी विज्ञानके लिए हँसते-हँसते प्राण देनेकी क्षमता रखते हैं। पोर्टेशियम साइनाइड एक भयंकर विष होता है, किन्तु अभीतक किसीको यह नहीं मालूम था कि उसका स्वाद कैसा होता है। अपने पत्रमें पोर्टेशियम साइनाइड खानेके पूर्व इस वीर भारतीय विद्यार्थीने लिखा था—

‘रसायन-विज्ञानमें पोर्टेशियम साइनाइडका स्वाद अबतक अनिश्चित है। अपनी वैज्ञानिक मनोवृत्तिसे प्रेरित होकर मैं वैज्ञानिकोंको उसके स्वादका निश्चय करनेमें मदद देना चाहता हूँ।’

मरनेके पूर्व संकेत द्वारा श्री प्रभातकुमारने बतलाया था कि उसका स्वाद एलकलाइन (कसैला) होता है।

औषधि-विज्ञानके अतिरिक्त अन्य क्षेत्रोंमें भी अपूर्व साहस और बलिदानके दृष्टान्त आपको मिलते हैं। आये दिन वायुयान सम्बन्धी दुर्घटनाएँ सुननेमें आती हैं। तीव्र गतिके रेकार्ड मात करनेमें या आकाशमें ऊँचे चढ़नेमें प्रायः दो-चार जाने जाती हैं। किन्तु इससे लोग हतोत्साह नहीं होते। वे जानते हैं कि सभ्यताको आगे बढ़ानेके लिए साहस और त्यागकी सबसे अधिक आवश्यकता पड़ती है। इन्हीं साहसी वीरोंकी

बदौलत आज दिन वायुयान इस योग्य बन सके हैं कि वे नियमित रूपसे डाक तथा यात्रीको एक स्थानसे दूसरे स्थानको पहुँचानेका काम करते हैं।

ध्रुव-अनुसन्धानके सिलसिलेमें भी वीसियों जानें गयी हैं। कैप्टेन स्कॉटकी डायरी आप उठाकर देखें, आप सिहर उठेंगे कि किस प्रकार स्कॉट तथा उनके साथियोंने सर्दीसे ठिठुरकर तिल-तिलकर प्राण गँवाये हैं। किसीका हाथ ठण्डकसे सुन्न होकर कटकर नीचे गिर पड़ता है—तो किसीकी नाक टूटकर जमीनपर आ गिरती है—गजबकी हिम्मत ! जान-बूझकर ज्ञानके अनुसन्धानमें मृत्युका आवाहन करनेका इससे अधिक उज्ज्वल उदाहरण मानव-समाजके इतिहासमें अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। ध्रुव सम्बन्धी अनेक गलत धारणाएँ अब दूर हो गयी हैं। रूसकी साम्यवादी सरकारकी ओरसे तो उत्तर ध्रुवमें अब हवाई अड्डे बन रहे हैं। वायुयानोंका उत्तरी ध्रुवके ऊपरसे होकर उड़ा करना शुरू हो गया है।

हिमालय पर्वतके शिखरपर पहुँचनेके प्रयत्नमें भी साहसी व्यक्तियोंने अपने प्राणोंकी आहुति चढ़ायी है। इस सिलसिलेमें जर्मनीके पर्वतारोहियोंका नाम विशेष उल्लेखनीय है। जत्थेपर जत्थे भारतमें हिमालयकी उक्त श्रेणियोंपर विजय प्राप्त करनेके लिए आये और सभ्य संसारके ऊपर अपने साहस एवं जीवनकी एक गहरी छाप लगा गये। मई सन् १९५३ में हिलारी, न्यूजीलैण्ड और भारतके तेनसिंहको इस अभियानमें सफलता प्राप्त हुई।

एक्स-रेका इतिहास भी रोमाञ्चकारी घटनाओंसे भरा है। जिन दिनों एक्स-किरणोंका सर्वप्रथम पता लगा था, लोग इसकी तीव्र भेदन-शक्तिसे परिचित न थे। डाक्टर जार्ज हैरेट एक्स-रे सम्बन्धी प्रयोग कर रहे थे, अनजानमें ये किरणें उनकी एक उँगलीपर पड़ रही थीं। उस समय तो उन्हें किसी प्रकारका कष्ट नहीं मालूम हुआ, किन्तु थोड़ी ही देर बाद उन्होंने देखा कि उनकी उँगली जल गयी है और



उनके स्नायु सड़ने लगे हैं। निदान उन्हें अपनी उँगली कटानी पड़ी। इतनेपर भी वे एक्स-रे और रेडियम सम्बन्धी प्रयोगोंमें लगे रहे। कुछ दिनों उपरान्त उन्हें अपनी एक बाँह भी कटानी पड़ी। किन्तु उन्होंने अनुसन्धान कार्य जारी रखा, उनका उत्साह बढ़ता ही गया। उनके अनुसन्धानसे चिकित्सा-शास्त्रका वेहद उपकार हुआ। आजकल प्रायः सभी अच्छे अस्पतालोंमें एक्स-रे और रेडियमके यन्त्र आपको मिलेंगे। तरह-तरहके असाध्य चर्मरोगोंमें और कैंसर सदृश भयानक बीमारियोंके लिए ये किरणें रामबाण साबित हुई हैं।

सच्ची बात तो यह है कि विज्ञानकी उन्नति ऐसे ही साहसी व्यक्तियोंके आत्मबलिदान द्वारा हुई है। अनेक कष्टोंका सामना करते रहनेपर भी कभी इन लोगोंके चेहरेपर नैराश्यका भाव नहीं आया। ध्येय प्राप्त करनेके लिए हम जो सतत उद्योग करते हैं उसीमें तो जीवन है !

## चन्द्रमा—हमारा निकटतम पड़ोसी

कुछ वर्ष पहलेतक चन्द्रमाके सम्बन्धमें लोगोंकी जानकारी अधिक न थी, किन्तु अब उसके सम्बन्धकी अनेक गुत्थियाँ सुलझ चुकी हैं। विज्ञानके नूतनतम यन्त्रोंकी सहायतासे चन्द्रमाके बारेमें हमें बहुत-सी नयी बातें मालूम हो गयी हैं।

लगभग ३०० वर्ष पूर्व सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक गैलीलियोने जब संसारकी सर्वप्रथम दूरबीनसे चन्द्रमाका निरीक्षण किया तो लोगोंको पहली बार पता चला कि चन्द्रमा भी पृथ्वीकी भाँति ही एक ऊबड़-खाबड़, खोह-कन्दरासे भरी हुई पर्वतोंवाली दुनिया है। इसके पहले चन्द्रमाका निरीक्षण करना किसीके लिए सम्भव भी न था। क्योंकि तबतक दूरबीनका आविष्कार नहीं हो पाया था। दूरबीनको वैज्ञानिककी आँख

कहना अनुचित न होगा। ज्योतिष-विद्याके लिए दूरबीनसे बढ़कर उप-योगी और कोई दूसरा यंत्र नहीं हो सकता। इस अद्भुत यंत्रकी ईजादका श्रेय गैलीलियोको प्राप्त है।

जिस समय गैलीलियोने अपनी दूरबीन पहले पहल तैयार की और उसे इटलीकी जलसेनाके अधिकारियोंको दिखाया, उस वक्तकी घटनाका जिक्र गैलीलियोने स्वयं अपने ही शब्दोंमें किया है—‘कई एक कैप्टेन और दूसरे अफसर, जो प्रौढ़ावस्थामें पहुँच चुके थे, मेरी दूरबीनको लेकर मीनारपर चढ़ गये और समुद्रमें आगन्तुक जहाजोंको देखने लगे। ये जहाज बन्दरगाहपर पहुँचनेके दो घण्टे पहलेसे ही दिखाई देने लग गये थे, क्योंकि मेरी दूरबीन इतनी शक्तिशाली थी कि ५० मील दूरकी चीज इसके द्वारा देखनेपर केवल पाँच मीलकी दूरीपर रखी हुई मालूम पड़ती थी।’

गैलीलियोके जमानेके बादसे अबतक दूरबीनोंके निर्माणमें आश्चर्य-जनक उन्नति हो चुकी है। अतः ज्योतिष-विज्ञानने इस दर्मियान लम्बी मंजिल तय की है। वर्तमान समयकी सबसे बड़ी दूरबीन अमेरिकाकी माउण्ट पालोमर वेधशालामें है। गैलीलियोकी दूरबीनसे यह कई लाख-गुनी अधिक शक्तिशाली है। इस दूरबीनसे देखनेपर चन्द्रमाका धरातल विलकुल स्पष्ट दीखता है।

चन्द्रमा इस गगन-मण्डलमें हमारा निकटतम पड़ोसी है—फिर भी यह पृथ्वीसे २ लाख ४० हजार मीलकी दूरीपर है। यदि हम पृथ्वीके धरातलसे चन्द्रमातक पहुँचनेके लिए रवाना हों और दिन-रात बिना विश्राम किये हुए चलना जारी रखें तो पूरे सात वर्षमें वहाँ पहुँच पायेंगे! पैदल चलनेके बजाय यदि तूफान मेलसे हम ६० मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे सफर करें तो हमें चन्द्रमातक पहुँचनेमें ६ महीने लग जायेंगे।

किन्तु चन्द्रमातक यदि हम पहुँच भी पायें तो क्या वहाँ हमारे लिए जीवित रह सकना सम्भव हो सकेगा? दूरबीनसे देखनेपर



चन्द्रमामें अनेक गड्ढे दिखाई पड़ते हैं—गैलीलियोने पहले इन गड्ढोंको समुद्र और झीलें समझा था, इसीसे उसने इनका नाम भी समुद्रकी तरह रखा—प्रशान्त सागर, इन्द्रधनुष सागर, स्वप्न सागर, इत्यादि । बादमें बढ़िया किस्मकी दूरबीनसे देखनेपर मालूम हुआ कि ये गड्ढे सूखे हैं, इनमें नाममात्रको भी पानी नहीं है ।

चन्द्रमाके वायुमण्डलमें भी पानीकी भाप नहीं है और न आकाशमें वहाँ बादल ही नजर आते हैं । बादल न रहनेके कारण सूर्यकी प्रखर किरणें अबाध रूपसे सारे दिन चन्द्रमाके धरातलपर पड़ती हैं—और चन्द्रमाका दिन भी २४ घण्टेका नहीं होता । हमारे यहाँके पूरे १५ दिन वहाँके एक दिनके बराबर होते हैं ! अतः १५ दिनके लम्बे समयकी निरन्तर धूपमें पृथ्वीका मनुष्य तो वहाँ भुन उठेगा । धूपमें पानी रखनेपर खोलने लगेगा । फिर जब १५ दिनों बाद रात आती है, तब चन्द्रमाकी उष्णताको रोक रखनेके लिए बादलोंके न रहनेसे धरातल एकदम ठण्डा पड़ जाता है—बर्फ गलनेके तापमानसे भी २०० डिग्री नीचे । इस विकट जाड़ेमें मनुष्य जीवित नहीं रह सकता ।

चन्द्रमाकी आकर्षण-शक्ति भी पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिकी अपेक्षा बहुत कम है । जब आप ऊपर आसमानमें ढेला फेंकते हैं तो वह जमीनपर आ गिरता है । वायुयानका इंजिन जब बन्द हो जाता है तो वायुयान भी जमीनपर ही आ गिरता है । इन सब घटनाओंका मूल कारण पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति ही है । यदि आज पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति नष्ट हो जाय तो हर तरफ विचित्र बातें नजर आयेंगी । आपने ढेला जो ऊपर फेंका तो वह कभी नीचे लौटकर आयेगा ही नहीं । ऊँची कूदमें जब आपने ऊपरको छल्लाँ भरी तो आप ऊपर ही हवामें टँगे रह जायँगे ।

चन्द्रमाके धरातलपर आकर्षण-शक्तिके अपेक्षाकृत कम होनेकी वजहसे ऐसा जान पड़ेगा कि मानो हमारा शरीर बहुत हल्का है । साधारण खिलाड़ी भी वहाँ ३०, ३५ फुट ऊँचा आसानीसे कूद सकेगा ।

Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri  
कुलियाँके लिए वहाँ बड़ी आसानी होगी—दो बक्सकी जगह बारह बक्स वे आसानीसे अपने सिरपर ले जा सकेंगे। सर्कसमें भी अजीब तमाशा नजर आयगा। विशालकाय हाथी कुत्ते के पिल्लेली तरह कूद-फाँदके करतब दिखा सकेंगे।

लेकिन चन्द्रमापर बसनेवालोंके सामने सबसे भारी कठिनाई यह आयेगी कि वहाँ हवा एकदम नहीं है, जिससे उनका वहाँ कुछ क्षणोंके लिए भी जीवित रहना असम्भव हो जायगा।

इन काल्पनिक बातोंको छोड़कर हम जरा चन्द्रमाके धरातलका ध्यानपूर्वक निरीक्षण करेंगे। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि चन्द्रमाके धरातलके कुछ भागोंके बारेमें वैज्ञानिकोंको स्वयं अपनी पृथ्वीके दक्षिण ध्रुव प्रान्तोंकी अपेक्षा कहीं अधिक जानकारी हासिल है। किसी भी उच्चकोटिकी वेधशालामें चले जाइये, वहाँ चन्द्रमाके कुछ हिस्सोंका सही नकशा बिलकुल ठीक पैमानेपर आपको देखनेको मिल सकता है। किन्तु दक्षिण ध्रुव महाद्वीपका एकदम सही नकशा आपको कहींपर भी नहीं मिलेगा।

बढ़िया किस्मकी किसी भी दूरबीनसे देखनेपर चन्द्रमाके धरातलपर बड़े-बड़े गड्ढे और लम्बे-लम्बे मैदानोंके अतिरिक्त ऊँचे-ऊँचे पर्वत और ज्वालामुखी पर्वतके क्रेटर भी दिखाई देते हैं। ये क्रेटर छोटे-बड़े हर आकारके मिलते हैं—कुछकी चौड़ाई एक मील है तो कुछ सौ-डेढ़-सौ मीलसे भी अधिक चौड़े हैं।

ज्योतिषियोंका खयाल है कि चन्द्रमाके धरातलपर ज्वालामुखीके उद्गारके कारण ये क्रेटर उत्पन्न हो गये हैं। इस मतकी पुष्टि इस बातसे होती है कि क्रेटरोंके अन्दर ज्वालामुखीकी राख और लावा अकसर दूरबीनसे दिखाई पड़ता है।

कुछ ज्योतिषियोंका दावा है कि ये क्रेटर ज्वालामुखीके उद्गारके कारण उत्पन्न नहीं हुए हैं, बल्कि बाह्य जगत्से उल्कापिण्ड चन्द्रमाके धरातलपर गिरे हैं और उनके आघातसे धँसकर ये गड्ढे बन गये हैं।

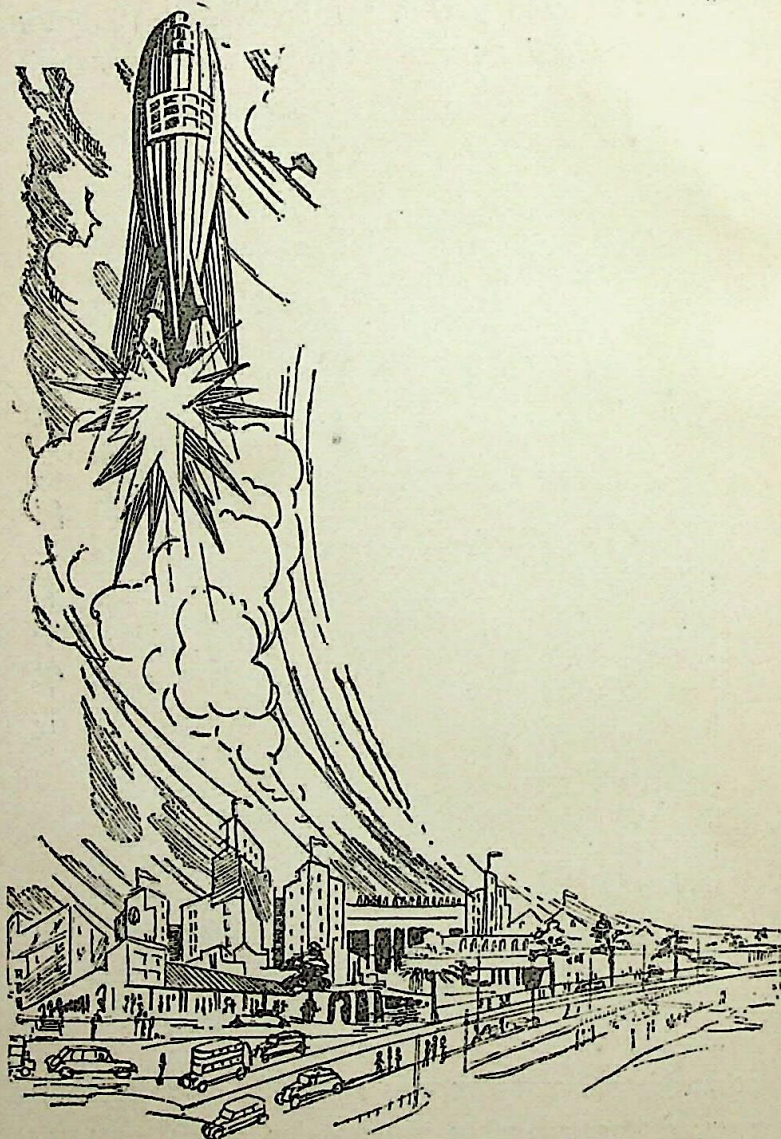


किन्तु इस मतमें अनेक त्रुटियाँ हैं, और विज्ञानजगत् इस मतको उस वक्तक स्वीकार नहीं कर सकता जबतक इस मतके प्रवर्तक अपने



चन्द्रमाके धरातलपर लैचे-लैचे पर्वत

आलोचकोंके प्रश्नोंका समुचित उत्तर नहीं दे लेते। कुछ क्रेटर प्रायः आसपासके धरातलकी अपेक्षा तीन-चार मील गहरे हैं और कुछकी



चन्द्रलोककी यात्राका स्वप्न



सतह आसपासके धरातलसे ऊँची है। यह एक दिलचस्प बात है कि चन्द्रमाके पहाड़ोंकी ऊँचाई माउण्ट एवरेस्टकी ऊँचाईकी अपेक्षा ज्यादा आसानीसे नापी जा सकती है। सूर्यकी भिन्न-भिन्न ऊँचाईके समय इन पर्वतीय चोटियोंकी छायाकी लम्बाई नाप लेते हैं और फिर साधारण गणितके सिद्धान्तोंकी मददसे मालूम कर लेते हैं कि अमुक चोटीकी ऊँचाई क्या है।

क्रैटरोंके सम्बन्धमें एक तीसरा मत यह है कि प्रारम्भिक दिनोंमें चन्द्रमा जब ढण्डा हो रहा था तो इसका धरातल सिकुड़ उठा और फलस्वरूप ये क्रैटर बन गये।

क्रैटर, पहाड़ और मैदानके अतिरिक्त चन्द्रमाके धरातलपर मीलों लम्बी दरारें नजर आती हैं—इनमें कुछ दरारोंकी लम्बाई सौ मीलसे भी ऊपर पहुँचती है। इनकी चौड़ाई भी अकसर आध मीलतक होती है। पृथ्वीकी भाँति चन्द्रमापर भी उल्कापिण्ड बराबर गिरते रहते हैं। किन्तु वायुमण्डलके घर्षणके कारण पृथ्वीपर पहुँचते-पहुँचते उनकी रफ्तार बहुत कम हो जाती है तथा वे ठण्डे भी हो जाते हैं। चन्द्रमापर ऐसी बात नहीं है। वहाँपर किसी प्रकारका वायुमण्डल तो है नहीं, अतः ये उल्कापिण्ड चन्द्रमाके धरातलपर बिना कोई रुकावट महसूस किये पूरी तेजीके साथ जा टकराते हैं, मानों निरन्तर गर्म पत्थरोंकी वहाँ झड़ी लगी हो, अतः चन्द्रमाकी सैर करनेवालोंको इस अग्निवर्षाका भी सामना करना पड़ेगा।

संसारके सबसे बड़े ज्योतिर्विद् सर जेम्स जीन्सने हिसाब लगाया है कि प्रतिदिन १० लाख उल्काएँ चन्द्रमाके धरातलपर गिरती हैं और उनकी रफ्तार बन्दूककी गोलीकी रफ्तारसे सौ गुनी ज्यादा होती है। इन वेगगामी उल्कापिण्डोंमें अत्यधिक शक्ति निहित होती है। यदि पावभरका टुकड़ा इसी रफ्तारसे किसी मकानके ऊपर फेंका जाय तो समूचे मकानकी धजियाँ उड़ जायँगी। अनुमान किया जाता है कि इस छोटेसे पत्थरमें इस तेज रफ्तारके कारण अन्य चीजोंको धक्का

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri  
 पहुँचानेकी उतनी ही शक्ति मौजूद रहती है जितनी ७४ मील प्रति घण्टा भागनेवाली मोटरकारमें रहती है ।

भला ऐसी बमबर्पाके सामने चन्द्रमाके धरातलपर कौन टिकनेकी हिम्मत कर सकता है ।

चन्द्रमाके भविष्यके बारेमें भी लोगोंने तरह-तरहकी कल्पनाएँ की हैं । वैज्ञानिक तथ्य यह है कि चन्द्रमा धीरे-धीरे पृथ्वीसे दूर हटता जा रहा है । इसका कारण यह है कि चन्द्रमाके ऊपर पृथ्वीका आकर्षण धीरे-धीरे क्षीण पड़ता जा रहा है क्योंकि पृथ्वीकी दैनिक गति धीमी होती जा रही है । कई लाख वर्षोंके उपरान्त चन्द्रमा पृथ्वीसे बहुत दूर चला जायगा और तब महीना (चन्द्रमास) ३० दिनका न होकर ४७ दिनोंका होगा ।

फिर सुदूर भविष्यमें कदाचित् चन्द्रमा इतनी दूर चला जायगा कि पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिका उसपर तनिक भी प्रभाव बाकी न रहेगा—तब चन्द्रमा पृथ्वीसे तमाम नाता तोड़कर सदाके लिए अनन्त अन्तरिक्षमें समा जायगा । पृथ्वीके निकट आकर उसकी परिक्रमा करनेकी फिक्र उसे न रहेगी । चन्द्रमा तब पृथ्वीका सपूत बेटा न कहलायेगा ।

## उल्कापात

उल्कापातको देखकर साधारण जनता अक्सर भयभीत हो जाया करती है, किन्तु वैज्ञानिक दृष्टिसे देखनेपर उल्कापातसे डरनेकी कोई वजह नहीं देख पड़ती । अवश्य ही प्राचीन कालमें अनन्त अन्तरिक्षसे आये हुए इन जलते पथरोंको देखकर लोगोंने सोचा कि इन्द्रदेव नाराज होकर हमपर अशुकी वर्षा कर रहे हैं । अरब देशके लोगोंका खयाल



था कि जब कभी शैतान जन्नत (स्वर्ग) में घुसनेकी अनधिकार चेष्टा करता है तो उसे दूर भगानेके लिए फरिश्ते उसपर जलते हुए पत्थर फेंकते हैं। निशाना चूकनेपर कभी-कभी ये ही पत्थर जमीनपर आ गिरते हैं।

६ मार्च १८५३ को पूर्वी अफ्रीकामें एक उल्का गिरी। वहाँके मूल निवासियोंने उसे स्वर्गसे उतरा हुआ देवता समझा और रेशमके कपड़ों तथा मोतियोंसे देवमूर्तिकी तरह उसका श्रृंगार करके बड़े समारोहके साथ एक मन्दिरमें उसकी स्थापना की। उन दिनों यूरोप भी इस प्रकारकी मूर्खतापूर्ण बातोंसे एकदम मुक्त न था। ७ सितम्बर १५१४ को हंगरीमें एक उल्का गिरी। हंगरी निवासियोंने इसे देवताओंका सन्देशवाहक समझा और एक विशाल मन्दिर बनवाकर उसमें उस पत्थरको रख दिया। एक मजबूत खम्भेमें एक मोटी जखीरकी मददसे उस पत्थरके टुकड़ेको बाँधा भी था, ताकि स्वर्गदेशका यह सन्देशवाहक चुपकेसे कहीं वापस न भाग जाय।

उल्कापातपर वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे विचार करनेवाला सर्वप्रथम व्यक्ति जर्मन फिलासफर कैल्डनी था। साइबेरियामें गिरी हुई अनेक उल्काओंका भलीभाँति अध्ययन करके उसने इस विषयपर एक बृहत्काय पुस्तक लिखी और इस पुस्तकमें इस बातपर जोर दिया कि ये उल्काएँ वायुमण्डलसे गिरी हैं। इसकी पुस्तकने अन्य देशोंके वैज्ञानिकोंको भी इस क्षेत्रमें अनुसन्धान करनेके लिए उत्साहित किया। १७९८ में बनारसमें गिरी हुई एक उल्का लन्दन पहुँचायी गयी। ठीक इसी ढंगका पत्थर दो साल पहले इंग्लैण्डके प्रान्त यार्कशायरमें गिरा था। अतः इन दोनोंका मिलान करनेपर कैल्डनीके ही निष्कर्षकी पुष्टि हुई।

उल्काएँ अवश्य ही लोगोंका ध्यान अपनी ओर बरबस आकर्षित करती हैं। दूर देशसे आये हुए इन पत्थरके टुकड़ोंका अध्ययन करके हम पृथ्वीसे दूर एकदम अलग भ्रमण करनेवाले आकाशपिण्डोंकी पृष्ठभूमिके बारेमें थोड़ी बहुत जानकारी हासिल कर सकते हैं। क्योंकि ये उन्हींके शरीरके नन्हें-नन्हें टुकड़े हैं। तारोंका टूटना और उल्कापात

विज्ञानकी दृष्टिमें दोनों एक ही चीजें हैं ।

प्रायः रोज ही रातको हम आसमानमें वीसों तारोंको दृष्टते हुए देखते हैं । एक कोनेसे तारा दृष्टा, कुछ दूर रोशनीकी एक लकीर खींचता हुआ गया और फिर एकदम लुप्त हो गया, किन्तु जिसे हम तारोंका दृष्टना कहते हैं, उसका वास्तवमें तारोंसे कोई सम्बन्ध ही नहीं है । पत्थर, लोहे तथा चट्टानोंके छोटे-बड़े टुकड़े करोड़ोंकी संख्यामें सूर्यकी आकर्षण-शक्तिसे खिंचकर पृथ्वीके समीप आ जाते हैं । जब कभी ये पृथ्वीके इतने निकट आ जाते हैं कि इनपर सूर्यकी आकर्षण-शक्तिकी अपेक्षा पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति अधिक हो जाती है, तो ये मामूली डेलोंकी तरह पृथ्वीकी ओर गिरते हैं । ज्यों ही ये टुकड़े वायुमण्डलमें प्रवेश करते हैं, वायुके अणुओंके घर्षणसे ये गर्म हो उठते हैं, यहाँतक कि असह्य तापके कारण ये जलने लगते हैं । कुछ दूर आते-आते कपूरकी तरह जलकर ये खत्म हो जाते हैं—पृथ्वीतक पहुँचनेकी नौबत ही नहीं आती । ऊर्ध्वाकाशमें जितनी दूरतक ये जलते नजर आते हैं, उतनी दूरतक हमें ऐसा जान पड़ता है कि कोई तारा टूटकर गिर रहा है ।

वाह्य प्रदेशका यह पत्थरका टुकड़ा प्रायः २६ मील प्रति सेकेण्डकी रफ्तारसे हमारे वायुमण्डलमें प्रवेश करता है, किन्तु स्वयं हमारी पृथ्वी भी सौर प्रदेशमें १९ मील प्रति सेकेण्डकी चालसे प्रदक्षिणा कर रही है । अतः उक्त पत्थरका टुकड़ा यदि सामनेकी ओरसे पृथ्वीकी ओर आ रहा हो, और पृथ्वी भी उसी ओर बढ़ रही हो तो उस पत्थरके टुकड़ेकी गति व्यावहारिक दृष्टिकोणसे ४५ मील उत्तरेगी, और यदि दोनों एक ही दिशामें जा रही हों तो उल्का पृथ्वीको पीछेकी ओरसे पकड़ेगी और उसकी व्यावहारिक रफ्तार केवल ७ मील प्रति सेकेण्ड रह जायगी । वायुमण्डलमें प्रवेश करते ही पत्थरके इन टुकड़ोंकी रफ्तार वायुकणोंके घर्षणके कारण कम हो जाती है ।

वायुमण्डलमें प्रायः ५०-६० मीलतक प्रज्ज्वलित हालतमें ये टुकड़े आगे बढ़ते रहते हैं, किन्तु इतने दौरानमें ही इतना अधिक ताप उत्पन्न



होता है कि जल-भुनकर वे गैस-रूपमें परिणत होकर लुप्त हो जाते हैं। ज्योतिषज्ञोंका कहना है कि बाह्य देशके ये टुकड़े, जिन्हें देखकर हमें तारोंके टूटनेका भान होता है, प्रायः रेतके कणोंके आकारके होते हैं।

हाँ, कभी-कभी असाधारण आकारके टुकड़े भी वायुमण्डलमें प्रवेश कर जाते हैं। वायुकणोंके घर्षणसे ये भी तप्त हो जाते हैं, इनका धरातल भी जलने लगता है। किन्तु इनका आकार इतना बड़ा होता है कि उन चन्द्र लमहोंके अन्दर जब कि ये अपनी वायुमण्डलकी समूची यात्रा खत्म कर लेते हैं, इनका पूरा शरीर जलकर गैस बनने नहीं पाता। अतः जले-भुने तप्त अंगार-सदृश देहको लेकर ये जमीनपर आ गिरते हैं। साधारण जनता इन्हें ही उल्काके नामसे पुकारती है।

अक्सर इन उल्काओंका वजन बहुत अधिक नहीं होता, किन्तु कभी-कभी विशालकाय उल्काएँ भी जमीनपर आ गिरती हैं। सैकड़ों वर्षकी बात है कि संयुक्त राज्य अमेरिकाके अरिजोना प्रान्तमें एक बृहत्काय उल्का गिरी थी जिसके आघातसे जमीनमें ६०० फुट गहरा गड्ढा बन गया था। यह गड्ढा एक मील चौड़ा था। फिर ३० जून १९०८ को एक विशालकाय उल्का साइबेरियाके जंगलमें गिरी थी। १०० वर्ग मीलके दायरेके अन्दर तमाम पेड़-पौधे दियासलाईकी तीलियोंकी तरह जल-भुनकर भस्म हो गये थे। खयाल किया जाता है कि यदि यह उल्का लन्दन शहरमें गिरी होती तो शहरका तीन-चौथाई हिस्सा भस्म हो गया होता। सौभाग्यवश उल्कापात इतने कम होते हैं कि आजतक उल्कापातसे किसी व्यक्तिकी जान जानेकी बात नहीं सुनी गयी।

उल्काएँ जब गिरती हैं तो बिजलीकी कड़क-जैसी आवाज भी होती है, क्योंकि अत्यन्त तीव्र गतिसे उल्का जब वायुमण्डलमें आगेकी ओर बढ़ती है, तो पीछेकी हवा खिंच उठती है। नतीजा यह होता है कि उल्का अपनी जगहसे आगे बढ़ती है तो उस जगहपर जरा-सी देरके लिए वैकुण्ठ पैदा हो जाता है। इसी रिक्त स्थानको भरनेके लिए चारों ओरसे हवा दौड़ती है और इस क्रियामें बिजलीकी कड़क जैसी आवाज

पैदा होती है। बाह्य प्रदेशसे प्रतिदिन लगभग २० लाख उल्काएँ हमारे वायुमण्डलमें प्रवेश करती हैं, किन्तु उनमेंसे दो ही चार जमीनपर पहुँच



अरिजोना प्रान्तकी वृहत्काय उल्का, जिसमें हवा-पानीके सम्पर्कसे गह्वे बन गये

पाती हैं। शेष बीच रास्तेमें ही तप्त होकर गैस बन जाती हैं। भिन्न-भिन्न देशोंके रेकार्ड देखनेपर पता चलता है कि समूची पृथ्वीपर प्रति वर्ष ७०० से लेकर २००० तक उल्काएँ गिरती हैं।



स्वभावतः प्रश्न उठता है कि पत्थरके ये टुकड़े सौर परिवारमें आये कहाँसे ? इस प्रश्नपर समुचित रूपसे प्रकाश डालना स्थानाभावके कारण यहाँ सम्भव नहीं है। इस स्थानपर इतना बतला देना काफी होगा कि पत्थर तथा लोहेके ये टुकड़े उन पुच्छल तारोंके अंश हैं जो सूर्यका चक्र लगाया करते हैं। पृथ्वी जब इस झुण्डमेंसे होकर गुजरती है तो ये टुकड़े पृथ्वीके वायुमण्डलमें खिंच उठते हैं।

वाह्य प्रदेशसे उल्काओंके आनेसे पृथ्वीका भार दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। गुरुत्वाकर्षणका नियम है कि भार बढ़नेपर उस चीजकी आकर्षण-शक्ति भी बढ़ती है। अतः पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति भी थोड़ी-थोड़ी बढ़ रही है। सूर्यकी प्रदक्षिणा करनेमें पृथ्वीको जो समय लगता है, उसका पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। वैज्ञानिकोंने हिसाब लगाया है कि उल्काओंके कारण १० लाख वर्षमें पृथ्वीके प्रदक्षिणा-काल, (३६५ $\frac{1}{4}$  दिन) में  $\frac{1}{1000}$  सेकेण्डकी कमी होगी।

मई और जूनके महीनोंमें उल्कापात अधिक संख्यामें होते हैं। भारतवर्षमें जनवरीके महीनेमें भी अधिक उल्काएँ आसमानमें नजर आती हैं। कभी अकेला पत्थर न गिरकर उल्का-झड़ी भी गिरती है। १९२१ में राजपूतानेमें उल्का-झड़ी गिरी थी जिसमें मुख्यतः लोहेके टुकड़े थे। सन् १८७३ में पञ्जाबमें पत्थरके टुकड़ोंकी उल्का-झड़ी गिरी थी। ४८ वर्गमीलके क्षेत्रमें इस उल्का-झड़ीने फसलको हानि पहुँचायी थी।

कलकत्तेके अजायबघरमें उल्काओंका एक अद्वितीय संग्रह है। एशियामें इस जोड़का उल्का-संग्रह अन्यत्र कहीं नहीं है। २९९ पत्थरके टुकड़े और १७६ लोहेके टुकड़े इस संग्रहालयमें जमा हैं। इस संग्रहालयका सबसे बड़ा टुकड़ा डेढ़ मन वजनका है। यह उल्का ३० अगस्त सन् १९२० को इलाहाबादके मेरुआ गाँवमें गिरी थी। जहाँ भी भारतमें उल्काएँ गिरें, वे कानूनके अनुसार भारत सरकारकी सम्पत्ति समझी जाती हैं। गवर्नमेण्टके अधिकारीगण उल्काओंको उक्त

संग्रहालयमें भेज देते हैं। इस सिलसिलेमें एक दिलचस्प घटनाका जिक्र कर देना अनुपयुक्त न होगा।

इंग्लैण्डके एक किसानने अपना खेत दूसरे काश्तकारको लगानपर उठाया था। इसी बीच एक दिन शामको खेतमें कोई चमकती हुई आग्नेय चीज आसमानसे गिरी। काश्तकार प्रातःकाल खेतपर गया। वहाँ उसने पत्थरके टुकड़ेको पड़ा पाया। खबर पाकर उस खेतका असल काश्तकार भी दौड़ आया और उसने इस बातको साबित करनेकी कोशिश की कि खेतमें पायी जानेवाली धातुका वास्तविक हकदार वही था। किन्तु शिकमी काश्तकारने जवाब दिया कि खेतमेंसे यह चीज नहीं निकली है, अतः इसपर उसका कोई हक नहीं पहुँचता। फिर असल काश्तकारने कहा—अच्छा इसे बाहरका शिकार मानकर हम इसे अपने कब्जेमें ले लेते हैं। इस दलीलका भी उत्तर शिकमी काश्तकारके पास मौजूद था। उसने कहा—न तो इसके पंख हैं न जान, फिर इसे शिकारका पक्षी कैसे मान लें। इन दोनोंमें इस तरहकी तकरार चल रही थी कि चुंगीका अफसर वहाँ आया और उस उलकाको यह कहकर अपने साथ उठवा ले गया कि अन्य देशसे आये हुए इस मालपर चुंगी नहीं अदा की गयी है !

## पुच्छल तारे क्या हैं ?

धूमकेतुका प्रकट होना जनसाधारणमें अशुभका चिह्न माना जाता है। प्राचीनकालमें भी समय-समयपर धूमकेतु दिखलाई पड़े थे—लगभग सभी प्रमुख धूमकेतुओंका सम्बन्ध किसी राष्ट्रीय या देशव्यापी संकटसे स्थापित करनेका प्रयत्न लोगोंने किया है।

सन् १०६६ में एक धूमकेतु इंग्लैण्डमें दिखाई पड़ा था। इस



घटनाका सम्बन्ध हेरोल्ड युवराजकी मृत्युके साथ बताते हुए सुप्रसिद्ध कवि शेक्सपियरने अपनी एक कवितामें लिखा था कि जब भूखे और कंगाल मरते हैं तो धूमकेतु नहीं प्रकट होते, किन्तु युवराजकी मृत्युपर तो आसमानमें ही चिनगारियाँ फूट पड़ती हैं।

सन् १४०६ में कुस्तुनतुनियाँ जीत लेनेके बाद तुर्क लोगोंने बेलग्रेडपर चढ़ाई की थी। इसी अवसरपर आसमानमें एक पुच्छल तारेका उदय हुआ था। भावुक व्यक्तियोंने इस लम्बी पूँछवाले तारेको एक नंगी तलवारके रूपमें देखा। संयोग ऐसा कि ठीक उसी वक्त चन्द्रग्रहण भी लग रहा था—लगभग सम्पूर्ण अंग चन्द्रमाका ढँक चुका था, केवल दृजके चाँदकी पतली रेखा दिखाई दे रही थी। चूँकि दृजका चाँद तुर्कीका राष्ट्रचिह्न है, इन भावुक व्यक्तियोंने इस धूमकेतुके उदय होनेका अर्थ लगाया कि तुर्कीपर विपत्ति आनेवाली है। हुआ भी कुछ ऐसा ही। इस युद्धमें तुर्कोंको मुँहकी खानी पड़ी।

### स्वर्गलोकके सन्देशवाहक

चीनके विद्वानोंका खयाल था कि आकाशीय प्रदेशोंमें जब एक प्रदेशसे दूसरे प्रदेशको देवताओंके सन्देशवाहक यात्रा करते हैं तो उनके मुकुटकी ज्योति धूमकेतुके रूपमें प्रकट होती है। अतः इन विद्वानोंने अध्यवसाय और लगनके साथ गणित आदिकी सहायतासे स्वर्गलोकके इन सन्देशवाहकोंके मार्गका पता लगानेका प्रयत्न भी किया था। इन विद्वानोंका भी यही खयाल था कि जब कभी विश्वपर भारी संकट आने-वाला होता है तभी ये सन्देशवाहक भावी संकटकी सूचना देनेके लिए एक प्रदेशसे दूसरे प्रदेशकी यात्रा करते हैं।

चीनवालोंने प्राचीनकालसे धूमकेतुओंका लेखा रखा है। ईसासे २४० वर्ष पूर्व १५ मईको भी धूमकेतुका उदय हुआ था—इस बातका पता हमें इन्हींके रेकार्ड देखनेसे चलता है।

बीसवीं शताब्दीमें भी मुख्य धूमकेतुओंका नाता बड़ी-बड़ी दुर्घटनाओंके साथ जोड़ा गया है। सन् १९०७ में एक विशालकाय पुच्छल

तारेका उदय हुआ था—किंग एडवर्डकी उसी वर्ष मृत्यु हो गयी। सन् १९१३ में एक दूसरा धूमकेतु दिखलाई पड़ा था—फलस्वरूप यूरोपीय महायुद्धकी ज्वाला प्रज्ज्वलित हो उठी। इस वर्ष भी निहायत चमकदार धूमकेतु दीख पड़ा है। जनसाधारण सशंक है कि वर्तमान युद्ध क्या कम गजब ढा रहा है कि यह धूमकेतु किसी और भावी विपत्तिकी सूचना लेकर आ पहुँचा है।

वैज्ञानिक धूमकेतुको देखकर जरा भी सशंक नहीं होता, क्योंकि वह जानता है कि अनन्त अन्तरिक्षके ये सन्देशवाहक हमारी पृथ्वी, मंगल, शुक्र आदिकी भाँति सूर्यकी आकर्षण-शक्तिसे आवद्ध होकर सूर्यकी परिक्रमा लगाते हैं। अवश्य ही इनकी कक्षा बहुत ही बड़ी है, इस कारण परिक्रमा पूरी करनेकी अवधि भी इनकी काफी लम्बी होती है। कभी-कभी तो परिक्रमा पूरी करनेमें इन्हें सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं।

### प्राचीन मत

धूमकेतुओंका अध्ययन अतीत कालसे ही होता आ रहा है और अपने-अपने बुद्धि-विवेकके अनुसार लोगोंने इनकी व्याख्या भी की। प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तूका कहना था कि पृथ्वी जब कभी गरम साँसें लेती है, तो वे ही साँसें ऊर्ध्वाकाशमें पहुँचकर प्रज्ज्वलित हो उठती हैं और धूमकेतुओंके रूपमें प्रकट होती हैं। कुछ लोगोंका खयाल था कि धूमकेतु किसी अन्य लोकके ज्योतिधारी जीव हैं जो आकाश-मार्गसे कहींको जा रहे हैं।

### वैज्ञानिक अध्ययन

अवश्य ही १७वीं शताब्दीमें धूमकेतुओंका अध्ययन सही रास्तेपर पहली बार किया गया। हेलीने सर्वप्रथम तत्कालीन विद्वानोंके सामने यह बात रखी कि धूमकेतु एक नियत अवधिके उपरान्त आकाशमें हमें बार-बार दिखलाई पड़ते हैं। इसके पहले लोगोंका यह खयाल था कि धूमकेतु एक बार दिखलाई देकर सदैवके लिए लुप्त हो जाया करता है। इस धारणाके अनुसार एक धूमकेतुका सम्बन्ध किसी पिछले धूमकेतुके



साथ स्थापित नहीं किया जा सकता था ।

एडमण्ड हेलीकी गणना इंग्लैण्डके प्रमुख ज्योतिषज्ञोंमें होती थी । उन दिनों आप ग्रीनविच वेधशालामें अध्यक्षके पदपर थे । इतनेमें सन् १६८२ में एक वृहत्काय धूमकेतु आकाशमें प्रकट हुआ । हेलीने इस धूमकेतुको देखकर इस सम्बन्धमें काफी परिश्रमके साथ अनुसन्धान किया और तब यह नियम ढूँढ़ निकाला कि प्रत्येक धूमकेतु अपनी नियत अवधिके उपरान्त पुनः प्रकट होता है । हेलीने हिसाब लगाकर यह सिद्ध किया कि उस सन् १६८२ वाले धूमकेतुकी कक्षा ठीक वही है जो सन् १६०७ और सन् १५३१ वाले धूमकेतुओंकी थी । फिर पुराने रेकार्डको देखकर उसने बताया कि १४५६, १३०१, ११४५ और १०६६ ई० में भी धूमकेतु दिखलाई पड़े थे । इस प्रकार उसने यह भी साबित किया कि प्रत्येक ७५ वर्षके अन्तरपर जो धूमकेतु दिखलाई पड़े थे वे वास्तवमें एक-दूसरेसे भिन्न नहीं हैं । यह धूमकेतु अपनी दीर्घ वृत्ताकार कक्षापर घूमता हुआ प्रति ७५ वर्षके उपरान्त पृथ्वीके नजदीकसे होकर गुजरता है । चूँकि हेलीने इस धूमकेतुको पहली बार पहचाना था, इस कारण इस धूमकेतुका नाम भी 'हेलीका धूमकेतु' रखा गया ।

अपने इस सिद्धान्तकी मददसे हेलीने इस धूमकेतुके पुनः प्रकट होनेका समय भी बताया कि यह धूमकेतु सन् १७५९ में फिर प्रकट होगा । लोगोंके आश्चर्यका कुछ ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि नियत समयपर उक्त धूमकेतु आसमानमें प्रकट हुआ । हेलीके धूमकेतुके अतिरिक्त लगभग १५ अन्य धूमकेतुओंकी कक्षा और उनका भ्रमणकाल भली-भाँति मालूम किया जा चुका है । इनमेंसे दोका परिभ्रमणकाल ७० और ८० वर्षके दर्मियान है ।

### परिभ्रमण-मार्ग

अवश्य ही यह प्रश्न उठता है कि हेलीके पूर्व अन्य लोग इस नियमका पता क्यों नहीं लगा पाये थे । धूमकेतुओंकी विशेषता यह है कि उनका रूप सदैव एक-सा नहीं रहता । इसी कारण आम लोग

पहचान न सके थे कि यह धूमकेतु वही है जिसे आजसे ७५ वर्ष पूर्व हमने अपने बाल्यकालमें देखा था। सूर्य और धूमकेतुके बीचकी दूरीके घटने-बढ़नेके साथ धूमकेतुके रूपमें भी परिवर्तन होता रहता है—कभी पूँछ निहायत लम्बी हो जाती है, तो कभी निरा मुण्ड ही दिखाई देता है। कभी पूँछ पीछेकी ओर पंखेकी तरह फैली रहती है तो कभी वह दाढ़ी बनकर धूमकेतुके सामनेवाले भागपर आ जमती है।

धूमकेतुओंको पहचाननेका एकमात्र जरिया है उनकी कक्षा। विभिन्न धूमकेतु विभिन्न आकारके दीर्घवृत्तमें सूर्यकी प्रदक्षिणा करते हैं। अतः प्रत्येक धूमकेतुको उसकी कक्षाकी वदौलत ही पहचाना जा सकता है। किन्तु कक्षाका रूप निर्धारित करना सहज कार्य नहीं है; क्योंकि धूमकेतु अपनी कक्षापर भ्रमण करते हुए बहुत थोड़ी दूरीतक ही हमें दिखाई देता है। फिर दूरवीक्षण यन्त्रसे देखनेपर यह एकदम ठीक-ठीक कहा भी नहीं जा सकता कि धूमकेतु किस स्थानपर है; क्योंकि धूमकेतु ग्रह या नक्षत्रोंकी भाँति चमकता हुआ गोला नहीं है। यह तो लाखों मील लम्बी पूँछ लिये हुए एक धुँधले बादलकी भाँति आकाशमें दूरतक फैला रहता है। अवश्य ही इसका मुण्ड शरीरके शेष भागसे अधिक चमकीला होता है, फिर भी मुण्डका आकार हजारों मीलतक पहुँचता है।

### सौर परिवारके सदस्य

कुछ धूमकेतु दीर्घवृत्तमें न चलकर परिवलय (पैराबोला) का मार्ग ग्रहण करते हैं। ये धूमकेतु एक बार हमें अपना दर्शन देकर अनन्त अन्तरिक्षमें सदाके लिए गायब हो जाते हैं। किन्तु दीर्घवृत्तवाले धूमकेतु तो बार-बार सूर्यका चक्कर लगाया ही करते हैं। इन्हें हम सौर परिवारका सदस्य कह सकते हैं। ज्योतिषज्ञोंका अनुमान है कि दीर्घवृत्तमें भ्रमण करनेवाले धूमकेतु भी प्रारम्भमें दूर देशसे परिवलय मार्गपर चलते हुए सूर्यके निकट आये, किन्तु सूर्यके इतने नजदीक ये आ पहुँचे कि सूर्यकी गुरुत्वाकर्षण-शक्तिके अत्यधिक प्रभावसे इनकी कक्षाका मार्ग बदलकर दीर्घवृत्त हो गया और सदैवके लिए ये सौर परिवारके



सदस्य बन गये। कभी-कभी तो विभिन्न ग्रह भी इसी प्रकार धूम-केतुओंको अपने आकर्षण-क्षेत्रमें खींचकर उन्हें अपने परिवारका सदस्य बना लेते हैं—इस प्रकार बृहस्पतिके आकर्षण-क्षेत्रमें सोलह धूमकेतु आ चुके हैं; शनिके प्रभावमें दो, अरुणके प्रभावमें तीन और नेपच्यूनके प्रभावमें छ। इन सभी धूमकेतुओंका परिभ्रमणकाल ६ और ८ वर्षके बीचमें है। केवल नेपच्यूनके धूमकेतुओंका परिभ्रमणकाल ७० और ८० वर्षके बीच है। हेली धूमकेतु भी नेपच्यूनके ही परिवारका सदस्य है।

### धूमकेतुका शरीर

प्रत्येक धूमकेतुके तीन मुख्य भाग किये जा सकते हैं—पूँछ, मुण्ड और केन्द्र। परिक्रमाके सिलसिलेमें धूमकेतु सूर्यकी ओर जव अग्रसर होता है तो सबसे पहले उसका मुण्ड दृष्टिगोचर होता है। दहकती हुई गैसके गोलेकी भाँति यह मुण्ड दिखलाई पड़ता है—इसका रूप बहुत अंशोंमें एक धुँधले और फैले हुए नक्षत्र-सा होता है। इस मुण्डका आकार अकसर ५० हजार मीलसे भी ऊपर होता है। किन्तु ऐसे धूमकेतु जिनका परिभ्रमणकाल ६ या ७ वर्षसे कम होता है, अधिक प्रकाश नहीं देते और न इनका आकार ही विशेष बड़ा होता है। उन्हें आकार और कम प्रकाशके कारण बिना दूरदर्शक (दूरबीन) यन्त्रकी सहायताके हम इन्हें देख भी नहीं सकते। लम्बे परिभ्रमण-कालवाले धूमकेतु आकारमें भी बड़े होते हैं और इनकी चमक भी ज्यादा होती है। अतएव इन्हें हम कोरी आँखोंसे भी देख सकते हैं। हेली धूमकेतु भी इसी श्रेणीका धूमकेतु है। इन धूमकेतुओंका परिभ्रमण-काल प्रायः ७०-८० वर्ष हुआ करता है।

मुण्डके बीच धुँधली-चमकीली गैसोंके आवरणके भीतर एक चमकीला बिन्दु भी अकसर दिखलाई पड़ता है, किन्तु इस बिन्दु-केन्द्रका आकार सदैव एक-सा नहीं रहता। कभी-कभी तो केन्द्र दृष्टि-गोचर भी नहीं होता। दूरबीनकी मददसे केन्द्रके आकारका पता लगानेका प्रयत्न करनेपर एक सौ मीलसे लेकर आठ हजार मीलतक वह

पहचान न सके थे कि यह धूमकेतु वही है जिसे आजसे ७५ वर्ष पूर्व हमने अपने बाल्यकालमें देखा था। सूर्य और धूमकेतुके बीचकी दूरीके घटने-बढ़नेके साथ धूमकेतुके रूपमें भी परिवर्तन होता रहता है—कभी पूँछ निहायत लम्बी हो जाती है, तो कभी निरा मुण्ड ही दिखाई देता है। कभी पूँछ पीछेकी ओर पंखेकी तरह फैली रहती है तो कभी वह दाढ़ी बनकर धूमकेतुके सामनेवाले भागपर आ जमती है।

धूमकेतुओंको पहचाननेका एकमात्र जरिया है उनकी कक्षा। विभिन्न धूमकेतु विभिन्न आकारके दीर्घवृत्तमें सूर्यकी प्रदक्षिणा करते हैं। अतः प्रत्येक धूमकेतुको उसकी कक्षाकी वदौलत ही पहचाना जा सकता है। किन्तु कक्षाका रूप निर्धारित करना सहज कार्य नहीं है; क्योंकि धूमकेतु अपनी कक्षापर भ्रमण करते हुए बहुत थोड़ी दूरीतक ही हमें दिखाई देता है। फिर दूरवीक्षण यन्त्रसे देखनेपर यह एकदम ठीक-ठीक कहा भी नहीं जा सकता कि धूमकेतु किस स्थानपर है; क्योंकि धूमकेतु ग्रह या नक्षत्रोंकी भाँति चमकता हुआ गोला नहीं है। यह तो लाखों मील लम्बी पूँछ लिये हुए एक धुँधले बादलकी भाँति आकाशमें दूरतक फैला रहता है। अवश्य ही इसका मुण्ड शरीरके शेष भागसे अधिक चमकीला होता है, फिर भी मुण्डका आकार हजारों मीलतक पहुँचता है।

### सौर परिवारके सदस्य

कुछ धूमकेतु दीर्घवृत्तमें न चलकर परिवलय (पैराबोला) का मार्ग ग्रहण करते हैं। ये धूमकेतु एक बार हमें अपना दर्शन देकर अनन्त अन्तरिक्षमें सदाके लिए गायब हो जाते हैं। किन्तु दीर्घवृत्तवाले धूमकेतु तो बार-बार सूर्यका चक्कर लगाया ही करते हैं। इन्हें हम सौर परिवारका सदस्य कह सकते हैं। ज्योतिषज्ञोंका अनुमान है कि दीर्घवृत्तमें भ्रमण करनेवाले धूमकेतु भी प्रारम्भमें दूर देशसे परिवलय मार्गपर चलते हुए सूर्यके निकट आये, किन्तु सूर्यके इतने नजदीक ये आ पहुँचे कि सूर्यकी गुरुत्वाकर्षण-शक्तिके अत्यधिक प्रभावसे इनकी कक्षाका मार्ग बदलकर दीर्घवृत्त हो गया और सदैवके लिए ये सौर परिवारके



सदस्य बन गये। कभी-कभी तो विभिन्न ग्रह भी इसी प्रकार धूम-केतुओंको अपने आकर्षण-क्षेत्रमें खींचकर उन्हें अपने परिवारका सदस्य बना लेते हैं—इस प्रकार बृहस्पतिके आकर्षण-क्षेत्रमें सोलह धूमकेतु आ चुके हैं; शनिके प्रभावमें दो, अरुणके प्रभावमें तीन और नेपच्यूनके प्रभावमें छ। इन सभी धूमकेतुओंका परिभ्रमणकाल ६ और ८ वर्षके बीचमें है। केवल नेपच्यूनके धूमकेतुओंका परिभ्रमणकाल ७० और ८० वर्षके बीच है। हेली धूमकेतु भी नेपच्यूनके ही परिवारका सदस्य है।

### धूमकेतुका शरीर

प्रत्येक धूमकेतुके तीन मुख्य भाग किये जा सकते हैं—पूँछ, मुण्ड और केन्द्र। परिक्रमाके सिलसिलेमें धूमकेतु सूर्यकी ओर जव अग्रसर होता है तो सबसे पहले उसका मुण्ड दृष्टिगोचर होता है। दहकती हुई गैसके गोलेकी भाँति यह मुण्ड दिखलाई पड़ता है—इसका रूप बहुत अंशोंमें एक धुँधले और फैले हुए नक्षत्र-सा होता है। इस मुण्डका आकार अकसर ५० हजार मीलसे भी ऊपर होता है। किन्तु ऐसे धूमकेतु जिनका परिभ्रमणकाल ६ या ७ वर्षसे कम होता है, अधिक प्रकाश नहीं देते और न इनका आकार ही विशेष बड़ा होता है। नन्हें आकार और कम प्रकाशके कारण बिना दूरदर्शक (दूरबीन) यन्त्रकी सहायताके हम इन्हें देख भी नहीं सकते। लम्बे परिभ्रमण-कालवाले धूमकेतु आकारमें भी बड़े होते हैं और इनकी चमक भी ज्यादा होती है। अतएव इन्हें हम कोरी आँखोंसे भी देख सकते हैं। हेली धूमकेतु भी इसी श्रेणीका धूमकेतु है। इन धूमकेतुओंका परिभ्रमण-काल प्रायः ७०-८० वर्ष हुआ करता है।

मुण्डके बीच धुँधली-चमकीली गैसोंके आवरणके भीतर एक चमकीला बिन्दु भी अकसर दिखलाई पड़ता है, किन्तु इस बिन्दु-केन्द्रका आकार सदैव एक-सा नहीं रहता। कभी-कभी तो केन्द्र दृष्टि-गोचर भी नहीं होता। दूरबीनकी मददसे केन्द्रके आकारका पता लगानेका प्रयत्न करनेपर एक सौ मीलसे लेकर आठ हजार मीलतक वह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri  
पाया गया है। कभी-कभी केन्द्रसे अचानक आलोक-रश्मियोंकी बाढ़-सी निकलती है और कभी-कभी एक केन्द्र टूटकर दो या दो-से अधिक केन्द्रोंमें विभाजित हो जाता है।

धूमकेतुका सबसे शानदार अङ्ग है उसकी पूँछ, जो सिरकी अपेक्षा कहीं अधिक लम्बी हुआ करती है। आठ करोड़, दस करोड़ मीलतक यह पूँछ अनन्त अन्तरिक्षमें फैली रहती है—बृहत्काय धूमकेतुओंकी पूँछ जितनी जगह घेरती है उतनी जगहमें हजारों सूर्य समा सकते हैं। किन्तु पूँछमें गैसके अणु एक दूसरेसे इतने दूर-दूर रहते हैं कि गैसका घनत्व बहुत ही कम होता है—इतना कम कि जब पूँछ किसी टिम-टिमाते हुए तारेके सामनेसे होकर गुजरती है, तो हमें उस तारेकी चमकमें रत्तीभर फर्क नजर नहीं आता। पूँछकी गैसके विरल (कम घना) होनेका एक प्रमाण यह भी है कि जब धूमकेतु किसी ग्रहके पाससे होकर गुजरता है तो उस ग्रहकी कक्षामें धूमकेतुके गुरुत्वाकर्षणके कारण तनिक भी अन्तर नहीं आने पाता। चूँकि गुरुत्वाकर्षण-शक्ति पदार्थकी मात्रापर निर्भर करती है, हम सहज ही निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि धूमकेतुकी पूँछमें पदार्थ अत्यन्त विरल (कम घना) है। अनुमान लगाया गया है कि एक लाख धूमकेतुओंका वजन भी हमारी पृथ्वीके वजनके बराबर कदाचित् न उतरेगा। इस सिलसिलेमें इंग्लैण्ड-के ज्योतिषज्ञ सर जान हर्शलने एक बार कहा था—‘समूचे धूमकेतुको बटोरकर आप आसानीसे अपने सूटकेसमें बन्द कर दे सकते हैं।’ अनेक दीप्तिमान् धूमकेतुओंके दो या दोसे अधिक पूँछें होती हैं।

धूमकेतुओंमें प्रकाश कहाँसे आया? प्रयोगशालामें वैज्ञानिकोंने स्पेक्ट्रोस्कोप नामक यन्त्रसे धूमकेतुओंकी आलोक-रश्मियोंका विश्लेषण किया और तब उन्होंने देखा कि इन आलोक-रश्मियों तथा सूर्यके आलोकमें पूरा सादृश्य है, अतः यह बात अब भलीभाँति सिद्ध हो चुकी है कि धूमकेतुकी चमकका कारण सूर्य-रश्मियाँ हैं जो उससे टकराकर हमारे पास पहुँचती हैं। इस दृष्टिकोणसे धूमकेतुओंको भी हम सौर



परिवारके ग्रहोंकी श्रेणीमें रख सकते हैं। किन्तु जैसा कि हम कह आये हैं, प्रायः धूमकेतुओंके मुण्डमेंसे आलोक-रश्मियोंका उद्गार भी होता है, इस कारण रह-रहकर धूमकेतुओंकी चमक अचानक बढ़ जाया करती है। निश्चय ही इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि धूमकेतु स्वयं भी आलोक उत्पन्न करता है। इस सम्बन्धमें अभी अनुसन्धान-कार्य चल रहे हैं, अतः पूर्णतया निर्णयात्मक उत्तर दे सकना सम्भव नहीं है।

### उल्कापात

धूमकेतु एक ठोस पिण्ड तो है नहीं, इस कारण प्रदक्षिणा करते समय अन्य आकाश-पिण्डोंकी आकर्षण-शक्तिकी चपेटमें आकर प्रायः इसका स्थूल शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता है और तब उस अभागे धूमकेतुके विक्षत अंगके टुकड़े हमारी पृथ्वीपर भी उल्का-झड़ियोंके रूपमें आ गिरते हैं। कभी-कभी तो यह अंग-विक्षत होनेकी क्रिया इतनी प्रबल हो जाती है कि समूचा धूमकेतु विनष्ट होकर उल्का-झड़ियोंका रूप धारण कर लेता है और फिर कुछ ही कालके उपरान्त सदैवके लिए वह मृत्युकी गोदमें समा जाता है।

### बीला धूमकेतु

सन् १८२६ में बीला धूमकेतु दूरबीनकी सहायतासे देखा गया था। ६॥ वर्ष उपरान्त सन् १८३२ में यह फिर दिखलाई पड़ा था। इसका रूप पहलेसे भिन्न था। सन् १८४६ में जब यह पुनः देखा गया तो १९ दिसम्बर १८४६ को उसकी शङ्कु तुमड़ीके आकारकी दीख पड़ी और दस दिन बाद ज्योतिषज्ञोंने आश्चर्यचकित होकर देखा कि इस धूमकेतुका सिर फटकर दो भागोंमें बँट गया है। पूरे चार महीनेतक यह युग्म धूमकेतु दिखलाई देता रहा। दोनों धूमकेतुओंके मुण्ड साथ-साथ पूर्व कक्षापर चल रहे थे। दोनों मुण्डोंके बीच १,६०,००० मीलका फासला था। सन् १८५२ में ये दोनों धूमकेतु फिर दिखलाई पड़े। इनके मुण्डोंके बीचका फासला बढ़कर अब १५ लाख मील हो गया था। उसके बाद ये युगल धूमकेतु एकदम लुप्त हो गये। सन् १८५९ और १८६५ में ये

दिखलाई नहीं पड़े थे। सन् १८७२ में २७ नवम्बरको जिस दिन वीला धूमकेतुके प्रकट होनेकी वारी थी, पृथ्वी एक जबरदस्त उल्का-झड़ीमें होकर गुजरी। १४ वर्ष बाद सन् १८८६ में फिर पृथ्वी उसी उल्का-झड़ीमेंसे होकर गुजरी। निस्सन्देह वीला धूमकेतु छिन्न-भिन्न होकर अब उल्का-झड़ियोंमें परिवर्तित हो गया था। सम्भव है, सौ दो सौ वर्ष बाद वीला धूमकेतुका यह अवशिष्ट चिह्न भी सदाके लिए लुप्त हो जाय।

## आसमानसे बिजली क्यों गिरती है ?

वर्षाऋतुमें प्रायः रोज ही आसमानमें बिजलीकी चमक देखनेमें आती है। रात्रिके घोर अन्धकारमें जिस समय बिजली कड़कती है, विज्ञानकी इस बीसवीं सदीका मनुष्य भी काँप उठता है। आजसे बहुत दिनों पहले जब मानवजाति अपनी शैशवावस्थासे होकर गुजर रही थी, लोगोंने आकाशकी बिजलीको ईश्वरीय प्रकोप माना। उसके सम्बन्धमें तरह-तरहकी दिलचस्प घटनाएँ गढ़ी गयीं। उदाहरणके लिए, लोगोंने सोचा कि इन्द्रजी जब क्रुद्ध होकर बादलोंमें बर्छी भोंकते हैं तो बिजली प्रकट होती है।

किन्तु वावजूद इस अज्ञानके, हमारे पूर्वजोंको आकाशकी बिजलीके बारेमें अनेक बातें मालूम थीं। अपने मन्दिरमें कंगूरेपर त्रिशूल वे इसी-लिए लगाते थे कि आकाशकी बिजली यदि मन्दिरपर गिरे तो उस त्रिशूलमें ही समा जाय। आज दिन भी ऊँची-ऊँची सभी इमारतोंमें चोटीसे लेकर फर्शतक लोहेका पतला तार इसलिए लगाते हैं कि आकाशकी बिजली इमारतको कोई नुकसान न पहुँचा सके।

किन्तु वैज्ञानिक ढंगपर आकाशकी बिजलीका अध्ययन करनेका सर्वप्रथम प्रयास अमेरिकाके प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ बैनजामिन फ्रैंकलिनने



किया था। करीब डेढ़ सौ वर्ष हुए उसने एक ऊँची-सी पतंग आसमानमें उड़ायी। उस पतंगकी डोर काफी लम्बी थी। पतंग एक लोहेके हुक द्वारा लम्बी डोरसे बँधी थी। पानी बरसनेपर डोर भीग गयी और जब आकाशमें बिजली चमकी तो वह फौरन डोरके रास्ते परेतैतक पहुँची जिससे बैनजामिनके हाथोंमें जबरदस्त धक्का लगा। इस तरह बैनजामिनने इस साहसपूर्ण प्रयोग द्वारा यह साबित कर दिखाया कि आकाशकी बिजली भी प्रयोगशालामें उत्पन्न की गयी बिजलीके सदृश ही है। इससे भी हमें उसी प्रकारका धक्का लगता है जिस प्रकारका प्रयोगशालाकी बिजलीसे।

अब आधुनिक युगमें तो आकाशकी बिजलीके सम्बन्धमें हजारों प्रयोग किये जा चुके हैं। हमारे दैनिक जीवनमें विद्युत्शक्तिका प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। गाँव-गाँवमें बिजलीके तार फैल गये हैं। बरसातमें आकाशकी बिजली जब कड़कती है तो कभी-कभी सारे शहरकी बिजली बुझ जाती है। इसी प्रकार रेडियो और टेलीविजनके प्रोग्राममें भी आसमानकी बिजली अनेक बाधाएँ पहुँचाती है। अतः बिजलीकी कौंधके बारेमें वैज्ञानिकोंने बड़े मनोयोगसे अध्ययन करना शुरू किया, क्योंकि वे जानते थे कि इस सम्बन्धमें पूरी जानकारी हासिल किये बिना ये कठिनाइयाँ दूर न हो सकेंगी।

लाखों-करोड़ों रुपये लगाकर अमेरिकामें कई प्रयोगशालाएँ आकाशकी बिजलीका अध्ययन करनेके लिए खोली गयीं। इन प्रयोगशालाओंमें प्रायः कृत्रिम ढंगसे बिजलीकी कौंध पैदा की जाती है और इसका पता लगाया जाता है कि बिजलीकी कौंधका भिन्न-भिन्न चीजोंपर क्या असर पड़ता है। दक्षिण अफ्रिकाके एक प्रमुख वैज्ञानिकने एक बहुत ही तेज कैमरा तैयार किया है, जिसकी सहायतासे बातकी बातमें बादलोंकी कौंधकी फोटो ली जा सकती है। जितनी देरतक बिजली चमकती है उतनी ही देरमें प्लेटपर उसकी फोटो भी उभड़ आती है। इस कैमरे द्वारा लिये गये चित्रोंसे आकाशकी कौंधके बारेमें अनेक नयी बातें मालूम हुईं

हैं। इन चित्रोंके देखनेसे पता चलता है कि जब किसी चीजपर आकाश-की बिजली गिरती है तो वह प्रायः दो-दो तीन-तीन बार उस चीजपर आक्रमण करती है।

स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि आखिर बादलोंमें बिजली पैदा कहाँसे होती है? क्या वजह है कि बिजलीकी कौंध गर्मी और बरसातमें ही प्रकट होती है? जाड़ेके दिनोंमें यह क्यों नहीं दिखाई पड़ती?

वैज्ञानिक हमें बताता है कि गर्मीके दिनोंमें पृथ्वीतलके निकटकी हवा गर्म होकर ऊपरको उठती है। ज्यों-ज्यों हवा ऊपरको उठती है त्यों-त्यों वह ठण्डी होती जाती है और उसके अन्दर जो पानीकी भाप होती है वह ठण्डी होकर नन्हीं-नन्हीं बूँदोंका रूप धारण कर लेती है। पानीकी ये नन्हीं बूँदें ऊपर उठती हुई हवाके कारण आसमानमें बादलोंके रूपमें टँगी रह जाती हैं। किन्तु ज्यों ही हवाका ऊपरको चढ़ना किसी कारण बन्द हुआ, पानीकी ये बूँदें यकायक नीचे जमीनपर वर्षाके रूपमें आ गिरती हैं।

जिस समय पानीकी बूँदें हवामें लटकती रहती हैं, हवाके धक्केसे प्रायः नन्हीं-नन्हीं बूँदें इकट्ठी होकर बड़ी बूँदोंका रूप धारण कर लेती हैं, किन्तु हवाकी गति मन्द पड़ते ही ये बड़ी बूँदें स्वयं टूटकर फिर नन्हीं-नन्हीं बूँदोंका रूप धारण कर लेती हैं—बड़े आकारकी बूँदें जब टूटती हैं तो इन नन्हीं-नन्हीं बूँदोंमें ऋणात्मक बिजलीका समावेश हो जाता है और हवामें घनात्मक विद्युत् पैदा हो जाती है। यह सिलसिला कुछ देरतक जारी रहता है, और इसी दर्मियान जो हवा पानीकी बूँदोंके स्पर्शमें आती है, वह पानीकी ऋणात्मक विद्युत् ग्रहण कर लेती है, यहाँतक कि धीरे-धीरे बहुत कुछ बिजली वहाँ इकट्ठी हो जाती है।

अब चूँकि हवा बहुत ज्यादा बिजलीके भारको सह नहीं सकती, यकायक बिजली तड़पकर हवाको फाड़ देती है तथा बिजलीके मार्ग भर हवाके कण जल उठते हैं और बिजलीकी चिनगारी हमें दिखाई पड़ती है। हवाके फटनेपर उसमें विस्फोट होता है, जैसे बारूदका धड़ाका,



और इस कारण हमें बिजलीकी चमकके साथ कड़क भी सुनाई देती है । यदि बिजली हवामें एक सीधे रास्तेसे गयी तब उस हालतमें केवल एक बार छोटी-सी कड़क हम सुनते हैं, किन्तु जब बिजली त्रिशूल या टेढ़े-मेढ़े मार्गका अवलम्बन करती है तो उस हालतमें प्रत्येक मोड़पर बिजली हवाको फाड़ती है, अतः हम कई बार एकके बाद दूसरी गड़-गड़ाहट सुनते हैं ।

हवामें बिजली प्रायः उस मार्गसे जाती है जिस रास्तेमें उसके लिए हवाको फाड़ सकना आसान होता है । हवामें जिस दिशामें धूलिकण अधिक होते हैं, उस रास्तेसे बिजली अधिक आसानीसे गुजर सकती है ।

आसमानमें बिजली जब दो बादलोंके बीच चमकती है, तो कभी-कभी विद्युत्-रेखाकी लम्बाई २० मीलतक भी पहुँच जाती है, किन्तु पृथ्वीपर जब बिजलीका आक्रमण होता है, तो उस वक्त बिजलीवाले बादलोंकी ऊँचाई एक मीलसे अधिक नहीं होती ।

आकाशकी बिजलीकी चमक भी प्रायः विशद उज्ज्वल हुआ करती है, किन्तु कहीं-कहीं पीले, लाल और आसमानी रंगकी चमक भी देखनेमें आयी है ।

बिजली कैसी जगहोंपर गिरती है ? इस प्रश्नका उत्तर ढूँढ़नेके लिए भी इस क्षेत्रमें अनुसन्धान करनेवालोंने काफी छानबीन की है । जहाँतक बिजलीसे आहत व्यक्तियोंका सम्बन्ध है, देखा गया है कि खुले मैदानमें लोगोंको बिजली अधिक मारती है । किन्तु इस तरह बिजलीके शिकार होनेवाले व्यक्ति जमीनकी सतहसे अकसर ऊँचाईपर रहे हैं—या तो वे किसी टीलेपर खड़े थे या पुआल लदी हुई बैलगाड़ीके ऊपर बैठे थे या घोड़े अथवा ऊँटपर सवार थे । हाथमें लोहेकी छड़ी या छाता लेकर खुले मैदानमें उस समय चलना जब कि आसमानमें बिजलीकी कड़क-तड़क जारी हो, खतरेसे खाली नहीं है । लोहे या किसी भी धातुमें बिजली आसानीसे प्रवेश कर जाती है ।

अकेले संयुक्त-राज्य अमेरिकामें प्रति वर्ष ७०० व्यक्तियोंकी जानें बिजलीके कारण जाती हैं। भारतवर्षमें इस किस्मके आँकड़ोंको इकट्ठा करनेका कोई विशेष आयोजन नहीं है अतः लेखकको ठीक अनुमान नहीं लग सका कि भारतवर्षमें कितने व्यक्ति इन्द्रकी कोपाग्निसे प्रति वर्ष भस्म किये जाते हैं। किन्तु हमारे देशमें जहाँ हृद दर्जेका अज्ञान चारों ओर फैला हुआ है, बिजलीके आक्रमणसे बचनेके लिए विरले ही लोग सावधानी बरतते हैं।

बिजलीके आक्रमणके वारेमें अनेक दिलचस्प बातें मालूम हुई हैं। कई आदमियोंके गरोहपर जब बिजली गिरती है, तो हमेशा किनारेवाले ही व्यक्ति आहत होते हैं। बीचवाले व्यक्ति एकदम सही-सलामत बच जाते हैं। स्कूलमें दस लड़के एक कतारमें बैठे थे, खिड़कीके रास्तेसे विद्युत् ज्वाला कमरेमें घुसी और उससे कतारके पहले लड़के और अन्तिम लड़केको जबरदस्त शॉक पहुँचा, किन्तु और लड़कोंपर बिजलीका तनिक भी असर नहीं हुआ। फ्रांसके एक अस्तबलमें ३२ घोड़े कतारमें बँधे हुए थे कि बिजली गिरी। पहला घोड़ा तो बिजली गिरते ही मर गया और अन्तके घोड़ेको एक जबरदस्त झटका लगा। शेष ३० घोड़े एकदम निश्चिन्त खड़े रहे।

सफेद रंगकी चीजोंपर भी बिजली विशेष रूपसे आक्रमण करती है। वायु-परीक्षणालयके एक विशेषज्ञका कहना है कि एक गायको; जो कबरे रंगकी थी, बिजलीने हलके ढंगसे आहत किया था। गायकी देहके सफेद हिस्सेके बाल झुलस गये थे, किन्तु जो भाग काला था उसे तनिक भी क्षति नहीं पहुँची थी।

बिजली अकसर पीली और नरम मिट्टीवाली जमीनपर ही गिरती है, चट्टान और बालूवाली जमीनोंपर कम गिरती है। बालूमें गिरनेपर कई फुट नीचेतक यह प्रवेश कर जाती है और इसके स्पर्शसे बालू तप्त होकर शीशेके टुकड़ेके रूपमें परिणत हो जाती है—क्योंकि फैक्टरियोंके अन्दर भी बालूको तपाकर गलानेपर ही उससे शीशा बनता है। चट्टानों-



पर जब बिजली गिरती है तो उसके स्पर्शसे चट्टानकी सतह पिघल जाती है और उसपर चिकनी पालिश-सी हो जाती है ।

कभी-कभी ऐसा मालूम होता है कि बिजली जमीनको छू लेनेके बाद फिर ऊपरको उठती है । यूरोपमें एक व्यक्तिने जिस समय दरवाजेसे घरमें प्रवेश किया, बिजली उस घरपर गिरी । उस व्यक्तिको ऐसा मालूम हुआ जैसे इससे उसके पैरके तलवे जल उठे हों । फिर तत्काल ही यह जलन पैरोंके रास्ते ऊपरकी ओर चली—घुटनोंमें जलन मालूम हुई, फिर यह जलन सीनेमें पहुँची, और तब सिरमें । जिस क्षण शॉक सिरमें पहुँचा, उस व्यक्तिके सिरके बाल एकदम खड़े हो गये । फिर बिजली उस आदमीके शरीरसे निकलकर ऊपरको आकाशमें जाकर विलीन हो गयी । उस वक्त उस आदमीके कोटके पाकिटमें चाभियोंका गुच्छा रखा हुआ था । उसमें बिजलीके प्रभावसे चुम्बकीय शक्तिका समावेश हो आया ।

जिस समय जमीनपर बिजली गिरती है, वह लोहे आदि धातुकी बनी चीजोंकी विशेष रूपसे तलाश करती है—अकसर तहखानोंके रास्ते प्रवेश करके बिजली लोहेकी तिजोरियोंपर जा गिरी है । कुर्सियोंके गद्दोंमें घुसकर आसमानकी बिजलीने गद्दोंके भीतरके स्प्रिंगोंको अकसर उखाड़ डाला है । एक बार तो बिजली एक स्त्रीके नजदीक गिरी और उसने उस स्त्रीका दाहिना कान नोच लिया—स्त्री कानोंमें इयर-रिंग पहने हुए थी । अपनी इस अभूषण-प्रियताके लिए उसे महँगे दाम चुकाने पड़े ।

जमीनपर गिरनेपर बिजली अकसर खानोंके अन्दर मीलों नीचेतक प्रवेश कर गयी है और वहाँ खानके अन्दर काम करनेवाले मजदूरोंको जबर्दस्त शॉक दिया है ।

आसमानसे कभी-कभी आगके विशालकाय गोले भी बिजलीके तड़पनेके बाद ही उतरते हैं । एक बार इसी प्रकारका गोला जमीनपर उतरा और एक घरके अन्दर दरवाजेपर जोरका धक्का देते हुए घुस गया । रसोईघरमें नौकरोंने इस विचित्र चीजको अपनी ओर आते देखा तो

चीखकर वे खिड़कीके रास्ते घरसे बाहर भागे। किन्तु भागनेपर भी एक नौकरका ललाट जल गया। दो ही सेकेण्डमें यह आगका गोला (गोला आगकी लपट जैसा दिखता है) फट गया; धीमी-सी आवाज हुई और रसोई-घरकी चिमनीके रास्तेसे ऊपर जाकर थोड़ी ही ऊँचाईपर वह अदृश्य हो गया। यह गोला कैसे हवा और बादलके संघर्षसे उत्पन्न होता है, इस प्रश्नका उत्तर अभी भौतिक विज्ञान सन्तोषजनक रीतिसे नहीं दे पाया है।

ऊर्ध्वाकाशकी विद्युत् सम्बन्धी गुथियाँ सुलझानेके लिए अनुसन्धान-कारियोंने वायुयानोंकी भी शरण ली है। अकसर ऊँचे पहाड़ोंकी चढ़ाईमें मील-आध-मीलकी ऊँचाईपर वर्षा और झंझावातमें अभियानकारी बिजलीके तूफानके बीच पड़ जाते हैं। विद्युत् चार्जवाले बादलोंके स्पर्शसे इन अभियानकारियोंके शरीरमें एक अजीब तरहकी सनसनाहट पैदा होती है और इनके सिरके बाल खड़े हो जाते हैं।

हवाई जहाजके चालकोंको भी कभी-कभी ऐसी परिस्थितियोंका सामना करना पड़ता है। ऐसे अवसरपर थोड़ी देरके लिए उनके वायुयानके इंजिनके तमाम बिजली और रेडियोवाले यन्त्र सुर्दार पड़ जाते हैं। कभी-कभी तो इसी कारण दुर्घटनाएँ भी हो जाती हैं। अतः विद्युत् चार्जवाले बादलोंके बारेमें पूरी जानकारी हासिल करनेकी लोगोंने ठानी। यह काम वास्तवमें जोखिमका है। स्वयं वायुयानके अन्दर तरह-तरहके वैज्ञानिक यन्त्रोंसे सुसज्जित होकर चालक बैठ जाता है और फिर वायुयानको वह बादलोंके बीच उस स्थानपर ले जाता है जहाँ बिजलीका तूफान जोरोंके साथ चल रहा हो। तब मानो प्रकृति अपने अमोघ अस्त्रसे वायुयानपर प्रहार करती है—बिजलीकी कड़क रह-रहकर वायुयानपर आक्रमण करती है और वायुयानके अन्दर बैठा हुआ वैज्ञानिक नोट करता जाता है कि बाहरकी बिजलीका उसके हवाई जहाजमें लगे यन्त्रोंपर क्या असर पड़ता है।



## दुनियाकी सबसे बड़ी दूरबीन

मानव-जातिका इतिहास बताता है कि मनुष्यने आदिकालसे ही अपनी इन्द्रियोंकी शक्ति बढ़ानेका प्रयत्न किया है। उसने देखा कि आसपासकी चीजोंके बारेमें जानकारी हासिल करनेके लिए उसके पास पर्याप्त साधन मौजूद नहीं हैं। उसकी इन्द्रियोंकी कार्यक्षमता सीमित है। उसने इस बातको भी महसूस किया कि संसारके अन्य कई प्राणी इन्द्रियोंकी शक्तिके लिहाजसे मनुष्यसे कहीं आगे बढ़े हुए हैं।

अतः अपनी इन्द्रियोंकी शक्ति बढ़ानेके लिए मनुष्यने भिन्न-भिन्न तरीके सोच निकाले। हाथोंकी कार्यक्षमता बढ़ानेके लिए उसने मशीनें बनायीं, सुननेके लिए टेलीफोन और द्रुतवेगसे यात्रा करनेके लिए उसने मोटरगाड़ियाँ और हवाई जहाज बनाये। अपनी आँखोंकी शक्ति बढ़ानेके लिए उसने दूरबीन और खुर्दबीनोंका भी निर्माण किया।

लगभग ३०० वर्ष हुए, दूरबीनकी ईजाद प्रसिद्ध इटैलियन वैज्ञानिक गैलीलियोने की थी जैसा कि हम लिख चुके हैं। दूरबीनोंकी बदौलत दूरकी चीजें एकदम नजदीक दीखती हैं। गैलीलियोने दूरबीनकी मददसे पहली बार लोगोंको चन्द्रमाके ऊबड़-खाबड़ धरातलका निदर्शन कराया था। उसने बृहस्पति और शनि ग्रहोंके बारेमें भी अपनी दूरबीनकी सहायतासे अनेक नयी बातें मालूम की थीं।

गैलीलियोके प्रयोगोंने इस क्षेत्रमें पथप्रदर्शकका काम किया था। उसके बाद बढ़िया किस्मकी और शक्तिशाली दूरबीनें यूरोपके सभी देशोंमें तैयार की जाने लगीं। ज्योतिर्विज्ञानके हाथों तो दूरबीनके रूपमें एक अनमोल चीज लग गयी है। ज्योतिर्विदोंको यह समझते देर न लगी कि आकाशपिण्डोंके अध्ययनके लिए दूरबीनसे बढ़कर अन्य कोई साधन नहीं। अतः दूरबीनोंकी निरन्तर उन्नतिके लिए उन्होंने भी जी तोड़ कोशिश की। शक्तिशाली दूरबीनोंके लिए बड़े आकारके लेन्सका इस्तेमाल करना जरूरी होता है, क्योंकि शीशेके लेन्सका आकार जितना बड़ा

होगा उतनी ही साफ और स्पष्ट उसमेंसे चीजें नजर आयेंगी। लेन्स ही दूरबीनकी आँख होती है। करोड़ों मील दूरकी वस्तुओंसे आनेवाली प्रकाश-रश्मियोंको एकत्र करके यह उनका बिम्ब स्पष्ट रूपसे हमारी आँखोंमें या फोटो प्लेटपर अंकित करती है।

किन्तु बड़े आकारके लेन्स ढालनेमें अनेक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है, और इतनेपर भी ऐसे लेन्समें किसी-न-किसी प्रकारका दोष आ ही जाता है। फिर, लेन्सवाली दूरबीनोंकी लम्बाई भी बहुत ज्यादा होती है; किसी-किसी दूरबीनकी लम्बाई तो ६०० फुटतक भी पहुँचती है ! अतः इन सब दिक्कतोंसे बचनेके लिए वैज्ञानिकोंने इस क्षेत्रमें अनुसन्धान करना शुरू किया और आखिर इंग्लैण्डके प्रसिद्ध ज्योतिषज्ञ श्री हर्शल्ने एक ऐसी दूरबीन तैयार की जिसमें लेन्सका इस्तेमाल बिल्कुल नहीं किया गया, बल्कि लेन्सकी जगह कटोरीनुमा दर्पण उसने अपनी दूरबीनमें लगाया। अपनी इस अपूर्व शक्तिशाली दूरबीनकी सहायतासे उसने एक नये ग्रह 'यूरैनस'का पता लगाया। उसकी इस खोजने सारी दुनियामें उसकी प्रसिद्धि फैला दी।

बड़े आकारके दर्पण ढालनेमें उतनी कठिनाई नहीं होती, साथ ही दर्पणवाली दूरबीनकी लम्बाई लेन्सवाली दूरबीनकी लम्बाईसे लगभग दो-तिहाई कम होती है। इन्हीं कारणोंसे उच्चकोटिकी सभी वेधशालाओंमें अब दर्पणवाली दूरबीनें ही इस्तेमालमें लायी जाती हैं।

संसारकी सबसे बड़ी दूरबीनें अमेरिकामें आरोपित की गयी हैं। अमेरिकाकी विल्सन वेधशालाकी दूरबीनमें भी एक वृहत्काय दर्पण लगा हुआ है। इसकी तैयारीमें लगभग १६ लाख रुपये खर्च हुए थे। पूरे ९ वर्ष इस दूरबीनको तैयार करनेमें लगे थे। इसके दर्पणकी ढलाई फ्रान्समें हुई थी। इस दूरबीनका कुल वजन लगभग १०० टन है। दूरबीनको धीर-धीर घुमानेके लिए बिजलीसे चलनेवाले मोटर इंजन इस्तेमाल किये जाते हैं। इस दूरबीनके दर्पणपर सालमें दो बार चाँदीकी कलई की जाती है, ताकि दर्पण धुँधला न पड़ने पाये। यह कलई भी



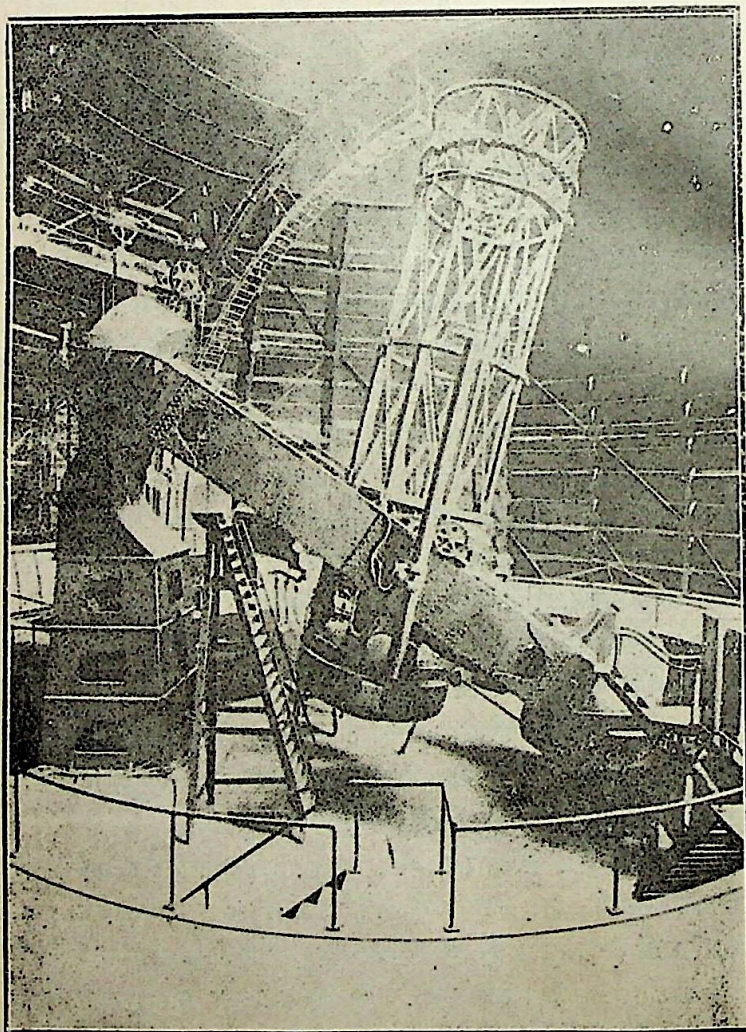
बड़ी-बड़ी मशीनोंकी मददसे की जाती है, क्योंकि इस दर्पणका व्यास १०० इंच है।

इतने बड़े आकारके दर्पणका ढालना सहज काम नहीं है। हृद दर्जेकी सावधानी बरतनेपर भी इस दर्पणकी ढलाईके सिलसिलेमें आठ बार वैज्ञानिकोंको असफल होना पड़ा था।

इतना परिश्रम और धन व्यय करनेके बाद जब माउण्ट विल्सनकी वेधशालामें यह दूरबीन स्थापित की गयी तो ज्योतिर्विदोंकी खुशीका कोई ठिकाना न रहा। इस दूरबीनने ऐसे नक्षत्रोंका पहली बार निदर्शन कराया जो हमारी पृथ्वीसे करोड़ों मीलकी दूरीपर स्थित हैं—इतनी दूर कि वहाँसे प्रकाशकी किरणोंको पृथ्वीतक पहुँचनेमें हजारों वर्ष लग जाते हैं। स्मरण रहे कि आलोक-रश्मियाँ एक सेकेण्डमें १,८६,००० मीलकी दूरी तय कर लेती हैं।

इस विशालकाय दूरबीनसे देखनेपर सुप्रसिद्ध ज्योतिर्विद् डाक्टर हबुलने इस बातका पता लगाया कि विश्वके दूसरे छोरके नक्षत्र बड़ी तेजीके साथ हमसे दूर भागे जा रहे हैं। आकाशगंगासे परे इन नक्षत्रोंके भागनेकी रफ्तार सैकड़ों मील प्रति सेकेण्डतक पहुँचती है। साथ ही यह भी देखा गया है कि जो नक्षत्र हमसे जितनी ही अधिक दूरीपर हैं, वे उतनी ही अधिक तीव्रगतिसे दूर भागे जा रहे हैं। निस्सन्देह इन सुदूरवर्ती नक्षत्रोंकी प्रसरणशीलताका पता जब पहले-पहल वैज्ञानिकोंको चला तो वे बहुत ही आश्चर्यचकित हुए।

स्वभातवः सौर परिवारसे आगे बढ़कर आकाशगंगाके नक्षत्रोंका अध्ययन करनेके बाद जब ज्योतिर्विद् विश्वके दूसरे छोरकी इन नीहारिकाओं (नक्षत्रमण्डल) तक पहुँचा तो उसकी जिज्ञासा तथा उसका कुतूहल और भी बढ़ा। उसने अनन्त अन्तरिक्षमें और भी दूरतक प्रवेश करनेकी ठानी। किन्तु विल्सन वेधशालावाली दूरबीनकी मददसे ऐसा करना सम्भव न था। अतः अमेरिकाके ज्योतिर्विदोंने तय किया कि एक इससे भी बड़ी दूरबीनका निर्माण किया जाय।



विल्सन वेधशाला की १०० इंच व्यासवाली प्रसिद्ध दूरबीन



कैलीफोर्निया प्रान्तकी एक ऊँची चोटी इस वेधशालाके निर्माणके लिए चुनी गयी। इस वेधशाला और दूरबीनके निर्माणके लिए २२ लाख रुपये खर्च किये गये। इस दूरबीनके दर्पणका व्यास २८० इंच चौड़ा है। दुनियाकी इस सबसे बड़ी दूरबीनके दर्पणकी ढलाईमें हद दर्जेकी सावधानीके साथ काम करना पड़ा था। पहली बारकी ढलाईमें काँच ठीक नहीं उतरा, अतः सन् १९३४ में दुबारा ढलाई शुरू की गयी। सैकड़ों कोसकी दूरीसे वैज्ञानिक और विशेषज्ञ यह देखनेके लिए कोर्निंग-ग्लास-वर्क्समें इकट्ठे हुए थे कि ढाँचेमें खोलता शीशा ठीक तौरसे उड़ेल जा सके। छोटे-बड़े हर श्रेणीके ६००० वैज्ञानिक उस दिन कोर्निंगके वर्कशापमें ढलाई देखने गये थे।

उस दिन लगभग दस घण्टेतक ढाँचेमें शीशेका उड़ेलना जारी रहा। फिर उस धिजलीकी भट्टीमें कई महीनेतक दर्पण ठण्डा होता रहा—प्रति दिन इस दर्पणका तापक्रम केवल एक डिग्री नीचे गिराया जाता। क्योंकि काँचकी सिल्लीको ठण्डा करनेमें यदि जल्दी की जाती तो उसमें बल पड़ जाता अथवा हवाके बबूले उसके अन्दर आ जाते; और तब कलई करानेके लिए दर्पणको कोर्निंग वर्कशापसे कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट भेजना था। यह काम बड़ा ही नाजुक था, क्योंकि जरा-सा धक्का लगनेसे दर्पणमें दोष आ जानेका डर था।

अतः इस विशालकाय दर्पणको कैलीफोर्निया भेजनेके लिए एक विशेष ढंगकी स्पेशल ट्रेन बनायी गयी, जिसका फर्श इतना नीचा रखा गया कि काँचकी विशालकाय सिल्लीको रखकर ले जानेमें रास्तेमें पहाड़ी सुरंगोंकी छतसे ट्रेनकी छत टकरा न जाय। इस ट्रेनमें मँहगे दामवाले ट्रिग फिट किये गये ताकि गाड़ीके अन्दर दर्पणको किसी किस्मका धक्का न पहुँचे। स्पेशल ट्रेनके ड्राइवरको आदेश मिला था कि ट्रेनकी चाल २० मील प्रति घण्टेसे अधिक न होने पाये। स्पेशल ट्रेनके आगे-आगे एक इंजिन इसलिए चलता था कि वह देखता चले कि रास्ता ठीक है या नहीं। जिस डिब्बेमें दर्पण रखा गया था उसे नमदे आदिसे इस तरह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri  
 डक दिया गया था कि रास्तेमें उसके तापक्रममें अन्तर न आने पाये ।  
 रास्तेभर इंजीनियर लोग बड़े सशक्त रहे, किन्तु दर्पण सही-सलामत  
 कैलीफोर्निया पहुँच गया ।

कैलीफोर्नियामें एक विशेष कमरेमें काँचकी यह सिल्ली रखी गयी ।  
 कमरेमें एवर कण्डिशनिंग यन्त्रोंकी मददसे एक-सा तापक्रम रखा गया ।  
 कमरेके तापक्रममें अधिकसे अधिक आधी डिग्री फारेनहाइटका अन्तर  
 पड़ता था । अब काँचकी सिल्लीके धरातलको रगड़कर उसे नतोदर  
 बनाना था । सिल्लीका समूचा वजन ५३२ मन था । इसके धरातलको  
 रगड़कर उसमेंसे लगभग ५६ मन काँच खुरचना था । इस क्रियामें  
 पूरी सावधानी बरतनी थी । पूरे एक वर्षतक काँचके घिसनेका काम  
 चलता रहा । इस काममें जल्दी नहीं की जा सकती थी, क्योंकि लगातार  
 तेजीके साथ देरतक घिसनेसे काँचके गर्म होनेका भय था जिसके  
 कारण काँचकी सिल्लीमें अवश्य दोष आ जाता । चार-पाँच मिनटतक  
 यन्त्रों द्वारा घिसाई होनेके बाद पानीसे सिल्ली धो दी जाती और फिर  
 उसे घण्टोंतक छोड़ दिया जाता ताकि सिल्लीका तापक्रम पूर्व अवस्था-  
 पर आ जाय । घिसाई करनेवाले इंजीनियरोंको बड़ी दक्षतापूर्वक अपना  
 काम अंजाम देना था क्योंकि नतोदर धरातलमें एक इंचके लाखवें  
 भागकी भी गलती दर्पणको दूरबीनके लिए बेकार बना देती ।

दर्शक लोगोंको उस कमरेमें जानेकी आज्ञा न थी, क्योंकि ये अपने  
 साथ धूलिकणोंको भीतर ले जाते तो ये धूलिकण दर्पणकी सतहको  
 खराब कर देते । अतः खिड़कीके बाहर काँचके पर्देकी दूसरी तरफसे ही  
 दर्शक लोग इस दर्पणकी घिसाईका काम देख सकते थे ।

किन्तु अभीतक काँचकी सिल्ली निरी काँच ही थी—इसे दर्पणका  
 रूप देनेके लिए इसके धरातलपर कलई करनी थी । कलईके लिए  
 चाँदीकी जगह अल्यूमिनियमका इस्तेमाल किया गया, क्योंकि आकाशकी  
 वायुमें मौजूद तेजाबकी वाष्पसे चाँदी शीघ्र ही धुँधली पड़ जाती  
 है जबकि अल्यूमिनियमकी कलईपर जल्दी असर नहीं पड़ता ।



अल्यूमिनियमकी कलईके लिए एक विशेष विधि का इस्तेमाल किया गया है। काँचकी सिल्ली एक ऐसे कमरेमें रखी गयी जिसमेंसे सबकी सब हवा बाहर निकाल ली गयी थी, अब इस कमरेमें अल्यूमिनियमकी वाष्पको प्रविष्ट कराया गया। अतः काँचकी सिल्लीके धरातलपर अल्यूमिनियमकी एक पतली तह बैठ गयी।

अब इसे ६००० फुट ऊँची माउण्ट पालोमरकी चोटीपर पहुँचाना था। यह काम भी कम नाजुक न था। इसके लिए दस वर्षमें एक सड़क तैयार की गयी जो बल खाती हुई चोटीतक पहुँचती है। इस नवीन दूरबीनके लिए यह ऊँची चोटी इसलिए चुनी गयी थी कि इस ऊँचाईपर आकाशमें न तो धूलिकण या धूँआ पहुँच पाता है और न वादल ही। अतः आकाशके ग्रह-नक्षत्रोंका निरीक्षण भलीभाँति यहाँ किया जा सकता है। जिस ढाँचेपर यह दूरबीन आरूढ़ करायी गयी है उसके निर्माणमें भी इंजीनियरोंको काफी माथापच्ची करनी पड़ी थी। जिस नलीके छोरपर यह दर्पण लगाया गया उसकी लम्बाई ५५ फुट है तथा उसका वजन ११० टन है। इस विशालकाय दूरबीनको घुमाने-फिरानेके यंत्र भी सैकड़ों टन वजनके हैं। इनका परिचालन विद्युत् शक्तिके मोटर इंजिनसे होता है। एक छोटा-सा वच्चा भी दूरबीनको आसानीसे इधर-उधर घुमा सकता है।

ज्योतिषज्ञोंको पूर्ण आशा है कि इस शक्तिशाली दूरबीनकी सहायता से वे लोग वर्तमान ज्योर्विज्ञानकी अनेक समस्याओंको अवश्य सुलझा सकेंगे। अनेक नक्षत्र जो हमारी दृष्टिसे परे हैं, इस यंत्र द्वारा दृष्टिगोचर हो सकेंगे। इस नवीन दूरबीनकी शक्तिका अन्दाज आप अकेले इस बातसे लगा सकते हैं कि यदि पृथ्वी चिपटी होती तो अमेरिकाके तटसे अटलाण्टिकके उस पार लन्दनकी सड़कोंपर दौड़ती मोटरकारको आप स्पष्ट इस यन्त्र द्वारा देख सकते। ४१ हजार मीलकी दूरीपर रखी हुई मोमबत्तीकी लौ भी इस दूरबीनकी सहायतासे स्पष्ट देखी जा सकती है। संक्षेपमें ब्रह्माण्डके अन्दर हमारा दृष्टिक्षेत्र इस दूरबीनकी

बदौलत ५० गुना अधिक बढ़ जायगा और तब हम ग्रह-नक्षत्रोंके बारेमें अनेक नयी बातें मालूम कर सकेंगे। मंगलग्रहकी रेखाओंका ध्यानपूर्वक निरीक्षण करके सम्भवतः हम निश्चयरूपसे बता सकेंगे कि मंगलग्रहमें प्राणी बसते हैं या नहीं।

## फोटोग्राफीके चमत्कार

छोटे-छोटे कस्बोंमें भी फोटोग्राफर अब तसवीर उतारा करते हैं। किन्तु १०० वर्ष पहले फोटोग्राफीका नाम भी कोई नहीं जानता था। इतने थोड़े समयमें फोटोग्राफीने आश्चर्यजनक उन्नति कर ली है। बीसियों भिन्न-भिन्न कामोंमें इसका प्रयोग होने लगा है।

क्या आप जानते हैं कि फोटोग्राफीकी सहायतासे प्रयोगशालामें बैठा हुआ वैज्ञानिक हजारों, लाखों मील दूरके आकाश-पिण्डों—नक्षत्रों—का अध्ययन करता है? इन नक्षत्रोंकी आलोक-रश्मियोंका विश्लेषण कर उनकी फोटो लेकर वैज्ञानिक आपको बताता है कि अमुक नक्षत्रका तापमान इतना है, वहाँ के वायुमण्डलमें आक्सीजन है या नहीं। यही नहीं, वरन् वैज्ञानिक उस फोटोको देखकर आपको यह भी बता सकता है कि अमुक नक्षत्र पृथ्वीसे इतनी दूरीपर है और वह स्थिर है या चलायमान और यदि चलायमान है तो किस रफ्तारसे वह नक्षत्र हमसे दूर हट रहा है। वैज्ञानिक हमें बताता है कि आकाशके अनेक नक्षत्र ऐसे हैं जिनका प्रकाश पृथ्वीतक लाखों, करोड़ों वर्षोंमें पहुँच पाता है।

यह कहना सत्यसे परे न होगा कि अनन्त अन्तरिक्षके बारेमें जानकारी हासिल करनेमें फोटोग्राफी ज्योतिषज्ञोंका प्रमुख साधन रही है। आकाशके रहस्य सुलझानेमें फोटोग्राफीने जितनी सहायता की, उससे किसी अंशमें भी कम सहायता उसने भौतिक विज्ञानकी नहीं की।



साधारण कालेजकी प्रयोगशालाओंमें भी आप जायँ, तो आपको फोटोग्राफीका समुचित प्रबन्ध मिलेगा। पदार्थके मूलतत्त्वोंके रहस्योद्घाटनमें अन्य यन्त्रोंके साथ फोटोग्राफीका प्रयोग भी आवश्यक है। भिन्न-भिन्न तापक्रमपर भिन्न-भिन्न पदार्थोंकी गैसके अणु-परमाणुओंमें किस प्रकारका परिवर्तन होता है, विद्युत्-शक्ति या चुम्बकीय शक्तिका गैसोंपर क्या प्रभाव पड़ता है, इन प्रश्नोंका सही उत्तर पानेके लिए वैज्ञानिक फोटोग्राफीकी शरण लेता है। फोटोग्राफी केवल मनोरंजनकी सामग्री न रहकर आज ज्ञान-प्राप्तिके लिए एक आवश्यक साधन बन चुकी है।

आपने यह तो अनुभव किया ही होगा कि नितान्त अँधेरेमें यदि खोलते हुए पानीसे भरी बटलोई आपके निकट रख दी जाय तो आपको बटलोईकी आँचका अनुभव तुरन्त होगा, यद्यपि आप बटलोईको देख नहीं सकते। भौतिक शास्त्र हमें बताता है कि गरम पदार्थोंसे आँचके रूपमें उष्णता और प्रकाश दोनों निकलते हैं। किन्तु प्रकाशकी इन रश्मियोंको मनुष्यकी आँखें देख नहीं सकतीं। इन आलोक-रश्मियोंको 'इन्फ्रा-रेड' किरणें कहते हैं। लेकिन फोटोका कैमरा इन रश्मियोंको ग्रहण कर सकता है। अतएव अँधेरे कमरेमें यदि आगकी अँगीठीको आप लोहेकी आलमारीमें बन्द कर दें, तो कमरेकी कोई वस्तु आप देख नहीं सकेंगे, किन्तु कैमरे द्वारा उस कमरेकी वस्तुओंकी फोटो ली जा सकती है।

इन्फ्रा-रेड फोटोग्राफीके आविष्कारका प्रयोग पैमाइशके लिए एक बड़े पैमानेपर होने लगा है। आकाशमें धूलिकणोंके कारण अन्य आलोक-रश्मियाँ जन्म हो जाती हैं और दूरकी वस्तुएँ धुँधली दिखाई पड़ती हैं। अतएव साधारण कैमरा दूरकी वस्तुओंकी साफ फोटो नहीं ले सकता। ऐसी परिस्थितियोंमें इन्फ्रा-रेड फोटोग्राफीका प्रयोग होता है। दूरकी वस्तुओंसे आयी हुई इन्फ्रा-रेड रश्मियोंका धूलिकणोंके कारण हास नहीं होता। अतएव इन रश्मियोंकी सहायतासे ली गयी फोटो भी साफ

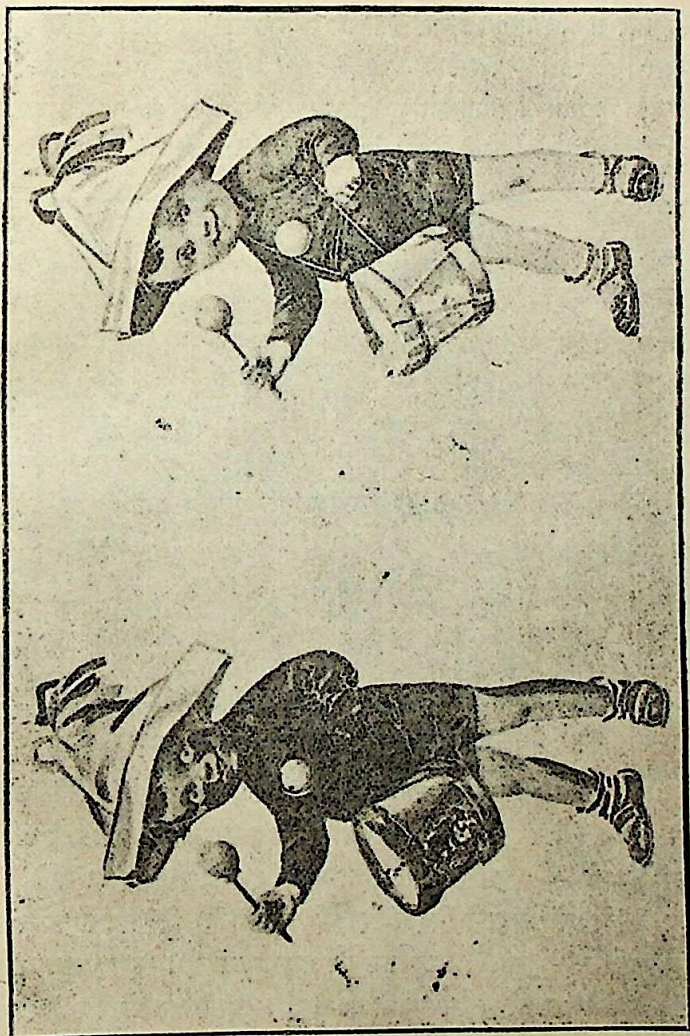
उभड़ती है। वायुयान द्वारा ऊँचे आकाशसे ४०० मीलके घेरेके भूमि-खण्डकी फोटो ली गयी है और उस भूमिखण्डकी एक-एक चीज एकदम साफ उभड़ी है। प्रायः पर्वतीय प्रदेशोंमें पर्वत-श्रेणियोंपर कुहरा छाया रहता है और साधारण रीतिसे ली गयी फोटो धुँधली आती है। अब उनकी फोटो भी इन्फ्रा-रेड रश्मियोंकी सहायतासे ली जाती है, क्योंकि इन्फ्रा-रेडके रास्तेमें कुहरासे किसी भी प्रकारकी बाधा नहीं पहुँचती। चालीस मील दूरकी पर्वत-श्रेणियोंकी फोटो इस रीतिसे ली जानेपर पूर्णतया स्पष्ट दिखती है।

इन्फ्रा-रेडकी भाँति ही अल्ट्रा-वायलेट (पराकासनी) रश्मियाँ भी मनुष्यकी आँखों द्वारा देखी नहीं जा सकतीं। किन्तु फोटोग्राफी प्लेट इन्हें बखूबी अंकित कर सकती है। इन रश्मियोंकी भेदन-शक्ति बड़ी प्रबल होती है।

पुराने दस्तावेजमें जाल किये हुए अक्षरोंकी जाँच उक्त किरणों-द्वारा ली गयी फोटोसे भलीभाँति हो सकती है। जालसाजीके विशेषज्ञके पास अल्ट्रा-वायलेट किरणोंकी फोटोग्राफीका सामान मौजूद रहता है। पुरानी लिखावटको मिटाकर नये नाम लिखकर अकसर जासूस लोग जाली, पासपोर्ट लेकर जर्मन महायुद्धमें एक देशसे दूसरे देशमें जाया करते थे। अल्ट्रा-वायलेट फोटोग्राफीकी सहायतासे उनके इस पङ्क्यन्त्रका भण्डाफोड़ हुआ।

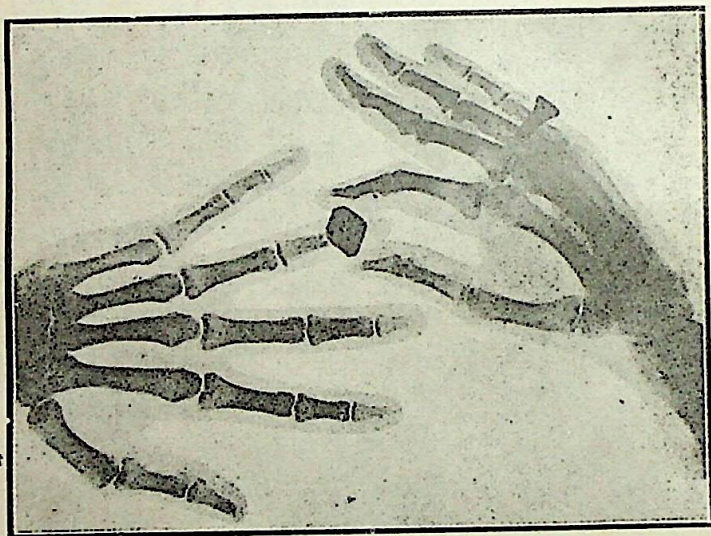
एक्स-रेका नाम भी पाठकोंने सुना होगा। उच्च कोटिके प्रत्येक अस्पतालमें एक्स-रे द्वारा फोटो लेनेका प्रबन्ध है। फेफड़ेमें कोई खराबी है, एक्स-रे फोटोग्राफ आपने लिया और फेफड़ेकी फोटो आपके सामने आयी, मानो फेफड़ा शीशेके बक्समें रखा हो। एक्स-रे आपके मांस और चमड़ेको उसी आसानीसे पार कर सकती हैं जिस प्रकार साधारण आलोक-रश्मियाँ शीशेकी दीवारोंको पार कर जाती हैं। युद्धमें घायल व्यक्तियोंके शरीरके भीतर बन्दूककी गोलियाँ और बमके टुकड़े घुस गये थे—एक्स-रे फोटोग्राफ लेकर डाक्टरने ठीक पता लगाया कि किस





दिनके प्रकाशमें ली गयी फोटो (ऊपर) और वही अल्ट्रा-वायलेट  
रश्मियोंके प्रकाशमें ली गयी (नीचे)

स्थानपर ये विजातीय द्रव्य हैं और तदुपरान्त आपरेशन करके उन्हें बाहर निकाला। एक्स-रेकी ईजादके पहले ऐसी दशामें डाक्टर अपना अन्दाज लगाता और तीन-तीन, चार-चार बार आपरेशन करनेके पश्चात् इन विजातीय वस्तुओंको निकालनेमें सफल होता।



अँगुलियोंका एक्स-रे द्वारा लिया गया चित्र

एक्स-रे फोटोग्राफका प्रयोग बड़े-बड़े कल-कारखानोंमें होने लगा है। रेलके इंजिन और मोटरगाड़ियोंके लिए इस्पातकी धुरी जब ढाली जाती है, तो प्रायः धुरीके भीतर कभी-कभी हवाके बुलबुले आ जाते हैं, और यद्यपि धुरी बाहरसे निर्दोष दिखाई पड़ती है, किन्तु उस स्थानपर जहाँ हवाका बुलबुला है, वह कमजोर पड़ जाती है। इस कारण उस धुरीके प्रयोगमें खतरेकी सम्भावना रहती है। इसी खतरेसे बचनेके लिए ढालनेके पश्चात् धुरीकी एक्स-रे द्वारा फोटो ली जाती है और इस तरह उस बबूलेका तुरन्त पता लग जाता है।

कैमरेकी आँख हमारी आँखोंसे कहीं तेज होती है। दूरान्मिष्टकी



दौड़में फर्स्ट या सेकेण्ड कौन आया था या दोनों बराबर आये, इसका निर्णय करना बड़ा कठिन हो जाता है। ऐसे अवसरोंपर अब कैमरेकी सहायता ली जाने लगी है। आँखें जहाँ धोखा खा जाती हैं, कैमरा वहाँ काम देता है। आसमानसे बिजली गिरती है—इस घटनाकी फोटो भी तेज रफ्तारवाले कैमरेसे ली गयी है। फोटोसे पता चलता है कि ऊँची-ऊँची दीवारोंपर बिजली एक ही क्षणके भीतर प्रायः दो-दो, तीन-तीन बार आक्रमण करती है। विद्युत्की कौंधकी फोटो विचित्र शकलें दिखाती है, कभी त्रिशूल तो कभी लम्बी टेढ़ी-मेढ़ी रेखा।

बारूदके धड़केकी फोटो भी ऐसे ही शीघ्र गतिवाले कैमरोंसे ली गयी है। एक सेकेण्डके हजारवें भागमें जो घटना होती है, उसका भी अलग चित्र यह कैमरा ले सकता है। अच्छे-अच्छे खिलाड़ियोंके करतबकी फोटो एक सेकेण्डमें १००० की गतिसे ली जानेपर उनकी हरकतका वारीकीसे निरीक्षण किया जा सकता है। नये खिलाड़ी ऐसे फोटोग्राफसे बड़ा लाभ उठा सकते हैं। उदाहरणके लिए, ऊँची कूदमें कूदते समय चैम्पियन अपने हाथ-पैरोंको किस प्रकार समेटता है, ऊपर जाते समय उसके हाथ कहाँ रहते हैं और नीचे आते समय अपने पैरोंको वह किस तरह जमीनपर टेकता है—इन क्रियाओंकी अलग-अलग फोटो ली जा सकती है और उसके ढंगकी नकल उत्साही खिड़ाली सफलतापूर्वक कर सकता है। कैमरेकी तेज आँखें एक क्षणके लाखवें अंशमें होनेवाली घटनाओंको भी अंकित कर लेती हैं।

इन्हीं शीघ्र गतिवाले कैमरोंकी बदौलत आज दिन आप सिनेमाकी जीती-जागती तसवीरोंका भी आनन्द उठाते हैं। सिनेमा-भवनके चित्र-पटपर तसवीरें चलती-फिरती दिखाई पड़ती हैं, किन्तु वास्तवमें एकके बाद दूसरी अनेक तसवीरें आँखोंके सामने तेजीसे गुजरती हैं और आपकी आँखें इन भिन्न-भिन्न तसवीरोंको अलग नहीं देख पातीं वरन् एक तसवीरका चित्र आपके दृष्टि-पटलसे मिटने नहीं पाता कि दूसरा चित्र आपके सामने आ जाता है, इस तरह तमाम अलग-अलग फोटो

आपको चलती-फिरती तसवीरोंकी तरह एक ही लम्बी फिल्म-सी जान पड़ती है।

निस्सन्देह फोटोग्राफीने आधुनिक सभ्यताके लिए अनेक साधन जुटाये हैं, किन्तु उसके लिए अभी समस्याएँ अधूरी पड़ी हुई हैं। रंग-बिरंगी वस्तुओंकी फोटो अभी सन्तोषजनक सफलताके साथ नहीं ली जा सकी है। 'कोडक' आदि फोटोग्राफिक कम्पनीकी प्रयोगशालाओंमें प्राकृतिक रंगकी फोटोग्राफीको सुलभ और सम्भव बनानेके लिए निरन्तर प्रयोग किये जा रहे हैं और आशा की जाती है निकट भविष्यमें हमारी ली हुई फोटो भी रंग और सौन्दर्यमें एक निपुण कलाकारकी कृतियोंसे किसी कदर कम न उतरेगी।

## रेडियो समाचारपत्र

वह दिन अधिक दूर नहीं जान पड़ता जब प्रति दिन हमारे घरपर ही रेडियो सेटसे दैनिक अखबार भी छपने लगेंगे। अमेरिकामें सैकड़ों व्यक्तियोंने दैनिक अखबार खरीदना बन्द कर दिया है। रातको जब ये लोग आरामकी नींद सोते रहते हैं, रेडियो द्वारा परिचालित फैसिमाइल मशीनमें देश-विदेशके ताजे समाचार अंकित होकर छोटे-छोटे अखबारके रूपमें तैयार हो जाते हैं। सुबह बिस्तरेसे उठे, मशीनोंमेंसे अपना अखबार निकाला और पाँच मिनटके अन्दर देश-देशान्तरकी खबर पढ़ ली, एकदम ताजा।

विज्ञानका यह नूतनतम आविष्कार बड़े कामका है। कुछ ही वर्षोंमें रेडियो सेटकी तरह ये भी सभी शहरोंमें देखनेको मिल सकेंगे। रेडियोका यह करिश्मा संसारको चकित कर देनेवाला है। न किसी सम्पादककी जरूरत, न कम्पोजीटरकी और न यन्त्रोंकी गड़गड़ाहट ही



नींदमें किसी तरहकी बाधा पहुँचाती है। रातको सब काम शान्तिपूर्वक होता रहता है।

फैसिमाइल बहुत कुछ टेलीविजनके सिद्धान्तोंपर ही काम करता है। विद्युत् शक्तिके द्वारा छपे मैटर, लाइन, फोटो, रेखाचित्र आदि रेडियो-तरंगोंके सहारे ब्राडकास्ट किये जाते हैं। इन विद्युत् संकेतोंको आपकी फैसिमाइल मशीन ग्रहण करती है। मशीनमें लगे हुए पर्चेपर ठीक उसी समय छपाईका काम आरम्भ हो जाता है।

फैसिमाइल एकदम नयी ईजाद हो, सो बात नहीं है। लगभग ३० वर्ष पहले सन् १९२४ में अमेरिकाके एक वैज्ञानिकने इस तरहकी एक मशीन ईजाद की थी जिसकी सहायतासे मौसिम सम्बन्धी चार्ट और नकशे रेडियो द्वारा ब्राडकास्ट किये जा सकते थे—साधारण तस्वीरें भी इस मशीन द्वारा अटलाण्टिकके उस पार भेजी गयी थीं। किन्तु यह मशीन आकारमें बड़ी थी, साथ ही इसके परिचालनमें बड़ी-बड़ी दिक्कतोंका सामना करना पड़ता था। फिर ये मशीनें महँगी भी बेहद पड़ती थीं। वर्षोंके अथक परिश्रमके उपरान्त इन मशीनोंमें आश्चर्यजनक उन्नतिका समावेश वैज्ञानिकोंने किया है।

आजकी फैसिमाइल मशीन सर्वथा निर्दोष है। इसके परिचालनमें कोई झंझट नहीं। मामूली रेडियो सेटका आकार; बिजलीके प्लग लगाये, स्विच खोला, बस मशीन काम करने लगी। आप आरामसे सो जाइये, मशीन स्वयं संसारके कोने-कोनेसे आयी हुई खबरोंको छाप लेगी। अच्छे अखबारकी तरह मोटे-मोटे शीर्षक, स्थान-स्थानपर चित्र, सब कुछ कायदेके साथ। फैसिमाइल मशीनका दाम भी पहले जैसा ऊँचा नहीं है। लगभग ५०० रुपयेमें अब एक अच्छी फैसिमाइल मशीन खरीदी जा सकती है। इस तरह साधारण स्थितिका आदमी भी फैसिमाइल मशीन घरमें रख सकता है। इस मशीनके परिचालनमें भी लगभग उतना ही खर्च पड़ता है जितना रेडियो सेटका इस्तेमाल करनेमें। चाहे ५० सी० क्रेण्ट हो या ३० सी०, दोनोंसे ही फैसिमाइलका काम चल

सकता है और यदि एकदम देहातमें फैसिमाइलसे काम लेनेकी जरूरत हो तो बैटरीकी सहायतासे इसे परिचालित कर सकते हैं। इस तरह फैसिमाइल सर्वप्रिय बन सकता है।

यों तो कई प्रकारकी फैसिमाइल मशीनें बनी हैं, किन्तु फिक्चमाइल उन सबमें श्रेष्ठ है। इस मशीनमें ब्राडकास्टिंगके लिए जो कुछ समाचार या चित्र भेजना होता है, उसकी प्रति मशीनमें लगा दी जाती है। अब मशीनमें लगे हुए एक लैम्पसे तीक्ष्ण प्रकाशकी एक पतली किरण इस प्रतिलिपिपर एक सिरेसे दूसरे सिरेतक एक-एक लाइन करके दौड़ायी जाती है। यह काम बिजलीके चुम्बक द्वारा होता है। इस खास क्रियाको स्कैनिंग कहते हैं। यह चमकती हुई रोशनी जब कागजपर पड़ती है तो यह उससे टकराकर फोटो-इलेक्ट्रिक सेलपर गिरती है। अब इसी सेलसे विद्युत्-तरंगें उत्पन्न होकर रेडियोकी लहरोंकी सहायतासे आकाशमें चारों ओर फैलती हैं। यदि आप खुर्दबीनकी सहायतासे किसी समाचारपत्रमें छपे चित्रकी परीक्षा करें तो आप देखेंगे कि यह चित्र छोटे-बड़े अनेक बिन्दुओंसे बना हुआ है। इनमेंसे कुछ तो अधिक काले होते हैं और कुछ कम, और कुछ तो एकदम हलके रंगके। चित्रमें जहाँ काला रंग दिखाना होता है, वहाँ ये बिन्दु एकदम पास-पास रहते हैं। अतः इस प्रकारके चित्रपर जब तेज रोशनी पड़ती है तो प्रत्येक बिन्दुसे प्रकाश समान रूपमें प्राप्त नहीं होता। जो बिन्दु अधिक काला हुआ, उससे रोशनी भी कम मात्रामें प्राप्त होगी और इससे उत्पन्न हुई फोटो-इलेक्ट्रिक विद्युत्-तरंगें भी हलकी ही होंगी। अतः चित्रके शोडके अनुसार रेडियो-तरंगें भी हलकी या तेज होंगी।

रिसीविंग स्टेशनपर फैसिमाइलमें रेडियो-तरंगें प्रवेश करती हैं; फिर ये साधारण विद्युत्-तरंगोंमें परिवर्तित होती हैं, और इसके द्वारा चुम्बकसे एक लम्बी भुजा परिचालित की जाती है। जिस समय रेडियो-तरंग प्रबल होती है, यह भुजा कारबन लगे हुए कागजपर जोरसे चोट करती है और जब रेडियो-तरंग धीमी होती है तो यह भुजा भी



कागजपर धीरेसे गिरती है। इस तरह रिसीविंग स्टेशनपर फैसिमाइलमें इस कागजपर छोटे-छोटे बिन्दु बन जाते हैं—और ये बिन्दु ब्राडकास्ट किये चित्रके बिन्दुओं की तरह ही गहरे तथा हलके शोडके होते हैं; अतः उसी चित्रका यहाँ पुनर्निर्माण हो जाता है।

किसी-किसी फैसिमाइल रिसीवरमें तो यह प्रबन्ध है कि जिस समय रेडियो-तरंगें रिसीवरमें प्रवेश करती हैं एक पतली नलीसे स्याही-की बौछार निकलती है जो सामनेके कागजपर पड़ती है। यदि रेडियो-तरंग तेज हुईं तो यह बौछार भी तेज होगी और कागजपर गहरे रंगका बिन्दु बन जायगा अतः रेडियो-तरंगके शोडके अनुसार इस मशीनमें भी चित्र बन जाते हैं—मानो विद्युत् शक्तिवाला चित्रकार अपनी बारीक तूलिकासे चित्र तैयार करता है।

फैसिमाइलमें प्रयोग करनेके लिए एक विशेष प्रकारके कागजकी आवश्यकता होती है—एक सप्ताहके कागजका खर्च करीब १५ सेण्ट है। अमेरिकामें यह कागज आसानीसे बाजारमें मिल जाता है। इसी कागजपर एक-एक पंक्ति करके पूरा समाचार छप जाता है। फैसिमाइलकी सफलतामें अब किसीको सन्देह नहीं रहा। इसका भविष्य निस्सन्देह उज्ज्वल है।

अभी फैसिमाइलका प्रयोगात्मक काल चल रहा है। अमेरिकामें रातके ११-१२ बजेतक तो साधारण रेडियोके गाने, व्याख्यान आदिके प्रोग्राम होते हैं, फिर १२ बजे रातसे ६ बजे सुबहतक फैसिमाइलके समाचारपत्र ब्राडकास्ट किये जाते हैं। ठीक आधी रातको फैसिमाइल मशीनें काम करने लगती हैं और ये नवीन ढंगके समाचार छपने लगते हैं।

फैसिमाइल प्रोग्राम ब्राडकास्ट करनेवाले प्रत्येक स्टेशनके अन्तर्गत ५० फैसिमाइल रिसीवर आजकल हैं। जिन घरोंमें ये मशीनें लगी हैं, वे प्रति दिन अपनी रिपोर्ट ब्राडकास्टिंग स्टेशनमें भेजते हैं ताकि यह मालूम हो सके कि सब कहीं रेडियो संकेत ठीक तौरसे पहुँच रहे हैं या

नहीं। इस फैसिमाइल ब्राडकास्टिंगको दिन-ब-दिन निर्दोष बनानेका प्रयत्न किया जा रहा है। इस समय भी फैसिमाइल प्रणाली द्वारा छपे समाचारपत्रोंमें कई प्रकारकी चीजोंका समावेश रहता है। तांजी खबरें, चित्रावली, बाजार दर, ऋतु सम्बन्धी खबरें, व्यंग्य-चित्र तथा सचित्र विज्ञापन, सभी कुछ आप इन अखबारोंमें पायेंगे।

फैसिमाइलके कुछ उत्साही प्रवर्तकोंने प्रायः यह दिखानेका प्रयत्न किया है कि यह नवीन आविष्कार साधारण समाचारपत्रों और रेडियोंका स्थान शीघ्र ही ले लेगा। किन्तु ध्यानपूर्वक देखनेपर इस कथनमें अतिशयोक्ति नजर आती है। सबसे पहले फैसिमाइल मशीनके दामका ही प्रश्न ले लीजिये। एक मशीनके लिए आपको ५००) देने पड़ते हैं और इतने ही दाममें एक अच्छा दैनिकपत्र आपको ८ सालतक बराबर मिल सकता है। तब फैसिमाइल मशीन, जो आपको केवल खबरें और संक्षिप्त नोट ही दे सकती है, जनसाधारणके लिए अधिक आकर्षक कैसे बन पायेगी ?

फिर आधुनिक कालके समाचारपत्र केवल समाचारोंका ही संकलन थोड़े करते हैं—वरन् इन पत्रोंमें प्रमुख राजनीतिज्ञोंके लम्बे-लम्बे व्याख्यान, पत्रकारोंकी सम्मत्तियाँ और जाँच कमेटियोंकी रिपोर्ट भी प्रति दिन ही छपती रहती हैं। इनकी जानकारी रखना प्रत्येक नागरिकके लिए आवश्यक होता है। फैसिमाइलपर छपनेवाले पत्रोंको यह सब सामग्री लभ्य नहीं है और न इतनी अधिक पठन-सामग्री फैसिमाइल द्वारा छप ही सकती है; क्योंकि सम्प्रति फैसिमाइल मशीनोंकी छापनेकी रफ्तार बहुत कम है। लेटर-पेपरके साइजका अखबार छापनेके लिए एक फुट लम्बे पर्चेपर एक घण्टा समय लग जाता है। अतः जबतक फैसिमाइल मशीनोंकी रफ्तार नहीं बढ़ती तबतक फैसिमाइल-पद्धतिसे छपे संवादपत्रोंका आकार आधुनिक अखबारोंके आकारतक नहीं पहुँच सकता। प्रत्येक दैनिक पत्रके लिए संवाददाताओं, सम्पादकों तथा विशेष लेखकोंकी एक बड़ी संख्या काम करती है, किन्तु फैसिमाइल प्रोग्राम



प्रसारित करनेके लिए प्रत्येक ब्राडकास्टिंग स्टेशनको इतने ज्यादा विशेषज्ञ नहीं मिल सकते। अतः जितनी उत्तम चीजें प्रेसमें छपा पत्र आपको दे सकता है उस श्रेणीकी चीजें अभी दो-चार वर्षोंतक फैसिमाइलके पत्रमें आपको नहीं मिलेंगी। हाँ, यदि ब्राडकास्टिंग स्टेशनोंने आपसमें एका करके फैसिमाइल पत्रका संघ कायम कर लिया तब अवश्य इनके पत्र भी समाचारपत्रोंके मुकाबलेमें आ सकते हैं।

जो कुछ भी हो, इतना तो स्पष्ट ही है कि फैसिमाइल पत्र उन लोगोंको बहुत ही पसन्द आयेंगे जिन्हें लम्बे-लम्बे लेख पढ़नेकी फुर्सत नहीं रहती। उन्हें मोटे-मोटे शीर्षक, घटनाओंके फोटोग्राफ और देश-विदेशकी सनसनीखेज खबरें चाहिये—और फैसिमाइल अखबारोंमें इस प्रकारकी चीजें बहुतायतसे मिलेंगी।

फैसिमाइल मशीनोंसे रेडियो सेटको भी कोई खतरा नहीं, क्योंकि रेडियोका प्रोग्राम इतना विस्तृत और आकर्षक ढंगका होता है कि फैसिमाइल पत्र उसका मुकाबला किसी भी हालतमें नहीं कर सकते।

## टेलीविजन या दूरदर्शन

ता० २५ जनवरी सन् १९२६ को इंग्लैण्डमें एक इंजीनियर जॉन बेयर्डने रायल इन्स्टीट्यूटके सदस्योंके सामने टेलीविजनका सर्वप्रथम प्रयोग किया था। इस प्रयोगमें उसने कठपुतलीके चेहरेका चित्र रेडियोकी तरंगोंकी सहायतासे बगलवाले कमरेमें बैठे हुए वैज्ञानिकोंके सामने निर्माण किया था। विज्ञानके लिए यह एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण घटना थी। मानव-इतिहासमें आजके दिन पहली बार दूरदर्शन सम्भव हो सका था। प्राचीनकालसे लेकर आजतक लोगोंने दूरदर्शनकी कल्पनाएँ की हैं किन्तु इस कल्पनाको कार्यरूपमें परिणत करनेका श्रेय आधुनिक

युगको ही मिल सका। सैकड़ों-हजारों वर्षके स्वप्नको जॉन वेयर्डने सत्य कर दिखाया।

वेयर्डके प्रयोगके बाद तो टेलीविजनने दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति की और आज वह प्रयोगशालाकी दीवारोंके भीतर सीमित न रहकर जन-साधारणकी चीज हो रहा है। सिनेमा और वायरलेसकी तरह टेलीविजन भी हमारे रोजमर्राके जीवनका एक अंग बनने जा रहा है।

टेलीविजन द्वारा घर बैठे हम दूरकी घटनाओंका सामनेके पर्देपर अवलोकन करते हैं, ठीक उसी प्रकार जिस तरह रेडियो सेट द्वारा हजारों मील दूरका गाना सुननेमें हम समर्थ होते हैं। टेलीविजन सेट भी देखनेमें रेडियो सेट जैसे जँचते हैं किन्तु जब टेलीविजन सेटके ऊपरका ढक्कन उठाते हैं तो वहाँ एक दर्पण लगा दिखाई देता है। दूरस्थ घटनाएँ इसी दर्पणमें अंकित होती रहती हैं। नूतन ढंगपर बने सेटमें तो चित्र अभिवर्धित होकर बड़े आकारके स्क्रीनपर भी प्रकट होते हैं।

यह तो सभी जानते हैं कि रेडियो द्वारा शब्दोंको दूर भेजनेके पहले शब्द-तरंगोंको माइक्रोफोन द्वारा विद्युत्-तरंगोंमें बदलना होता है। अब ये ही विद्युत्-तरंगें रेडियो-तरंगोंपर आरुढ़ कराकर हजारों-लाखों मील दूर भेजी जाती हैं और निर्दिष्ट स्थानपर रेडियो सेटपर विद्युत्-तरंगें रेडियो-तरंगोंसे अलग कर ली जाती हैं, और टेलिफोन-रिसीवरमें ये शब्द-तरंगोंमें पुनः परिवर्तित हो जाती हैं। टेलीविजनकी भी करीब-करीब यही कहानी है। शब्द-तरंगोंके स्थानपर यहाँ प्रकाश-रश्मियोंका प्रयोग करना पड़ता है। साथ ही माइक्रोफोनकी तरह एक ऐसे यन्त्रको भी हमें स्टेमालमें लाना होता है जिसकी सहायतासे प्रकाश-रश्मियाँ विद्युत्-तरंगोंमें परिवर्तित की जा सकें। इस स्थानपर यह बता देना अनुपयुक्त न होगा कि दूरस्थ स्थानोंको बिना किसी सहायके रेडियो-तरंगोंको ही हम भेज सकते हैं, ऐसा करनेमें रेडियो-तरंगोंकी शक्तिका अधिक हास नहीं होता। साथ ही इनपर केवल विद्युत्-तरंगों ही आरुढ़ करायी जा सकती हैं; मानों रेडियो-तरंग घोड़ेकी सवारी है और उसपर



केवल ईसाई सवार हो सकता है। जिस किसीको हम दूर भेजना चाहें, हमें पहले उसे ईसाई बनाना पड़ेगा और तब उसे इस घोड़ेपर आरुढ़ कराना होगा। शब्द हो या प्रकाश, दोनोंको ही आरुढ़ करानेके पहले विद्युत्-तरंगोंमें परिणत करना होगा।

टेलीविजनके प्रारम्भिक कालमें सेलिनियम धातुका प्रयोग प्रकाशको विद्युत्-तरंगोंमें परिणत करनेके लिए किया गया था, किन्तु सेलिनियममें अनेक त्रुटियाँ थीं और लोग निरन्तर इस खोजमें थे कि कोई ऐसी धातु मिल जाय जिससे उपर्युक्त काम हम निकाल सकें। फोटोइलेक्ट्रिक सेलके आविष्कारने इस मुश्किलको भी हल कर दिया। यह सेल एक शीशेके ग्लोबका बना होता है जिसके भीतर दीवारके एक भागपर सोडियम धातुकी एक पतली तह चढ़ाई होती है। प्रकाशकी किरणें जब इस दीवारपर पड़ती हैं तो सोडियममेंसे विद्युत्कणों (एलेक्ट्रान) की एक तेज बौछार निकलने लगती है—अतएव सेलमें एक विद्युत्-धारा प्रवाहित होने लगती है। प्रकाशकी किरणें जितनी ही तेज होंगी, विद्युत्-धारा भी उतनी ही तेज होगी। प्रकाशके चढ़ाव-उतारके अनुसार विद्युत्-धारामें भी चढ़ाव-उतार उत्पन्न होता है।

अब हम चित्र और दृश्यके टेलीवाइज करनेके तरीकोंपर आते हैं। किसी भी तसवीरको हम नन्हें-नन्हें बिन्दुओंकी मददसे बना सकते हैं। सस्ते समाचारपत्रोंके चित्र बड़े-बड़े बिन्दुओंसे बने होते हैं अतएव वे साफ और बढ़िया नहीं उतरते। बिन्दु जितने ही छोटे होंगे, तसवीर उतनी ही बढ़िया होगी। टेलीवाइज करते समय ऐक्टरके चेहरेपर प्रकाशकी एक तेज किरण डाली जाती है। यह किरण तीव्र गतिसे ऐक्टरके चेहरेपर एक सिरेसे दूसरे सिरेतक समानान्तर रेखाओंमें दौड़ जाती है। इस क्रियाको 'स्कैनिंग' कहते हैं। इस प्रकार किसी खास लहमेपर चेहरेके केवल एक बिन्दुपर प्रकाश रहता है और इसी बिन्दुसे प्रकाश निकलकर फोटोएलेक्ट्रिक सेलपर पड़ता है। चूँकि चेहरेके सभी भागोंसे प्रकाश समान रूपमें नहीं प्राप्त होता, अतएव फोटोएलेक्ट्रिक सेलकी विद्युत्-

तरंगमें उसी तरहका चढ़ाव-उतार मौजूद रहता है। अब रेडियो ब्राडकास्टकी तरह इन विद्युत्-तरंगोंको रेडियो-तरंगोंपर आरुढ़ करा देते हैं।

रिसीविंग स्टेशनपर विद्युत्-तरंगोंको रेडियोसे अलग कर प्रकाशमें पुनः परिवर्तित करना पड़ता है। यह एक कठिन क्रिया है। फोटो-एलेक्ट्रिक सेल प्रकाशको विद्युत्-तरंगमें बदल सकता है, किन्तु विद्युत्-तरंगोंको प्रकाशमें बदलना इसके लिए सम्भव नहीं। इस समस्याको हल करनेके लिए वैज्ञानिकोंको काफी दिनोंतक माथापच्ची करनी पड़ी। नियान-लैम्प (बल्ब) के जालका प्रयोग किया गया। चढ़ाव-उतार-वाली विद्युत् तरंगें रिसीविंग स्टेशनपर ठीक उसी क्रम और रफ्तारसे, जिस प्रकार प्रकाश-रेडिम्याँ ब्राडकास्टिंग स्टेशनपर ऐक्टरके चेहरेपर डाली जाती हैं, इन नियान-लैम्पोंमें प्रवाहित की जाती हैं। एक-एक करके ये बल्ब प्रकाशके साथ क्षणभरके लिए जल उठते हैं। इस प्रकार एक सिरेसे दूसरे सिरेतक सभी लैम्प एक-एक करके प्रकाश देते हैं।

मनुष्यकी आँखोंकी यह विशेषता है कि चक्षु-पटलपर बनी हुई प्रतिमाएँ कुछ देरतक बनी रहती हैं। दृश्य गायब हो जानेके बाद  $\frac{1}{10}$  सेकण्ड-तक आपकी आँखोंमें उस दृश्यका चित्र कायम रहता है। अतएव यदि भिन्न-भिन्न चित्र एक-एक कर आपके सामने आते जायँ और उनके बीचका अन्तर  $\frac{1}{10}$  सेकण्डसे अधिक न हो तो आपको एक चित्र दूसरे चित्रसे मिला हुआ जान पड़ेगा। टेलीविजनमें टेलीवाइज करते समय और रिसीविंग स्टेशनपर चित्रके पुनर्निर्माणमें प्रकाशकी किरण एक-एक बिन्दुसे गुजरती हुई पूरी तसवीरके ऊपरसे होकर  $\frac{1}{10}$  सेकण्डमें एक बार गुजर जाती है। अतएव जिस समय चित्रके एक-एक बिन्दु बनते हैं आपकी आँखोंसे चित्रके शुरूका भाग अभी मिटने नहीं पाता कि उसका अन्तिम छोर भी बन जाता है। आपको ऐसा जान पड़ता है मानो पूरी तसवीर आप सामने देख रहे हैं।

नियान-लैम्पके बने चित्र पहले बड़े भड़े हुआ करते थे। अमेरिकन



वैज्ञानिकोंने अब वर्षोंके अथक परिश्रमके उपरान्त टेलीविजनके चित्रोंके पुनर्निर्माणकी एक बढ़िया रीति ढूँढ़ निकाली है। इसमें कैथोड-रे ट्यूबका प्रयोग होता है। कैथोड-रे ट्यूबमें विद्युत्-कणोंकी एक बारीक किन्तु तेज बौछार हमें मिलती है। रिसीविंग स्टेशनपर प्राप्त हुए चढ़ाव-उतारवाली विद्युत्-तरंगोंको कैथोड-रे ट्यूबमें प्रविष्ट करा देते हैं। अब इन्हीं तरंगोंकी शक्तिके अनुसार विद्युत्-कणोंकी रफ्तार भी घटती-बढ़ती



पेढ़पर बड़े साइजका टेलीविजन चित्र  
टेलीविजन सेटका चित्र वास्तवमें बीचके काँचपर छोटे साइजका बनता है। बायीं ओर रखे गये नतोदर दर्पण द्वारा इसका परिवर्द्धित बिम्ब सामनेके पेढ़पर बना है।



है। साथ ही विद्युत्-कणोंकी उस तीक्ष्ण रश्मिको शीशेके परदेपर, जिसपर मसाला पुता होता है, उसी रफ्तारसे समानान्तर रेखाओंमें धुनाते हैं जिस रफ्तारसे टेलीवाइज करते समय प्रकाशकी रश्मियाँ चित्रपर धुमायी जाती हैं। इन दोनों क्रियाओंमें पूर्ण सामञ्जस्यका होना नितान्त आवश्यक है। दोनोंकी रफ्तारमें यदि १००० सेकेण्डका भी अन्तर पड़ गया तो क्रिया-कराया सारा खेल चौपट। विद्युत्-कणोंकी बौछार जब सामनेवाले पर्देपर पड़ती है, तो मसाला चमक उठता है। इस तरह पूरे चित्रको एक-एक बिन्दु करके ३५ सेकेण्डके अन्दर अंकित कर देते हैं। एक सेकेण्डके अन्दर २५ बार तसवीरका निर्माण होता है ! ऐसा करनेके लिए चुम्बकके जरिये कैथोड-रे (विद्युत्-कणकी बौछार) को प्रति मिनट बीस मीलको रफ्तारसे तसवीरके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक दौड़ाना पड़ता है।

युद्धके दौरानमें टेलीविजनके क्षेत्रमें अनेक सैद्धान्तिक अनुसन्धान किये गये हैं। अमेरिकाने इस दिशामें विशेष प्रगति हासिल की है। फलस्वरूप पहलेकी भाँति अब टेलीविजनके चित्र धुँधले नहीं होते। चटकीले, स्पष्ट और काले तथा सफेद रंगमें अच्छे फोटोग्राफकी तरह ये चित्र टेलीविजन सेटपर उतरते हैं। घरके टेलीविजन सेटमें चित्र १८ × २४ इंचके पर्देपर देखे जा सकते हैं। सिनेमाघरोंमें टेलीविजनके चित्र १५ × २० फुटके पर्देपर दिखलाये जा रहे हैं। अमेरिकामें टेलीविजनके प्रतिपादकोंने एक पंचवर्षीय योजना भी बनायी है जिसके अनुसार ५ वर्षके अन्दर ५०० टेलीविजन ब्राडकास्टिंग स्टेशन अमेरिकामें तैयार हो जायँगे ताकि दो-तिहाई अमेरिकन जनता टेलीविजनका कार्यक्रम प्राप्त कर सके। इस योजनाको सफल बनानेके लिए ये लोग इंजीनियर, अभिनेता, लेखक, कैमरामैन, दृश्यनिर्माता तथा वेशभूषा सजानेवाले आदिका सहयोग प्राप्त कर रहे हैं।

टेलीविजन द्वारा मनोरंजनके कार्यक्रमके लिए ऐसे कलाकारोंको ढूँढ़ना पड़ेगा जो संगीतके अच्छे ज्ञाता होनेके अतिरिक्त रूपवान् भी हों।



फिर वे रेडियो प्रोग्रामकी तरह ब्राडकास्टके समय अपनी पाण्डुलिपिकी सहायता भी न ले पायेंगे। उन्हें पहलेसे ही अपना पार्ट कण्ठस्थ कर लेना होगा। अनेक रेडियो कलाकार, जिन्हें ईश्वरने रूपवान् नहीं बनाया है, टेलीविजन कार्यक्रममें भाग न ले सकेंगे। टेलीविजन अभिनेत्रियोंको अपने बनाव-शृंगारके लिए सर्वथा नवीन साधनोंका सहारा लेना पड़ता है। हॉठपर नीले रंगका प्रयोग किया जाता है। वस्त्रोंके रंगके चुनावमें भी विशेष रूपसे सतर्क होना पड़ता है। फिर टेलीविजन द्वारा ब्राडकास्ट करनेमें सिनेमा फिल्मकी भाँति इस बातकी गुंजाइश नहीं रहती कि अभिनेताका पार्ट यदि सही नहीं उतरा तो दृश्य दुबारा प्रस्तुत (शूट) किया जाय। इस दृष्टिसे तो टेलीविजन ब्राडकास्ट ठीक रेडियो जैसा है। एक बार जो चीज टेलीविजन कैमरेके सामने आ गयी, वह निर्देशकोंके हाथसे निकलकर दर्शकोंतक पहुँच ही जायगी। अतः टेलीविजनके कार्यक्रमके रिहर्सल कई बार अच्छी तरहसे दुहरा लिये जाते हैं ताकि प्रोग्राम जिस वक्त चालू हो उस समय अभिनेता किसी तरहकी भूल न कर बैठे।

टेलीविजनका भविष्य निस्सन्देह उज्ज्वल है। निकट भविष्यमें शिक्षा तथा विज्ञापन आदिके लिए भी टेलीविजनका इस्तेमाल बड़े पैमानेपर होगा, यह निश्चित है। अमेरिकामें इन दिनों भी बड़ी-बड़ी फर्में विज्ञापनके लिए अपने सामानका प्रदर्शन टेलीविजन द्वारा करती हैं। उच्चकोटिके विद्वान् भी टेलीविजनपर गूढ़ प्रश्नोंपर विचार करते हैं, जिसे सहस्रों मनुष्य सुनते हैं तथा उन्हें बोलते हुए स्पष्ट देख भी पाते हैं।

टेलीविजनसे निस्सन्देह हमारे सामाजिक जीवनमें महत्वपूर्ण परिवर्तनोंका समावेश करेगा। रेडियो सेटकी ही भाँति घर-घरमें टेलीविजन सेट मौजूद होंगे। शामको घरके सब लोग इकट्ठे होकर टेलीविजन सेटके पर्देपर छोटे-छोटे ड्रामे देख और सुन सकेंगे। सम्भवतः सैकड़ों मील दूरकी घटनाएँ भी वे सेटके पर्देपर तत्काल ही देखेंगे। टूनामेण्ट

आदिके दृश्य भी तत्काल ही टेलीवाइज किये जा सकेंगे, ताकि लोग घरके अन्दर ड्राइंग रूममें बैठे-बैठे दूरके दृश्योंका आनन्द उठा सकें।

युद्धके पहले टेलीविजन ब्राडकास्टिंग हाउससे ब्राडकास्ट की गयी रेडियो-तरंगें अधिकसे अधिक ५० मीलकी दूरीतक ग्रहण की जा सकती थीं, किन्तु अब अमेरिकन इंजीनियरोंने ब्राडकास्टिंगके लिए एक नयी स्कीम बनायी है जिसके अनुसार टेलीविजनके प्रोग्राम ऊर्ध्वाकाशमें ६ मीलकी ऊँचाईपर उड़ते हुए स्टैटोस्फियर-वायुयानों द्वारा



टेलीविजन का 'एमिट्रान' कैमरा ट्रालीपर फिट किया रहता है ताकि बाहरके दृश्य—टूर्नामेण्ट आदिको सरलतापूर्वक वहाँ जाकर टेलीवाइज कर सकें।

ब्राडकास्ट किये जा सकेंगे। इस सिलसिलेमें अमेरिकन कम्पनी वेस्टिंग-हाउस-एलेक्ट्रिक कारपोरेशनने अभी हालमें १४ ऊर्ध्वाकाश-वायुयानोंकी सहायतासे टेलीविजन ब्राडकास्टके प्रयोग किये हैं। इस कम्पनीके इंजीनियरोंका कहना है कि ऊर्ध्वाकाशसे ब्राडकास्ट करनेमें शक्तिका व्यय भी अपेक्षाकृत कम होता है। हिसाब लगाकर उन्होंने यह भी दिखाया कि धरतीपर ब्राडकास्टिंग स्टेशन बनाकर उतनी दूरतक टेली-



विजन प्रोग्राम पहुँचानेपर प्रति घण्टे १३ हजार डालरका खर्च पड़ता है जब कि स्ट्रैटोस्फियर वायुयान द्वारा ब्राडकस्ट करनेपर प्रति घण्टा यह खर्च केवल एक हजार डालर पड़ता है। इस ढंगसे वायुयानके अन्दर तीन व्यक्ति वायुयानके चलाने तथा उसकी देख-रेखके लिए होंगे और ६ इंजीनियर ब्राडकास्टिंग यन्त्रके परिचालनके लिए।

अन्य क्षेत्रोंमें भी टेलीविजनकी उपयोगिताको वैज्ञानिकोंने पहचाना है। उदाहरणके लिए, अनुभवी सर्जन यदि हृदयका आपरेशन करता है तो उस कमरेमें अधिकसे अधिक पाँच या छ विद्यार्थी ही आपरेशनकी क्रियाको देखकर आपरेशनका सही तरीका सीख सकते हैं। किन्तु टेलीविजनकी सहायतासे बड़े हालमें पर्देपर आपरेशनकी सम्पूर्ण क्रिया तीन-चार सौ विद्यार्थियोंको सुगमतासे दिखलायी जा सकती है। अमेरिकाके कुछ बड़े अस्पतालोंके आपरेशन-थियेटरमें तो स्थायी रूपसे टेलीविजनके यन्त्र फिट कर दिये गये हैं ताकि महत्वपूर्ण आपरेशनकी क्रियाएँ टेलीविजन द्वारा पर्देपर विद्यार्थियोंको दिखलायी जा सकें।

परमाणु-विभंजनके प्रयोगोंमें भी टेलीविजन द्वारा प्रयोगके खतरेसे अपनेको बचाया जा सकता है। उदाहरणके लिए, रश्मिविकीरक पदार्थोंके साथ प्रयोग करनेमें इस बातका खतरा सदैव बना रहता है कि उन पदार्थोंसे विकीरित होनेवाली रेडियो-एक्टिव किरणें शरीरांगोंपर पड़कर घातक रोग न उत्पन्न कर दें। किन्तु टेलीविजन यन्त्र द्वारा प्रयोगस्थलके यन्त्रोंका निरीक्षण दूरसे किया जा सकता है तथा नियन्त्रक-यन्त्रोंसे उनका परिचालन भी दूरसे कर सकते हैं। वास्तवमें परमाणु-विभंजनके प्रयोगोंमें टेलीविजन द्वारा यन्त्रोंके दूरसे परिचालनकी व्यवस्था अत्यन्त वांछनीय है।

उद्योग-व्यवसायके क्षेत्रमें टेलीविजन महत्वपूर्ण योग दे सकता है। कुछ ही दिन हुए अमेरिकाकी एक औद्योगिक प्रदर्शनीमें दिखलाया गया था कि किस प्रकार टेलीविजनकी सहायतासे दूरसे ही इंजीनियर-भारी बोझ उठानेवाले क्रेनका परिचालन कर सकता है। यद्यपि क्रेन,

इंजीनियरकी दृष्टिसे परे रहता है किन्तु क्रैनका चित्र टेलीविजन यन्त्रके पर्देपर हर क्षण उपस्थित रहता है अतः दूर बैठा हुआ इंजीनियर कल-पुर्जाकी सहायतासे क्रैनका समुचित रूपसे परिचालन करनेमें समर्थ होता है ।

इस सिलसिलेमें एक रोचक घटनाका वर्णन करना अनुपयुक्त न होगा । सन् १९५१ में ब्रिटेनका एक पनडुब्बी जहाज समुद्रमें डूब गया । इस जगह समुद्रकी गहराई बहुत अधिक थी अतः यह सम्भव न था कि गोताखोर स्वयं डुबकी लगाकर उस पनडुब्बी जहाजके अन्दरके सामान तथा कलपुर्जेको उखाड़कर ऊपर ले आते । इसलिये इस कार्यको पूरा करनेके लिए टेलीविजनकी सहायता ली गयी । टेलीविजन कैमरे-के चारों ओर तीव्र प्रकाश फेंकनेवाली सर्चलाइट लगी थी ताकि गहरे पानीके अन्दरके दृश्यका बिम्ब टेलीविजन द्वारा पानीकी सतहपर रखे यन्त्रके पर्देपर दीख सके । इस प्रकार ऊपरसे ही क्रैन आदिका परिचालन करके पनडुब्बी जहाजका सामान उठाया जा सका ।

इस ढंगके टेलीविजन यन्त्र द्वारा अतुल जलराशिके नीचे पाये जाने-वाले वनस्पति तथा जीवोंका चलचित्र भी सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं । जीव वैज्ञानिकोंका कहना है कि टेलीविजन यन्त्र द्वारा गहरे जलमें पाये जानेवाले जीवों तथा पौधोंके बारेमें वे शोध ही अनेक महत्त्वपूर्ण बातोंकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे । आकाशके सुदूर नक्षत्रोंकी फोटो उतारनेके लिए भी टेलीविजन-युक्त कैमरे काममें लाये जायँगे । और तब उन मन्द प्रकाशवाले नक्षत्रोंके बिम्ब भी प्राप्त किये जा सकेंगे जिनकी फोटो साधारण कैमरेसे प्राप्त नहीं की जा सकती ।

टेलीविजन द्वारा रंगीन वस्तुओंके चित्र भी उनके स्वाभाविक रंगमें प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न किये जा रहे हैं । अवश्य इस क्षेत्रमें अभी बहुत कुछ काम बाकी पड़ा है किन्तु रंगीन टेलीविजनके भविष्यमें अनेक महत्त्वपूर्ण सम्भावनाएँ निहित हैं । उदाहरणके लिए, शल्य-चिकित्सामें सर्जन जिन शरीरांगोंका आपरेशन करता है, यदि उनका टेलीविजन



चित्र ठीक स्वाभाविक रंगमें ही पर्दे पर दिखलाया जा सके तो निस्सन्देह शल्य-चिकित्साके विद्यार्थी ऐसे चित्रसे अधिक अनुभव-ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। गहरे जलमें विचरनेवाले जीव-जन्तुओंके चित्र भी उनके स्वाभाविक रंगमें ही टेलीविजन द्वारा प्राप्त किये जा सकेंगे।

अन्तमें टेलीविजन यन्त्रोंमें कुछ सुधारोंका समावेश करके इससे बढ़िया शक्तिशाली खुरदवीनका काम भी ले सकते हैं। तब इसकी सहायतासे अत्यन्त सूक्ष्म कणोंके बिम्ब स्पष्ट रूपसे देखे तथा गिने जा सकते हैं। आशा की जाती है कि तब अनेक रवेदार पदार्थोंकी गठन-रचनाके बारेमें भी महत्त्वपूर्ण जानकारी हम सहज ही प्राप्त कर सकेंगे।

## रेडियम

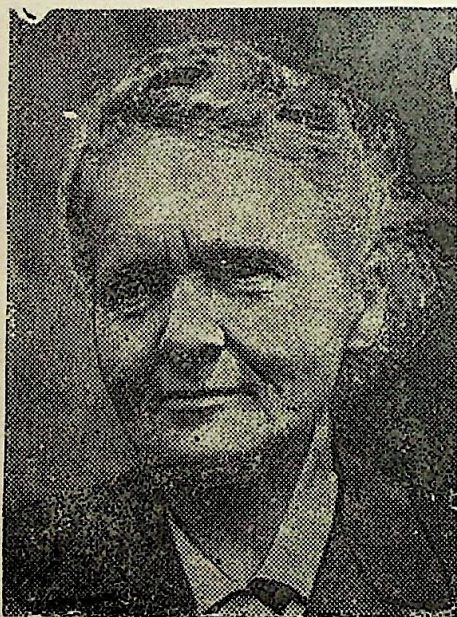
‘अवश्य मैंने अपने प्रयोगमें गलती की है’—रेडियम धातुका पता लगानेवाली प्रसिद्ध वैज्ञानिक महिला मैडम क्यूरीके मुँहसे ये शब्द उस प्रयोगके समय निकले थे जिसके जरिये उसने रेडियमका पहली बार पता लगाया था। उसने अपने प्रयोगको दस बार दुहराया, फिर बीस बार और तब भी प्रयोगका नतीजा वही निकला जो पहली बार निकला था। अब मैडम क्यूरीको विश्वास हो गया कि अवश्य कोई नयी धातु मेरे प्रयोगमें गड़बड़ डाल रही है।

एक नया पदार्थ— नयी धातु ! वैज्ञानिकके लिए इससे बढ़कर उत्साहकी क्या बात हो सकती थी कि उसने एक ऐसे नवीन मूल पदार्थको ढूँढ़ निकाला जिसका पता संसारमें किसीको न था। मैडम क्यूरीने अपनी इस नयी सम्भावनाका जिक्र जब तत्कालीन वैज्ञानिकोंके सामने किया तो उन्होंने जबाब दिया—‘अरे तुमने अपने प्रयोगमें कहीं गलती की होगी, जाओ तनिक सावधानीके साथ अपने प्रयोगकी नाप-जोख फिर करो।’



किन्तु मैडम क्यूरी भलीभाँति जानती थी कि उसके प्रयोगम गलतीकी गुंजाइश कहीं नहीं है। अतः वह इस बातपर कटिबद्ध हो गयी कि वह प्रयोग करके इस नयी धातुको अलग प्राप्त करेगी और उसे वैज्ञानिकोंके सामने रखेगी ताकि वे उसकी भलीभाँति परीक्षा करके देख सकेंगे कि वह प्रयोगशालाके अन्य तमाम मूल पदार्थोंसे भिन्न है।

वह अपने अटूट साहस और अध्यवसायको लेकर अपनी पुनर् प्रयोगमें जुट गयी। उसके पतिने भी, जो स्वयं विज्ञानके प्रोफेसर थे,



मैडम क्यूरी

उसकी सहायता की। दोकी जगह चार-चार आँखों और हाथोंने प्रयोगमें मदद दी और शीघ्र ही यह नवीन धातु रेडियमके रूपमें संसारके सामने रखी गयी। समस्त विज्ञान-जगत्में मैडम क्यूरीकी प्रसिद्धि फैल गयी। फलस्वरूप दो और वैज्ञानिकोंके साथ मैडम क्यूरीको भी नोबेल प्राइज सन् १९०३ में मिला और फिर सन् १९११ में उसे अकेले नोबेल प्राइज मिला।

इसकी चर्चा हमने आगे पृष्ठ ७७ में की है।

फ्रांसकी साइन्स एकेडेमीके सदस्योंने दाँततले उँगली दबायी कि इस साधारण श्रेणीकी नवयुवतीमें इतनी योग्यता कहाँसे आ गयी। मैडम क्यूरी कुछ ही साल पहले अपनी मातृभूमि पोलैण्डसे राजनीतिक



कारणोंसे भागकर फ्रान्समें शरणार्थ आयी थी। सारवान यूनिवर्सिटीमें भौतिक विज्ञानकी प्रयोगशालामें उसे बोलत साफ करनेका काम दिया गया था। प्रोफेसर लिपमैनने इस महिलाकी प्रखर बुद्धि देखकर उसे रिसर्च करनेके लिए उत्साहित किया और अपने सहायक प्रोफेसरकी रिसर्चमें सहायता करनेको नियुक्त कर दिया। अनुकूल वातावरण पाकर शीघ्र ही मैडम क्यूरीकी प्रतिभाका पूर्ण विकास हुआ। अनवरत परिश्रमके बलपर उसने एक नवीन पदार्थ रेडियमका पता लगाया।

रेडियम आधुनिक विज्ञानके लिए एक अपूर्व देन साबित हुआ। रेडियमके परमाणुओंमेंसे हमेशा विद्युत्-कणोंकी एक तीव्र बौछार निकला करती है। संसारकी कोई शक्ति इस क्रियामें दखल नहीं दे सकती— निरन्तर अबाध रूपसे रेडियमके परमाणुओंसे ये विद्युत्-कण निकलते ही रहते हैं और इस क्रियाके फलस्वरूप रेडियमके परमाणु अन्य पदार्थोंके परमाणुओंमें परिवर्तित हो जाते हैं। किन्तु नियत समयमें रेडियमके परमाणु एक नियत मात्रामें ही परिवर्तित होते हैं, अतः परिवर्तित परमाणुओंकी मात्रा देखकर यह अन्दाज लगाया जा सकता है कि कितने कालमें यह परिवर्तन हुआ होगा। इस रीतिसे पृथ्वीके गर्भमें बन्द रेडियमके परिवर्तित कणोंकी जाँच करके पृथ्वीकी आयुका पता लगाया गया है। वैज्ञानिकोंने पृथ्वीकी आयु दो अरब वर्ष निर्धारित की है।

भौतिक विज्ञानकी अनेक गुत्थियोंको भी रेडियमने सुलझाया है। एक्स-रे और रेडियमकी ईजादके पहले वैज्ञानिकोंका खयाल था कि संसारकी सभी चीजें लगभग ९० मूल पदार्थोंके संयोगसे बनी हैं— और ये मूल पदार्थ एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न होते हैं। प्रत्येक मूल पदार्थ परमाणुओंसे बना होता है। एक ही पदार्थके तमाम परमाणु एक-से होते हैं; किन्तु वे अन्य पदार्थोंके परमाणुओंसे भिन्न होते हैं। प्रत्येक मूल पदार्थके परमाणुओंकी अपनी निजकी विशेषताएँ होती हैं। ये परमाणु किसी भी तरीकेसे छिन्न-भिन्न नहीं किये जा सकते और न एक पदार्थके परमाणु दूसरे पदार्थके परमाणुओंमें परिवर्तित ही किये

जा सकते हैं ।

१९वीं शताब्दीके आखीरतक वैज्ञानिकोंका यही विश्वास था । किन्तु जब उन्होंने रेडियमका अध्ययन किया तब उन्होंने आश्चर्यचकित होकर देखा कि रेडियमके परमाणु कालान्तरमें छिन्न-भिन्न होकर सामूली सीसेके कणोंमें निरन्तर नियमपूर्वक परिवर्तित होते हैं । निस्सन्देह यह जानकारी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी । विज्ञानको पहली बार एक मूल पदार्थका दूसरे मूल पदार्थमें परिवर्तित होनेका दृष्टान्त मिला । पारस पत्थरका स्वप्न मानो सच होनेको आया । क्योंकि यदि रेडियमके अणु सीसेके अणुओंमें परिवर्तित हो सकते हैं तो बहुत सम्भव है कि अनुकूल परिस्थितियोंमें लोहेके टुकड़े स्वर्णमें परिवर्तित किये जा सकें ।

चुनांचे वैज्ञानिकोंने इस क्षेत्रमें बड़े मनोयोगपूर्वक अनुसन्धान करना आरम्भ किया और शीघ्र ही प्रयोगशालाके अन्दर उन्होंने मूल पदार्थोंके परमाणुओंको एक-दूसरेमें परिवर्तित करनेमें कामयाबी भी हासिल कर ली । किन्तु परमाणुओंको छिन्न-भिन्न करनेके लिए विद्युत्-कणोंकी तीव्र बौछारकी जरूरत होती है और तीव्र-गतिके विद्युत्-कणोंके परिचालनमें काफी धन व्यय करना होता है । इसी कारण व्यवसायके दृष्टिकोणसे ये प्रयोग अभी पूर्ण रूपसे सफल हुए नहीं कहे जा सकते । वैज्ञानिकोंका खयाल है कि शीघ्र ही वे कम खर्चमें परमाणु-परिवर्तनका प्रयोग पूरा कर सकेंगे और तब शायद सोना, चाँदी, प्लेटिनम सरीखी महँगी धातुओंके दाम भी आजकी अपेक्षा बहुत नीचे गिर जायँगे । लोहे, ताँबे और अल्युमिनियमकी भाँति सोना-चाँदी भी अमीर-गरीब सबको लभ्य हो सकेगा ।

रेडियमने चिकित्सा-शास्त्रमें अपने लिए विशेष-महत्त्व प्राप्त कर लिया है । कैंसर (नासूर) ऐसे भयानक चर्म-रोगोंके लिए चिकित्सा-शास्त्रमें कोई प्रभावशाली औषध ही न थी । रेडियमने इस भारी कमीकी पूर्ति की, किन्तु इस अमूल्य औषधके लिए वैज्ञानिकों और डाक्टरोंको महँगे दाम चुकाने पड़े । रेडियमका जिन दिनों पहली



वार पता चला, अनेक उत्साही व्यक्तियोंने उसके गुणोंका पता लगानेके लिए प्रयोग करना शुरू किया। उन बेचारोंको क्या पता था कि रेडियमसे विद्युत्-कणोंकी जो बौछार बाहरकी ओर नित्य निकल करती है, वह उनके शरीरकी त्वचापर घातक असर पैदा करेगी। नतीजा यह हुआ कि किसीकी उँगलीका मांस गल गया, तो किसीके चेहरेका रंग थिगड़ गया और कोई रेडियम-किरणोंके आघातसे रोगी बनकर इस दुनियासे कूच कर गया।

इन बलिदानोंके बाद डाक्टरोंने रेडियम-किरणोंकी शक्तिको ठीक-ठीक पहचाना। नपी-तुली मात्रामें नासूरके ऊपर थोड़े समयतक कई सप्ताहतक रेडियम-किरणोंको डालनेसे नासूर अच्छा हो जाता है। रेडियम चिकित्सामें सावधानीकी जरूरत बहुत ज्यादा हुआ करती है। रोगीका शरीर कितनी तेज रेडियम किरणें सह सकता है, इस बातकी जानकारी पहले डाक्टर हासिल कर लेता है, क्योंकि उचित मात्रासे अधिक तेज किरणें नासूरके घावको और भी गहरा बना देती हैं।

रेडियम बहुत महँगी धातु है। एक माशा रेडियमका दाम साढ़े तीन लाख रुपया सन् १९२६ तक था। फिर सन् १९२८ में रेडियमका दाम कुछ नीचे गिरा, क्योंकि कनाडा, बेलजियम कांगो और कोलोरेडोमें रेडियमकी खानोंके अस्तित्वका पता लगा। रेडियमका भाव प्रति माशा दो लाख रुपयेपर अबतक टिका हुआ है। प्राकृतिक अवस्थामें रेडियम मिट्टी, बालू आदिके साथ मिला हुआ पाया जाता है। एक माशा रेडियमके लिए चार हजार टन रेडियम मिली हुई मिट्टीके साथ वैज्ञानिकोंको माथापच्ची करनी होती है।

रेडियमके ही समान चिकित्साके गुण रखनेवाली एक धातु मेसोथीरियम होती है जो प्रति माशा ९००० रुपये के भावसे बिकती है। रेडियमकी अपेक्षा सस्ता होनेके कारण यूरोपके अस्पतालोंमें प्रायः मेसोथीरियम ही कैंसरके इलाजके लिए इस्तमाल होता है। प्रयोग-शालाओंमें जाँच करनेसे मालूम हुआ है कि ५॥ हजार टन भारतीय

प्राकृतिक रेडियमकी महँगीके कारण अनेक वैज्ञानिकोंने कृत्रिम रेडियम तैयार करनेका भी प्रयत्न किया है। लेनिनग्रेड रेडियम इन्स्टिट्यूटके प्रोफेसर मिस्टोवस्कीने सन् १९३५ में एक नया यन्त्र कृत्रिम रेडियम तैयार करनेके लिए बनवाया। इस यन्त्रमें संसारका सबसे बड़ा चुम्बक लोहा लगा हुआ है। दो करोड़ वोल्टकी विजलीसे यह यन्त्र संचालित होता है। इस प्रयोगशालाके अन्दरकी हवा भी पूर्णतया विद्युन्मय होती है। यदि प्रयोगके समय आप इस कमरेमें जायँ तो आपके सिरके बाल विद्युन्मय हवाके प्रभावसे खड़े हो जायँगे। 'न्यूट्रान' कणोंकी एक पैनी किरण मोममें घुली हुई हाइड्रोजन गैसपर आघात करती है और इस आघातके कारण हाइड्रोजनके परमाणुओंमेंसे विद्युत्-कण ठीक रेडियम-किरणोंकी तरह फूट-फूटकर निकलते हैं। इन विद्युत्-कणोंके रास्तेमें नमक रख देते हैं। ये कण नमकके अणुओंमें चिपक-से जाते हैं। कमरेके बाहर निकलनेपर इन नमकके टुकड़ोंसे ठीक रेडियमकी तरह विद्युत्-कणोंकी बौछार बाहरको निकलती है।

इस प्रयोगशालामें काम करनेवाले वैज्ञानिक एक छोटी-सी कोठरीमें बैठकर प्रयोगमें काम आनेवाले यन्त्रोंका संचालन करते हैं। इस सीसे की कोठरीमें मोटे स्फटिक काँचकी खिड़की लगी हुई है, इसी खिड़कीके रास्तेसे ये अपने यन्त्रोंका निरीक्षण करते हैं। इस तरह रेडियम-किरणोंके घातक प्रभावसे ये लोग अपनी रक्षा कर सकते हैं।

इंग्लैण्डके एक अस्पतालमें कुल १५ माशा रेडियम मौजूद है। अन्य किसी देशके अस्पतालमें इतना अधिक रेडियम नहीं है। यूरोपके साधारण कोठिके अस्पतालोंमें एक या दो माशा रेडियम रखा रहता है। एक माशेके सौवें या हजारवें भाग रेडियमको भी ग्राइवेट प्रैक्टिस करनेवाले डाक्टर इस्तेमाल करते हैं। छोटे-छोटे ट्यूबमें अन्य पदार्थोंके साथ मिला कर रेडियमके इन नन्हें जर्रोंको रखते हैं।

स्वर्णकी अपेक्षा २४००० गुनी मँहँगी धातु रेडियमकी खबरदारी



भी बड़ी होशियारीके साथ करनी होती है । रेडियमके टुकड़ोंके खो जानेमें आर्थिक हानि तो है ही, साथ ही आसपासके लोगोंकी जानका भी खतरा है, क्योंकि यदि किसीकी आस्तीनमें रेडियमका टुकड़ा फँसा रह गया या उसके कोटके दामनमें वह अटक गया तो उसके शरीरपर निरन्तर रेडियम-किरणोंकी बौछार पड़ेगी और उसपर अपना घातक असर कर दिखायेगी । खोये हुए रेडियमको ढूँढ़ निकालनेके लिए कई प्रकारके विद्युत् यन्त्र बनाये गये हैं । रेडियमसे निकलनेवाले विद्युत्-कणोंके सम्पर्कमें आते ही इस विद्युत्-यन्त्रमें हरकत पैदा होती है और फौरन मालूम हो जाता है कि आसपासमें ही रेडियम अवश्य छिपा हुआ है ।

न्यूयार्कके अस्पतालमें एक रेडियमका टुकड़ा, जो चाँदीकी नलीमें रखा हुआ था, खो गया । कूड़ेके साथ चाँदीकी नली कूड़ा जलानेवाली भट्टीमें चली गयी । वहाँ और कूड़े-कर्कटके साथ वह भी जला दी गयी । जब रेडियमकी खोज शुरू हुई तो कूड़ेखानेसे राख बाल्टियोंमें उठा-उठाकर इस यन्त्रके पास लायी जाने लगी । जब तेईसवीं बाल्टी पास लायी गयी तो इस विद्युत् यन्त्रमें फौरन ही हरकत हुई—बस रेडियमका टुकड़ा तेईसवीं बाल्टीकी राखमेंसे निकाल लिया गया । चाँदीकी नली पिघल चुकी थी ।

एक और अस्पतालमें एक बार रेडियम खो गया । कूड़ेखानेमें विद्युत् यन्त्रकी मददसे रेडियमकी तलाश की गयी, किन्तु वहाँपर भी नहीं मिला । लेकिन विद्युत्-यन्त्रमें रह-रहकर हरकत होती थी । पासमें बहुतसे सूअर घूम रहे थे और जब वे उस यन्त्रके नजदीक आ जाते तभी यन्त्रमें हरकत होती । बस डाक्टरने फौरन उन २०० सूअरोंको दस-दसकी टोलीमें बाँट दिया और प्रत्येक टोलीकी जाँच की । इस लम्बी जाँचके उपरान्त उस सूअरको पकड़ा जो कूड़ेके साथ रेडियमकी नली खा गया था । फौरन उस सूअरका पेट फाड़कर उसकी आँतोंमेंसे रेडियमकी नली निकाल ली गयी ।

अणु-परमाणुओंकी दुनियाके रहस्योद्घाटनके लिए भी रेडियमने अद्भुत साधन अपने विद्युत्-क्राणोंके रूपमें हमें दिया है। रेडियममें निहित शक्तिको अपने वशमें लानेकी बात भी वैज्ञानिक सोच रहे हैं। जिस दिन उनका यह स्वप्न सही उतर आयेगा, अवश्य ही मनुष्यके हाथमें अपरिमित शक्तिका भण्डार आ जायेगा।

## विज्ञानका नोबेल पुरस्कार

किसी भी वैज्ञानिकके लिए नोबेल पुरस्कार प्राप्त करना सर्वोच्च सम्मानका कारण समझा जाता है। यह पुरस्कार एक लाख रुपयेका होता है। हमारे देशके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक सर चन्द्रशेखर वेंकटरामन्को भी यह पुरस्कार सन् १९३० में प्रदान किया गया था। देशके सभी पढ़े-लिखे लोगोंने उस अवसरपर अपने उत्साहका प्रदर्शन किया था, क्योंकि श्री वेंकटरामन्के महत्त्वपूर्ण अनुसन्धानोंने भारतका मस्तक वैज्ञानिक जगत्में एक बार फिर ऊँचा कर दिया है। अन्य देशवालोंने विस्फारित नेत्रोंसे देखा कि गुलामीकी जंजीरोंसे जकड़ा हुआ भारत भी चोटीके वैज्ञानिक पैदा कर सकता है।

स्वीडनके बम और डायनामाइटके कारखानेके मालिक अल्फ्रेड नोबेलने पिछली शताब्दीमें संसारके भिन्न-भिन्न देशोंके हाथ बम और डायनामाइट बेचकर कई करोड़ रुपये पैदा किये थे। मृत्युके कुछ दिनों पूर्व उसने सोचा कि यह अपरिमित धन मैंने विनाशकारी चीजोंको बेचकर कमाया है, अब किसी उपायसे इसका उपयोग रचनात्मक चीजोंके लिए करना चाहिये। उसने सन् १८९६ में वसीयत लिख डाली और ५० लाख डालर एक ट्रस्ट कमेटीके सुपुर्द कर दिये। इसी रकमके सूदसे हर साल साहित्य, भौतिक विज्ञान, रसायन-विज्ञान, जीव-विज्ञान,



औषधि-विज्ञान और शान्तिके लिए पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। नोबेल पुरस्कार प्रदान करनेका निर्णय विशेषज्ञोंकी कमेटी द्वारा स्टाकहोममें किया जाता है। प्रत्येक विषयके लिए भिन्न-भिन्न देशोंसे विशेषज्ञ चुने जाते हैं। कभी-कभी इस कमेटीके सदस्य भारतसे भी चुने जाते हैं। यदि कमेटी सोचती है कि किसी वर्ष कोई महत्वपूर्ण अनुसन्धान नहीं हुआ है, तो उस साल उस क्षेत्रमें नोबेल पुरस्कार किसीको नहीं ७०

#### विज्ञानके चमत्कार

दिया जाता और यदि किसी विशेष क्षेत्रमें कई वैज्ञानिकोंने किये हों, तो उस सालका नोबेल पुरस्कार उन सबके बीच वितरण कर दिया जाता है।

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरको भी साहित्यका यह पुरस्कार मिल चुका है। नोबेल पुरस्कार पुरस्कार-विजेताको आसपासके साथियोंसे ऊँचा उठाकर अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंचपर बिठा देता है। समस्त संसारमें उसका यश फैल जाता है, क्योंकि लोग जानते हैं कि नोबेल पुरस्कारके निर्णायक बिना देश, जाति या राष्ट्रका ख्याल किये पूर्ण निष्पक्षताके साथ अपना निर्णय देते हैं। निरी योग्यता और गुण ये ही दो चीजें वे देखते हैं।

पिछले ४० वर्षोंमें अठारह भिन्न-भिन्न देशोंके १८३ व्यक्तियोंको पुरस्कारके रूपमें लगभग डेढ़ करोड़ रुपये प्रदान किये जा चुके हैं। सबसे पहले सन् १९०१ में एक्स-रेकी खोजके उपलक्ष्यमें प्रो० रॉज़नको भौतिक विज्ञानका पुरस्कार मिला था। पुरस्कार-विजेताओंमें कई महिलाएँ भी हैं। पोलैण्डकी प्रसिद्ध महिला वैज्ञानिक मैडम क्यूरीको तो दो बार नोबेल पुरस्कार मिला था (पृष्ठ ६३ देखो); फिर क्यूरीके ही परिवारमें यह पुरस्कार सन् १९३५ में आया। इस बार मैडम क्यूरीकी सुपुत्री ऑइरीन क्यूरी और जामाता फ्रेडरिक जोलियो इस पुरस्कारसे सम्मानित किये गये। १९११ में रेडियोके जन्मदाता मार्कोनीको इस अद्भुत आविष्कारके उपलक्ष्यमें भौतिक विज्ञानका नोबेल पुरस्कार मिला। कई जर्मन वैज्ञानिकोंको भी रसायन तथा भौतिक विज्ञानके नोबेल पुरस्कार

मिला चुके हैं। एक जर्मन वैज्ञानिकको नोबेल पुरस्कार कृत्रिम कर्पूर तैयार करनेके उपलक्ष्यमें मिला था। इसी तरह एक और वैज्ञानिकको तेलसे कृत्रिम मक्खन तैयार करनेकी तरकीब मालूम करनेके लिए नोबेल पुरस्कार मिला। विटैमिन (पोषक तत्वों) के सम्बन्धमें भी नयी-नयी जानकारीयाँ प्राप्त करनेके उपलक्ष्यमें अनेक व्यक्तियोंको ओपधि-विज्ञानके नोबेल पुरस्कार प्रदान किये गये हैं।

पिछले कई वर्षोंसे भौतिक विज्ञानका नोबेल पुरस्कार अणु-परमाणु सम्बन्धी अनुसन्धानोंपर दिया जा रहा है, क्योंकि सम्प्रति विज्ञानके सामने पदार्थकी वास्तविकताका प्रश्न हल करनेके लिए प्रस्तुत है। सन् १९०७ में सर जे. जे. थामसनको पदार्थके सबसे छोटे कण—एलेक्ट्रॉन—की खोजके लिए नोबेल पुरस्कार मिला था। सन् १९३९में भौतिक विज्ञानका पुरस्कार अणु-परमाणुओंके रहस्योद्घाटनके सम्बन्धमें प्रो० लारेन्सको प्रदान किया गया है।

प्रोफेसर लारेन्स कैलीफोर्नियाकी जगद्विख्यात यूनिवर्सिटीमें अनुसन्धानका काम करते हैं। उक्त यूनिवर्सिटीने समय-समयपर चोटीके वैज्ञानिक पैदा किये हैं, प्रोफेसर लारेन्सके अनुसन्धानका महत्त्व समझनेके लिए आवश्यक है कि पदार्थके क्षुद्रतम अवयवोंका हाल भी हम समझें।

यदि हम किसी पदार्थके छोटे-छोटे टुकड़े करें तो ये टुकड़े धीरे-धीरे छोटे होते जायँगे, यहाँतक कि आखिरमें वह पदार्थ भुरभुरा पाउडर बन जायगा। किन्तु पाउडरका जरा भी तोड़ा जा सकता है और यहाँतक नन्हें जरेँ प्राप्त किये जा सकते हैं कि वे खाली आँखोंसे दिखाई भी न पड़ें। इन्हें देख सकनेके लिए खुर्दबीनोंकी सहायता लेनी पड़ती है। प्राचीन कालमें लोगोंका खयाल था कि यदि बारीक औजार मिल सकें, तो पदार्थके अवयवोंको काटकर निरन्तर छोटा किया जा सकता है, यहाँतक कि हम ऐसे नन्हें जरेँतक भी पहुँच सकते हैं जिसका आकार शून्यके बराबर हो। किन्तु १६वीं शताब्दीमें डाल्टनने पहली



वार यह बात वैज्ञानिकोंके सामने रखी कि उक्त धारणा गलत है। पदार्थोंके अवयवोंको अबाध रूपसे निरन्तर हम विभाजित नहीं कर सकते—एक नियत आकारके अवयवतक पहुँचनेके बाद हम उसे और आगे विभाजित नहीं कर सकते। प्रत्येक मूल पदार्थ इन्हीं रूढ़ अवयवोंके समूहसे बना होता है। इन्हें विज्ञानकी परिमार्जित भाषामें परमाणु (ऐटम) कहते हैं।

डाल्टनकी इस नयी खोजके उपरान्त परमाणुओंको विज्ञान-संसारमें अपूर्व महत्त्व मिला। हर एक मूल पदार्थके परमाणुके बारेमें जानकारी हासिल करनेके लिए हर तरहके प्रयोग किये गये। इन प्रारम्भिक प्रयोगोंके द्वारा लोग इसी निष्कर्षपर पहुँचे कि ये परमाणु अदृश्य हैं। इतना सूक्ष्म इनका आकार है कि प्रयत्न करनेपर भी—अणुवीक्षण यन्त्रकी मददसे भी ये नहीं देखे जा सकते। साथ ही चूँकि किसी भी प्रयोगमें परमाणुका छिन्न-भिन्न होना नहीं पाया गया, लोगोंने यह नतीजा निकाला कि परमाणु छिन्न-भिन्न किये ही नहीं जा सकते, प्रकृतिने इन्हें पूर्ण रूपसे रूढ़ बनाया है।

किन्तु विज्ञान तो सदासे ही जिज्ञासा के पथका पथिक रहा है। उसने परमाणुकी असलियतका पता लगानेके लिए अपने प्रयोग जारी रखे और अन्तमें उसने तत्कालीन धारणाको गलत ठहराकर साबित कर दिया कि पदार्थका रूढ़तम भाग परमाणु नहीं है; क्योंकि परमाणु तोड़े जा सकते हैं और उनके अन्दरसे विद्युत्-कण—एलेक्ट्रॉन—प्राप्त किये जा सकते हैं। यह बात सन् १८९५ की है।

यदि शीशेकी नलीके अन्दरसे थोड़ी-सी हवा बाहर निकाल ली जाय और तब उस नलीके अन्दरसे विद्युत्-धारा प्रवाहित करायी जाय तो ऐसा करनेके लिए बहुत ही ऊँचे वोल्टेजकी बिजली हमें नलीमें भेजनी पड़ेगी। ऐसे प्रयोगमें देखा जाता है कि नलीके अन्दर विद्युत्-कणोंकी एक तीव्र बौछार एक सिरेसे दूसरे सिरेको प्रवाहित होती है। चाहे जो भी गैस उसके अन्दर रखी जाय, हर हालतमें ये ही विद्युत्-

कण उसके अन्दर पैदा होते हैं। इस तरह यह बात भलीभाँति सिद्ध हो जाती है कि ये विद्युत्-कण अवश्य हर एक गैसके परमाणुओंमें मौजूद रहते हैं। नलीके अन्दर ऊँचे वोल्टेजकी विजलीके आघातसे ये ही परमाणु छिन्न-भिन्न हो गये और उनके अन्दरसे विद्युत्-कणोंकी बौछार निकल पड़ी।

इन मौलिक प्रयोगोंसे उत्साहित होकर अन्य लोगोंने भी अणु-परमाणुओंकी दुनियाका रहस्योद्घाटन करनेका प्रयत्न किया और अन्त-में यह बात निश्चित-सी समझी जाने लगी कि प्रत्येक पदार्थका परमाणु (एटम) धनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्-कणोंके संयोगसे बनता है। हाइड्रोजनके परमाणुके केन्द्रमें एक धनात्मक विद्युत्वाला अवयव है और उसकी परिक्रमा एक ऋणात्मक विद्युत्-कण (एलेक्ट्रॉन) करता है। परमाणुका समूचा वजन करीब-करीब केन्द्रीय धनात्मक विद्युत्वाले अवयवमें निहित होता है। घनत्वके लिहाजसे हाइड्रोजनके बाद हीलियम गैसका नम्बर है। इसके परमाणुके केन्द्रमें दो धनात्मक विद्युत्-कण रहते हैं। इसी तरह ज्यों-ज्यों हम भारी पदार्थोंको लेते हैं उनके परमाणुओंके अन्दरके विद्युत्-कणोंकी संख्या बढ़ती जाती है।

भिन्न-भिन्न पदार्थोंकी भिन्नता इन्हीं धनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्-कणोंकी संख्याके घटने-बढ़नेके कारण होती है। यह नयी खोज पदार्थ-विज्ञानके लिए निस्सन्देह एक नवीन क्षेत्रके लिए मार्गप्रदर्शक बनी। संसारके समस्त पदार्थ केवल धनात्मक तथा ऋणात्मक विद्युत्-कणोंके संयोगसे बने हैं, अतएव प्रयोगों द्वारा इन विद्युत्-कणोंकी संख्या घटा-बढ़ाकर एक मूल पदार्थमें परिवर्तित की जा सकती है—इस अद्भुत सत्यका वैज्ञानिकोंको पहली बार पता चला।

इस क्षेत्रमें जब विज्ञानकी जानकारी और आगे बढ़ी तो यह बात मालूम हुई कि परमाणुओंके केन्द्रीय धनात्मक विद्युत्-कण स्वयं रूढ़ अवयव नहीं हैं, वरन् ये अन्य नन्हें-नन्हें अवयवोंके संयोगसे बने हैं और केन्द्र-पिण्डके अन्दर भी भिन्न प्रकारके अवयव ठँसे हुए हैं। इस नवीन



खोजने एक बार फिर अणु-परमाणु सम्बन्धी प्रयोगोंको प्रोत्साहन दिया । परमाणुओंके केन्द्रको छिन्न-भिन्न करनेकी तरकीब सोची जाने लगी । यों तो परमाणुका आकार स्वयं बहुत छोटा होता है—एक बूँद पानी लाखों परमाणुओंके संयोगसे बना है—किन्तु परमाणुका केन्द्र-पिण्ड तो परमाणुके अन्दरका केवल हजारहवाँ हिस्सा जगह घेरता है ।

केन्द्रको छिन्न-भिन्न करनेके लिए आखिर वैज्ञानिकोंने एक प्रयोगकी स्कीम बनायी । उन्होंने सोचा कि यदि नन्हें-नन्हें कणोंकी एक तीव्र बौछार परमाणुपर डाली जाय, तो निस्सन्देह कुछ परमाणु केन्द्रसे जा टकरायेंगे और उसे छिन्न-भिन्न कर डालेंगे ।

अब इस स्कीमको कार्यान्वित करनेकी बात आयी । इस रास्तेमें सबसे बड़ी अड़चन तीव्र गतिवाले कणोंके प्राप्त करनेकी थी । रेडियमके नामसे पाठकगण परिचित हैं । रेडियम तथा इसीकी जातिके रेडियम-सरीखी धातुओंसे निरन्तर 'अल्फा' कणोंकी तीव्र बौछार निकला करती है । स्वर्गीय वैज्ञानिक लार्ड रदरफोर्डने इन अल्फा-कणोंकी बौछारकी मददसे परमाणुओंको छिन्न-भिन्न किया था । यह घटना सन् १९१९ की है । किन्तु इस प्राकृतिक बौछारमें इतनी शक्ति नहीं होती कि वह परमाणुके केन्द्रीय पिण्डको भेद सके । केन्द्रीय पिण्डको भेद सकनेके लिए इन कणोंकी रफ्तार बेहद तेज होनी चाहिये ।

इस मुश्किलको हल करनेका प्रयत्न सबसे पहले एक अमेरिकन वैज्ञानिक ग्रैफने किया । उसने विद्युत्-यन्त्र बहुत ही बड़े आकारका तैयार किया । जब विद्युत्कण इस यन्त्रसे होकर गुजरते हैं तो इस यन्त्रके प्रभावसे उनकी गति बेहद बढ़ जाती है । किन्तु ऐसी मशीन जगह बहुत घेरती है तथा कमरेकी हवा यदि नम हुई तो मशीन ठीक काम भी नहीं करती । जब हवामें नमी अधिक नहीं होती है, तो उस समय इस मशीनके अन्दर कृत्रिम तरीकेसे ४० से लेकर ६० फुट तक लम्बी कौंध पैदा की जा सकती है ।

इन कणोंको गति प्रदान करनेके लिए एक दूसरी तरहका भी यन्त्र

तैयार किया गया है। सैकड़ों-हजारों बैटरियोंको एक दूसरीसे सम्बद्ध करके बहुत ही ऊँचे वोल्टेजका विद्युत्क्षेत्र तैयार करते हैं। फिर इसी विद्युत्क्षेत्रसे गुजरनेपर विद्युत्-कण तेज रफ्तार अख्तियार कर लेते हैं। किन्तु इस तरीकेमें भी बैटरियोंसे जगह ज्यादा घिरती है और दूसरी कई खामियाँ भी इस तरीकेमें पायी जाती हैं।

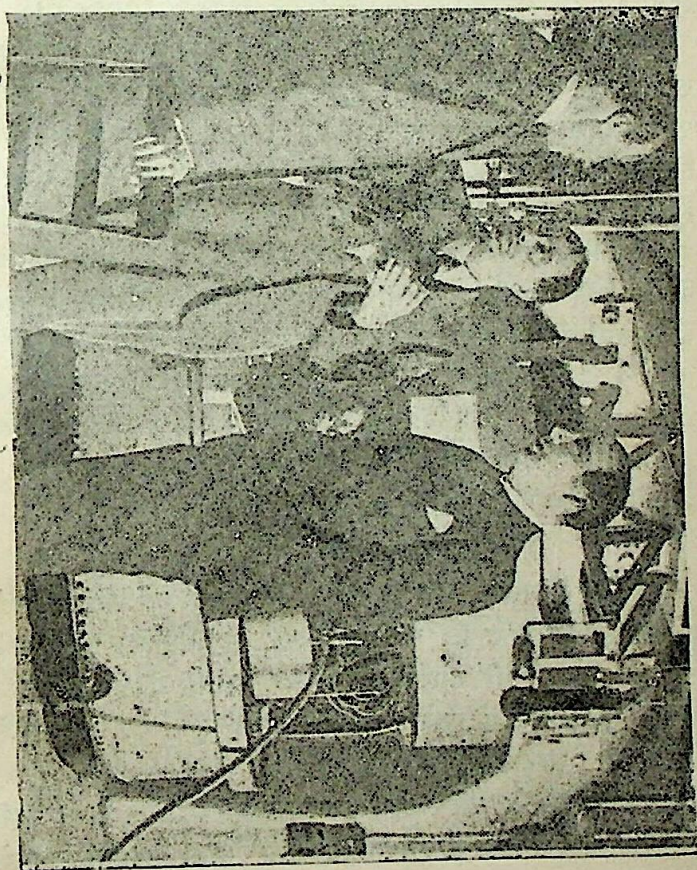
प्रोफेसर लारेन्सने भी इसी मुश्किलको हल करनेका सफल प्रयत्न किया। उन्होंने एक विशालकाय चुम्बक यन्त्र तैयार किया जिसका वजन २३०० मन था। अब अपने विद्युत्-यन्त्रोंके भीतर उन्होंने इस चुम्बकको रखा। इसकी आकर्षण-शक्तिके बलसे इस यन्त्रसे भीतर प्रवेश करनेपर विद्युत्-कण वृत्ताकार परिधिमें कई बार घूमते हैं। प्रत्येक चक्करमें इन विद्युत्-कणोंकी रफ्तार बढ़ती जाती है। प्रत्येक वृत्ताकार परिधि-मार्ग पहले वृत्तसे ज्यादा बड़ा होता है। फलस्वरूप कई सौ चक्कर लगा लेनेके बाद जब कि इन कणोंकी रफ्तार खूब बढ़ जाती है, ये एक खिड़कीके रास्ते बाहरको निकलते हैं और एक शीशेकी नलीमें रखे हुए पदार्थके अणु-परमाणुओंसे जा टकराते हैं। अपनी तेज रफ्तारके कारण ये कण परमाणुओंके भीतर घुसकर केन्द्रीय पिण्डसे जा टकराते हैं और उसे छिन्न-भिन्न कर डालते हैं। इस अद्भुत यन्त्रका नाम 'साइक्लोट्रोन' है। आम बोलचालमें इसे परमाणुओंको भेदनेवाली बन्दूक भी कहते हैं।

इस मशीनको तैयार करनेमें करीब २ लाख रुपये लगते हैं। राक-फेलर इंस्टीट्यूट तथा अन्य जनहितकारी संस्थाओंने प्रोफेसर लारेन्सको प्रचुर मात्रामें रुपये दिये ताकि वे अपना प्रयोग पूरा कर सकें। लारेन्सने पहले एक छोटा-सा साइक्लोट्रोन तैयार किया। इस यन्त्रमें ९० लाख वोल्टकी विद्युत्वाली शक्तिके कणोंकी बौछार पैदा की जाती है। इस यन्त्रकी सफलतासे लोग बड़े प्रभावित हुए और लारेन्सने भिन्न-भिन्न प्रयोगशालाओंके लिए ३० साइक्लोट्रोन और तैयार किये।

प्रोफेसर लारेन्सने अपने इस अद्भुत यन्त्रकी मददसे तीव्र कणोंकी बौछार पैदाकर उसे अन्य पदार्थोंके अणु-परमाणुओंपर डाला। ये तीव्र



कण परमाणुके भीतर घुसकर केन्द्रिय पिण्डसे जा टकराते हैं और पिण्डमें स्थित नन्हें अवयवोंमेंसे एकाधको दूर भगा देते हैं। केन्द्रीय पिण्डके



साइक्लोट्रॉन यन्त्रके सामने परमाणु-विशेषज्ञ परामर्श कर रहे हैं।

आन्दोलित होनेसे उस पदार्थके गुणोंमें अन्तर आ जाता है। लारेन्सने अपने प्रयोगोंमें देखा कि इस प्रकार उन्होंने अनेक ऐसे मूल पदार्थ

तैयार कर लिये जो विज्ञान-संसारके लिए एकदम नये थे तथा रेडियम-की तरह इन नये पदार्थोंसे हर घड़ी विद्युत्-कणोंकी बौछार निकलती रहती है। इन पदार्थोंको कृत्रिम रेडियमके नामसे भी पुकारते हैं।

जीवविज्ञानके लिए भी प्रोफेसर लारेन्सका यन्त्र महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। इस यन्त्रकी सहायतासे नमक, आटा, दालके अन्दर पाये जानेवाले मूल पदार्थोंको कृत्रिम रेडियम-सरीखा बना लेते हैं। फिर किसी व्यक्तिको ये शोधी हुई चीजें लिखा देते हैं। अब शरीरके भिन्न-भिन्न अंगोंसे रुधिर लेकर हम आसानीसे जाँच कर सकते हैं कि इन भिन्न-भिन्न खाद्य-पदार्थोंके पौष्टिक तत्त्व शरीरके अंगोंमें किस हिसाब-से बँट जाते हैं। विशेषज्ञका विश्वास है कि साइक्लोट्रोनकी मददसे वे शीघ्र ही जीव-विज्ञानकी अनेक गुत्थियाँ सुलझा सकेंगे।

## परमाणु-शक्तिका भविष्य

अमेरिकन परमाणुबमके आविष्कारने शक्तिके अपरिमित स्रोतको अपने बसमें कर लिया है। सभी इंजीनियर तथा वैज्ञानिक इस बातको स्वीकार कर रहे हैं कि अगस्त सन् १९४२ से शक्तिका नवीन युग—परमाणु-युग आरम्भ हो चुका है। इसमें सन्देह नहीं कि परमाणु-युगमें आश्चर्यजनक सम्भावनाएँ निहित हैं।

परमाणु-शक्तिके बारेमें कुछ जानकारी हासिल करनेके पूर्व हमें परमाणुओंकी बनावटका भी ज्ञान प्राप्त करना होगा। परमाणु वास्तवमें मूलतत्त्वोंके अत्यन्त ही नन्हें कण होते हैं जिन्हें बढ़ियासे बढ़िया अणु-वीक्षणयन्त्रोंकी मददसे भी हम देख नहीं सकते। परमाणुओंके आकारका अनुमान आप एक उदाहरणसे लगा सकते हैं—यदि एक सन्तरेका आकार बढ़ाकर उसे पृथ्वीके बराबर बना दिया जाय, तो सन्तरेके अन्दरके



परमाणु एक गेंदके बराबर दीखेंगे। सुईकी नोकमें कई करोड़ परमाणु विद्यमान हैं।

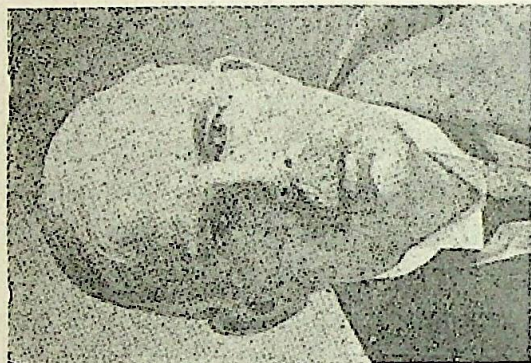
किन्तु परमाणु स्वयं भी अन्य क्षुद्र कणों द्वारा बना है। प्रत्येक परमाणु छोटे पैमानेके सौरमण्डल सरीखा है, जिसमें केन्द्रपिण्डके चारों ओर अन्य कण ग्रहोंकी तरह परिक्रमा लगाते हैं। केन्द्र-पिण्ड, प्रोटान (धनात्मक विद्युत्-कण) और न्यूट्रान (विद्युत्विहीन-कण) द्वारा निर्मित होता है और ऋणात्मक कण (एलेक्ट्रान) केन्द्रपिण्डके चारों ओर घूमते रहते हैं। अतः यह एक गौर करने योग्य बात है कि परमाणुके अन्दर ढेर-सी जगह बिल्कुल खाली रहती है। परमाणुके कण स्वयं बहुत कम जगह घेरते हैं। परमाणुके अन्दर ये कण एक-दूसरेको तीव्र शक्तिसे आकृष्ट करते हैं। इसीलिए परमाणुके इन कणोंको आसानीके साथ पृथक् नहीं किया जा सकता। इन्हें पृथक् करनेके लिए विद्युत्-कणोंकी तीव्रतम बौछार परमाणुपर डालनी होती है।

सन् १९१९ में ब्रिटिश वैज्ञानिक स्वर्गीय लार्ड रदरफोर्डने सर्वप्रथम परमाणुके अवयवोंको अलग किया था—परमाणुके अन्दर संचित शक्तिका इसी अवसरपर वैज्ञानिकोंको पहली बार अन्दाज लगा। तदुपरान्त परमाणुभेदनके निमित्त विभिन्न देशोंमें अनुसन्धान किये जाने लगे।

सन् १९३४ में ब्रिटिश वैज्ञानिक चैडविकने परमाणुकेन्द्रमें 'न्यूट्रान' कणोंकी उपस्थितिका पता लगाया। न्यूट्रानमें विद्युत्चार्ज नहीं होता यद्यपि इसका वजन प्रोटानके बराबर ही होता है। न्यूट्रानकी खोजने परमाणु वैज्ञानिकोंके हाथमें मानो एक नये किस्मका कारतूस दे दिया। न्यूट्रानकी बौछार आसानीसे परमाणुके केन्द्रपिण्डसे भिड़ सकती है क्योंकि न्यूट्रान और केन्द्रपिण्डके बीच किसी प्रकारका हटाव बल नहीं काम करता।

सन् १९३८ तक लोग विभिन्न तत्त्वोंके केन्द्रपिण्डोंसे एकाध अवयव-को पृथक् करनेमें सफल हो पाये थे किन्तु सन् १९३९ में दो प्रमुख जर्मन वैज्ञानिकों—डा० आटो हान और डा० फ्रिट्ज स्ट्रासमनने प्रयोगोंके

लार्ड रदरफोर्ड (१८३१-१९२७)



विज्ञानके इतिहासमें पहली बार  
लार्ड रदरफोर्डने एक कूलतत्त्वको  
दूसरे मूलतत्त्वमें परिवर्तित करनेमें  
सफलता प्राप्त की ।



प्रो० चैडविक जिन्होंने न्यूट्रॉन  
कणोंका सर्वप्रथम पता लगाया ।



सिलसिलेमें महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान इस क्षेत्रमें किये । उन्होंने दिखलाया कि यूरेनियम परमाणुओंको यदि मन्दगामी न्यूट्रान-कणोंसे भेदा जाय तो यूरेनियम केन्द्रपिण्ड दो मुख्य भागोंमें टूट जाता है जो वास्तवमें बेरियम और क्रिप्टन तत्त्वोंके परमाणु होते हैं—इस विभाजनसे क्रियामें अपारशक्ति भी उत्पन्न होती है । साथ ही इस विभाजन-क्रियामें प्रत्येक यूरेनियम परमाणुके केन्द्रपिण्डसे दो नये न्यूट्रान निकलते हैं । लगता ऐसा है कि ये अन्य केन्द्रपिण्डोंको उसी भाँति भेद सकनेकी क्षमता रखते हैं । किन्तु वास्तवमें ये तीव्रगामी होनेके कारण केन्द्रपिण्डके विभाजनमें असमर्थ होते हैं । अतः परमाणु केन्द्रके तोड़-फोड़की शृंखला जारी रखनेके लिए आवश्यक है कि न्यूट्रानोंकी गतिको धीमी करनेका प्रबन्ध किया जाय । अनुसन्धानोंके सिलसिलेमें वैज्ञानिकोंने मालूम कर लिया कि मोम द्वारा न्यूट्रानकी गतिको कम किया जा सकता है ।

इस युद्धके दौरानमें अमेरिकामें विभिन्न देशोंके प्रमुख वैज्ञानिकोंकी टोलीने तीन वर्षके अन्दर-अन्दर परमाणु-शक्तिको वशमें करनेका गुर मालूम कर लिया । इस योजनामें लगभग १९० लाख डालर खर्च हुए थे । १६ जुलाई सन् १९४५ को परमाणु-शक्तिसे परिचालित बमकी परीक्षा न्यू मेक्सिकोके रेगिस्तानमें की गयी । सशक्तित मनसे और धड़कते हुए हृदयसे वैज्ञानिकों और इंजिनियरोंने इस्पातके बने ऊँचे स्तम्भपर परमाणु बमको रखा और ६ मीलकी दूरीसे विद्युत् स्विच द्वारा उसे विस्फोट कराया गया । विस्फोटका विवरण जो प्रकाशित हुआ उसका कुछ अंश नीचे उद्धृत किया जाता है—

‘विस्फोटके निश्चित समयके २ मिनट पूर्व सभी व्यक्ति स्तम्भकी ओर पैर करके लेट गये थे । ... सभी लोगोंने अपनी आँखोंको चकाचौंधसे बचानेके लिए गाढ़े रंगके चश्मे लगा लिये थे ।

‘विस्फोटनके समय एक तीव्र प्रकाशसे समस्त वायुमण्डल जगमगा उठा... तद्दुपरान्त एक जबरदस्त धड़ाकेकी आवाज हुई तथा हवामें

विस्फोटके धक्केके जोरसे ६ मीलके दायरेके बाहर खड़े हुए दो व्यक्ति धराशायी हो गये । फौरन ही इसके उपरान्त रंगीन प्रकाशसे आलोकित एक धुँका बादल ८ मीलकी ऊँचाईतक चढ़ गया—इस्पातका स्तम्भ विस्फोटके तापसे पूर्णतया वाष्परूपमें परिणत हो गया । स्तम्भकी जगह ज्वालामुखीके क्रेटरकी तरह एक गड्ढा बन गया ।

मानव इतिहासमें पहली बार परमाणुओंके अन्दर निहित अपरिमित शक्तिको मुक्त करनेमें मनुष्य सफल हुआ है । अकेला एक परमाणु बम कई हजार विशालकाय टी० एन० टी० बमोंसे भी अधिक ध्वंसकारी होता है । हिरोशिमा नगरपर जब परमाणु बम गिराया गया तो बमके विस्फोटसे इतनी अधिक ऊष्णता उत्पन्न हुई कि जो लोग घरोंके बाहर थे वे एकदम झुलस गये, यहाँतक कि मृत शरीरको देखकर स्त्री-पुरुषकी पहचान करना भी कठिन हो गया था । घरोंके भीतर लोग ऊष्णता और वायुकी विस्फोटन-तरंगोंके आघातसे मरे । जिस ठौर बम गिरा था वहाँसे तप्त धुँका स्तम्भ ७॥ मील ऊँचा आकाशमें उठा था । ९ मीलके घेरेमें तमाम मकान धराशायी हो गये । अनुमान किया जाता है कि जापानपर गिराये गये दो परमाणु बमोंने २ लाख जापानियोंको मृत्युके घाट उतारा ।

परमाणु बमके आविष्कारने मानवके हाथोंमें एक ऐसी दानवी-शक्ति प्रदान की है जिसकी सहायतासे संसारको वर्णानातीत हानि या लाभ पहुँचाया जा सकता है । इसी कारण सभी विचारशील व्यक्ति इस दानवी-शक्तिको रचनात्मक कार्यमें लगा सकनेके लिए विशेष आतुर हैं । स्वयं चोटीके वे वैज्ञानिक भी जिन्होंने परमाणु बमके निर्माणमें अपने बहुमूल्य अनुसन्धानों द्वारा सहायता पहुँचायी है, परमाणु-शक्तिके दुरुपयोगकी सम्भावनासे चिन्तित हैं । फिर राकेट परमाणु बमका निर्माण भी निकट भविष्यके लिए असम्भव नहीं है । इस श्रेणीके राकेट बमको हजारों मीलकी दूरीसे रेडियो-तरंगोंकी मददसे नियन्त्रित किया जा सकता है । फिर तो ये राकेट परमाणुबम किसी भी देशको



चन्द्र सेकेण्डमें नेस्तनावृद्ध कर सकते हैं ।

अमेरिका और इंग्लैण्डके वैज्ञानिकोंने संयुक्त घोषणा निकाली है कि परमाणु सम्बन्धी अनुसन्धानोंका इस्तेमाल केवल रचनात्मक कार्यों-के लिए ही किया जाय । ब्रिटेनके प्रमुख वैज्ञानिक प्रो० आलिफण्टने परमाणु-शक्तिके रचनात्मक प्रयोगपर यथार्थ प्रकाश डाला है । इनका ख्याल है कि यह योजना सम्भवतः चार स्टेजोंमें पूरी की जा सकेगी । प्रथम परमाणुओंको छिन्न-भिन्न करके उनसे शक्ति प्राप्त करनेके लिए केन्द्रीय पावर-हाउस बनाने पड़ेंगे । पावर-हाउसमें परमाणु-शक्ति द्वारा विद्युत्‌धारा उत्पन्न करके उसे फैक्टरियों तथा घरोंमें पहुँचायेंगे जहाँ उनसे विविध प्रकारके काम लिये जा सकेंगे । परमाणुभंजनके यन्त्रमेंसे घातक रश्मियाँ भी विकीर्ण होती हैं, अतः उनसे बचनेके लिए पावर-हाउसके इंजिनघरको मजबूत और मोटी दीवारोंसे अच्छी तरह घेरना जरूरी होता है । अवश्य ही पावर-हाउसके निर्माणमें तथा उसमें परमाणु-भंजनके यन्त्र फिट करनेमें काफी खर्च बैठेगा ।

इस योजनाके द्वितीय स्टेजमें विशालकाय समुद्री जहाजोंपर ही छोटे आकारके परमाणु पावर-हाउस उसके पेंदेमें बनाये जायेंगे । पेंदा पानीसे घिरा रहेगा अतः यन्त्रोंसे निकली हुई घातक रश्मियाँ उसीमें जज्व हो जायँगी । तृतीय स्टेजमें रेलगाड़ीके बड़े इंजिनोंमें परमाणु-शक्तिके उत्पादनका प्रयत्न किया जायगा । यह काम अपेक्षाकृत अधिक दुस्तर है, क्योंकि परमाणुभंजनके यन्त्र बहुत ही भारी-भरकम होते हैं । चौथा स्टेज होगा परमाणुओंसे मोटरकार तथा वायुयानोंके लिए चालक-शक्ति प्राप्त करना । किन्तु हलके आकारके परमाणु-इंजिन तैयार करनेकी कल्पना अभी असम्भव-सी जान पड़ती है । सम्भव है दस-बीस वर्षोंमें यह असम्भव भी सम्भव बन जाय ।

ऋतुओंको अनुकूल बनानेके निमित्त भी वैज्ञानिक प्रयत्नशील रहे हैं । परमाणु-शक्तिकी सहायतासे इस कार्यमें आसानीसे सफलता मिल सकती है । परमाणु बमकी शक्तिसे किसी द्वीपको जलमग्न किया जा

सकता है या सहाराकी मरुभूमिमें सिंचाईके निमित्त एक लम्बी-चौड़ी झील खोदी जा सकती है। इस प्रकार रेगिस्तानको हरा-भरा बनाया जा सकता है। ऐसे देशमें जहाँ आकाशमें हर समय बादल छाये रहते हैं, राकेट परमाणु बमका आसमानमें विस्फोट कराकर बादलोंके आवरणको हटाया जा सकता है। परमाणु-युगमें उत्तर ध्रुव प्रान्तमें भी खेती हो सकेगी तथा वहाँ नगर बसेंगे।

परमाणु बमके विस्फोटनमें यूरेनियम परमाणुका एक नन्हा-सा भाग शक्तिमें परिणत होता जाता है। कई वर्ष पहले सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटाइनने थियोरेटिकल सिद्धान्तोंके आधार यह साबित किया था कि पदार्थको शक्तिमें परिणत कर सकते हैं। पदार्थकी तनिक-सी मात्रासे बहुत ही अधिक शक्ति प्राप्त होती है। यही कारण है कि अन्य श्रेणीके बमोंकी अपेक्षा परमाणु बमकी विध्वंसकशक्ति कहीं अधिक होती है। द्वितीय महायुद्धमें यूरोपमें तमाम बमवर्षक वायुयानोंने जितनी क्षति पहुँचायी है, उतनी क्षति केवल १२३ परमाणु बम पहुँचा सकते हैं। प्रयोगशालामें अभीतक शक्तिको पदार्थमें परिणत नहीं किया जा सका है। सुदूर भविष्यमें यदि शक्तिको पदार्थमें वैज्ञानिक परिणत कर सका तो निस्सन्देह हमारे समाजकी रूपरेखामें भी आमूल परिवर्तन होगा।

## अतुल जलराशिके नीचे

वैज्ञानिककी नस-नसमें अनुसन्धान भरा है। इस भूमण्डलके बारेमें जानकारी हासिल करनेके लिए उसने निर्जन प्रान्तोंमें अपनी जान हथेलीपर रखकर जानेमें तनिक भी आनाकानी नहीं की। मीलों ऊँचे आकाशमें वह वायुयान तथा गुब्बारोंके जरिये उड़ा ताकि वहाँका तापक्रम,



हवाका रुख तथा वायुमण्डलकी अन्य विशेषताओंकी वह जानकारी हासिल कर सके। ध्रुव ग्रान्तोंकी यात्रा साहसी वैज्ञानिकोंने सफलतापूर्वक की। भूमण्डलके इन तमाम हिस्सोंकी जानकारी हासिल करनेके उपरान्त उसका ध्यान पृथ्वीके उस भागकी ओर आकृष्ट हुआ जो सदैव पानीसे ढका रहता है। अतुल जलराशिके बारेमें उसकी अपनी जानकारी नहींके बराबर थी। पृथ्वीका आधेसे ज्यादा हिस्सा पानीसे ढका हुआ है। इस अतुल जलराशिके अन्दर कभी सूर्य-रश्मियाँ प्रवेश ही नहीं कर पातीं। निपट अन्धकार यहाँ सर्वत्र विराजमान रहता है। तापक्रम भी इस प्रदेशका एकदम ठण्डा रहता है।

इस पातालपुरीमें मछलीकी जातिके अनेक जीव इधर-उधर डोलते फिरते हैं। रास्ता दिखानेके लिए प्रकृतिने स्वयं इनके शरीरमें ही ऐसी विशेषताओंका आयोजन किया है कि अँधेरेमें उनका शरीर चमकता है—किसी मछलीके शरीरसे हरा प्रकाश आ रहा है, तो किसी केकड़ेके शरीरसे पीला प्रकाश।

अभी हालतक इस अतुल जलराशिके अन्दर प्रवेश करनेका हमारे पास कोई साधन न था। गोताखोर लगभग २०० फुटसे नीचे पानीमें नहीं जा सकते। अतः इस पातालपुरीके बारेमें जानकारी हासिल करनेका एकमात्र जरिया यह था कि मशीनके जरिये समुद्र-तलसे इन जीव-जन्तुओंके नमूने ऊपरको खींच लिये जायँ। किन्तु इस रीतिसे बाहर निकालनेपर ये जीव तुरन्त मर जाते थे, क्योंकि गहरे जलके अन्दर उनके शरीरपर पानीका जबर्दस्त भार रहता है। अतः ऊपर खींचे जानेपर उनका शरीर बाहरका भार कम हो जानेके कारण फट जाता था। अतः इसका सही अन्दाज लगा सकना कि पानीके नीचे उनके शरीरका वास्तवमें क्या रूप था, सम्भव न था। ठीक यही बात मनुष्य-शरीरके लिए भी लागू है। जब पर्वतारोही लोग पर्वत-चोटियों पर चढ़नेके लिए जाते हैं, तो ऊँचाईपर पहुँचनेपर उनके शरीरपर वायुमण्डलका भार कम हो जाता है, अतः प्रायः उनके शरीरमेंसे फूट-फूट

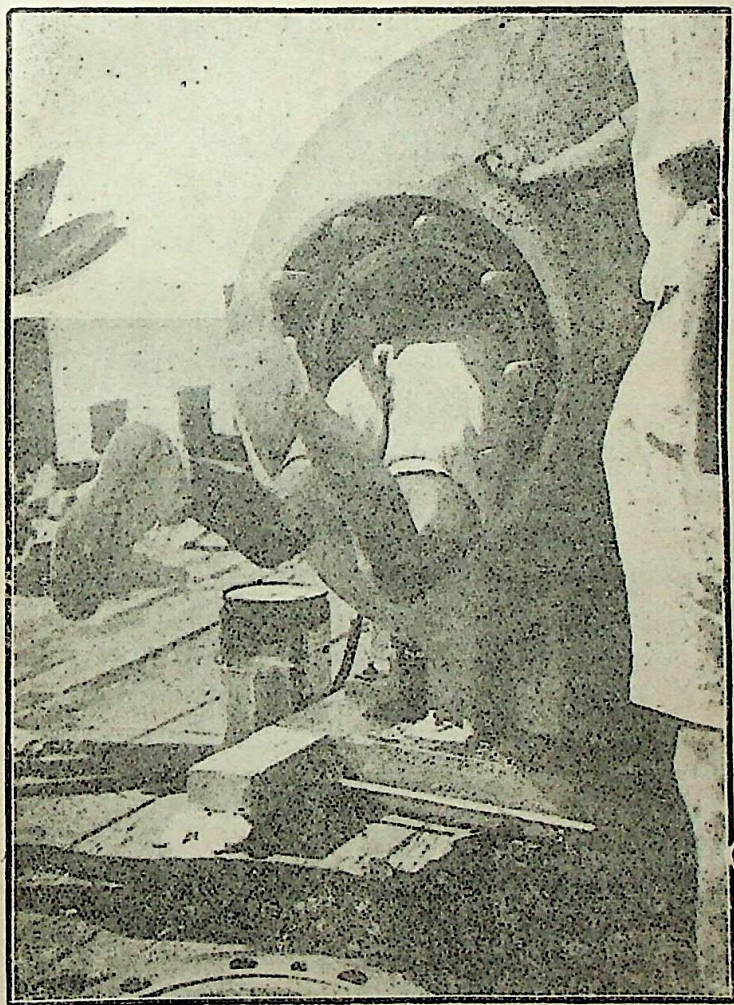
कर नाक, कान और आँख के रास्ते रुधिर बाहर निकलने लगता है। इसी कारण वायुयान के उड़ाने के जिनमें काफी उड़ना होता है, उड़ाने के पहले एक विशेष प्रकार की पोशाक पहन लेते हैं। इस लवादे के अन्दर इस वात का इन्तजाम रहता है कि शरीर पर सदैव उतना ही भार बना रहे जितना पृथ्वी की सतह पर था।

जीव-विज्ञान के विशेषज्ञ तो चाहते थे कि इन विचित्र जन्तुओं का निरीक्षण जीवित अवस्थामें ही किया जाय और उनकी आदतों का अध्ययन किया जाय, किन्तु गहरे जल में गोताखोरों का जाना सम्भव न था। अमेरिका के प्रसिद्ध जीव-वैज्ञानिक डाक्टर बीवने, जो समुद्र तल के जीवों का विशेष रूप से अध्ययन कर रहे थे, इस क्षेत्र में कई वर्ष तक अनवरत परिश्रम से अनुसन्धान का कार्य किया। गोताखोरों की पोशाक पहनी, सिर पर हेलमेट रखा और जहाज पर से पानी के अन्दर कूद पड़े और वेस्ट इण्डीज द्वीप-समूह के छिछले समुद्र तल पर जा पहुँचे—लगभग १०० फुट की गहराई पर। उन्होंने विशेष ढंग के बने हुए कैमरे से वहाँ के जीव-जन्तुओं की फोटो ली और उनके बारे में पुस्तकें लिखीं।

डाक्टर बीवने इतने से सन्तुष्ट होने वाले नहीं थे। वे तो जानना चाहते थे कि और भी गहरे जल में किस प्रकार के जीव-जन्तु तथा पेड़-पौधे पाये जाते हैं। किन्तु गोताखोरों के लिए साधारण पोशाक में २०० फुट से अधिक नीचे जाना निरापद न था। गहरे जल में पानी का भार इतना बढ़ जाता है कि मनुष्य वहाँ ठीक तौर से साँस नहीं ले सकता तथा पानी में घुली हुई अनेक गैसों रुधिर में जबरदस्ती प्रविष्ट होकर उसे पीड़ा पहुँचाती हैं। अतः डाक्टर बीवने गहरे जल के अन्दर प्रवेश करने के लिए एक खास योजना का निर्माण किया जो सफल भी हुई।

डाक्टर बीवने अपने एक मित्र की सहायता से एक बड़ा-सा, धातु की १॥ इंच मोटी चदर का बना, गोल पीपा तैयार किया। इस पीपा का व्यास ५ फुट से ऊपर है। इस पीपा को बाथीस्फियर कहते हैं। स्फटिक शीशे की दो खिड़कियाँ इस पीपा में लगी हुई हैं तथा एक गोल





डाक्टर बीबका पीपेके भीतर प्रवेश

आकारका सँकरा प्रवेश द्वार भी बना हुआ है। भीतर केवल दो आदमियोंके लिए सिकुड़कर बैठनेकी जगह है। इस पीपेके भीतर अनेक यन्त्र लगे हुए हैं जिनकी मददसे आप समुद्रतलकी गहराई, उसका तापमान और वहाँका प्रकाश नाप सकते हैं। साथ ही पीपेके अन्दर कैमरा भी फिट किया रहता है ताकि आप इस विचित्र प्रदेशकी फोटो भी ले सकें। बाथीस्फियरकी मजबूती हर प्रकारसे जाँच की गयी कि कहीं ऐसा न हो कि पानीके अत्यधिक भारसे पीपा टूट जाय, साँस लेनेके निमित्त हवा उत्पन्न करनेके लिए भी पीपेके अन्दर ही इन्तजाम है। रासायनिक वस्तुओंकी मददसे साँसके साथ बाहर निकली हुई कार्बन-डाइआक्साइडको उसीके भीतर जज्व कर लेते हैं, ताकि पीपेके अन्दरकी हवा दूषित न हो जाय। पीपेके अन्दर ही एक तेज रोशनीवाली सर्चलाइट भी लगी रहती है, ताकि एक खिड़कीके रास्तेसे सर्चलाइटकी रोशनी बाहरको फेंकें और दूसरी खिड़कीके रास्तेसे बाहरकी चीजोंका निरीक्षण करें और उनकी फोटो लें। बाथीस्फियरके अन्दर टेलीफोन भी लगा हुआ है, ताकि उसके भीतर जो लोग बैठे हों वे समुद्रकी सतहपरके जहाजके कप्तानसे हर समय बातचीत कर सकें।

सन् १९३० की छठी जूनको डाक्टर बीबकी चिरसञ्चित अभिलाषा पूरी हुई। उस दिन ठीक १ बजे दिनको डाक्टर बीब और उनके मित्र मिस्टर वार्टन पीपेके अन्दर बन्द किये गये। प्रवेशद्वारपर लोहेकी चद्दरको बालूसे अच्छी तरह कस दिया गया कि किसी भी हालतमें पानी पीपेके अन्दर प्रवेश न कर सके। अब इस ६ मनके बोझको जहाजके क्रैनने उठाया और उसे पानीके अन्दर डाला। क्रैनकी गड़ारीमें लिपटा हुआ तार अब ढीला होने लगा और धीरे-धीरे बाथीस्फियर पानीके नीचे प्रवेश करने लगा।

प्रति क्षण टेलीफोन द्वारा डाक्टर बीब बोलते रहते थे कि मैं क्या देख रहा हूँ। लगभग ३०० फुटकी गहराईपर जब बाथीस्फियर पहुँचा, यकायक डाक्टर बीबके मुँहसे चीख निकली। बाथीस्फियरके पेंदेमें पानी



किसी तरफसे प्रविष्ट हो रहा था। लगभग आधा सेर पानी इकट्ठा हो गया। डा० बीव बहुत धवराये, किन्तु सौभाग्यवश छेद बड़ा नहीं हुआ, केवल बूँद-बूँद पानी भीतर आता रहा।

इस प्रथम अन्तर्गमनमें डाक्टर बीवने ८०० फुटकी गहराईपर आर्डर दिया कि अब बाथीस्फियरका नीचे गिराना बन्द किया जाय। डाक्टर बीव यहाँके दृश्यको देखकर एकदम चकित रह गये। उधर जहाजके कप्तानसे उन्होंने कह रखा था कि यदि मैं पाँच सेकेण्डतक लगातार चुप रह जाऊँ तो समझना कि मेरे ऊपर कोई आफत आयी है, अतः बाथीस्फियरको फौरन ही ऊपर खींच लेना। डाक्टर बीव वहाँकी रंगविरंगी मछलियोंके सौन्दर्य निरखनेमें इतने व्यस्त हो गये कि उन्हें याद ही नहीं रहा कि जहाजका कप्तान उनकी टोह लेनेके लिए कानपर टेलीफोन लगाये बैठा है।

लगभग ५ सेकेण्डतक डाक्टर बीव उन जीव-जन्तुओंको देखनेमें ही भूले रहे—यकायक उन्हें अपनी भूल मालूम हुई। तब फौरन ही उन्होंने कप्तानको अपनी कुशलसे आगाह किया—उधर कप्तान आर्डर देनेसे जा रहा था कि अवश्य ही कोई आफत डाक्टर बीबके ऊपर आयी है, बाथीस्फियरको ऊपर खींचो।

प्रथम अन्तर्गमन-यानसे उत्साहित होकर डाक्टर बीवने कई बार फिर अनुल जलराशिके अन्दर प्रवेश किया। अगस्त सन् १९३४ में अपने मित्र बार्टनके संग बाथीस्फियरमें बैठकर वे करीब आध मील नीचे पानीमें गये। इस बार बाथीस्फियरपर पानीका बहुत जोर पड़ रहा था, स्फटिक शीशेकी खिड़कियोंपर १९ टन (कोई ५२० मन) पानीका बोझ था। ठण्ठक इतनी जबर्दस्त थी कि डाक्टर बीबकी उँगलियाँ ठिठुरने लगीं—वे बेचारे नोट नहीं लिख पाये। बाथीस्फियरकी दीवारें मानो बर्फ हो रही थीं।

इस अद्भुत प्रदेशमें हजारों-लाखों वर्षके लम्बे जमानेमें प्रकाश-रश्मियाँ प्रवेश न कर पायी थीं और न कोई आदमी ही कभी यहाँतक

पहुँचा था। सर्चलाइट बुझा देनेपर डॉक्टर वीवने देखा कि रह-रहकर जैसे पानीके अन्दर विस्फोट होता था और लगभग ५-६ सेकेंडतक चारों ओर उजैला छा जाता था। गौर करनेपर उन्होंने देखा कि एक छोटी मछली एक दूसरी आततायी मछलीको डरानेके लिए यह आलोक विस्फोट कर रही थी। प्रकृतिने स्वरक्षाके लिए उस छोटी मछलीको मानो यही एक साधन प्रदान किया है।

डाक्टर वीवने अपने इस अन्तर्गमनमें अतुल जलराशिके नीचेकी दुनियाका अँखों-देखा वर्णन जिस समय बार्थीस्फियरके अन्दर बैठकर टेलीफोनपर किया था, उसी समय उनकी बातें रेडियो द्वारा चारों ओर ब्राडकास्ट की गयी थीं। यूरोपके सभी देशोंमें लोगोंने उनके इस मनोरंजक वर्णनको बड़े ध्यानपूर्वक सुना था।

निस्सन्देह डाक्टर वीवने हमें एक नयी दुनियाका दिग्दर्शन कराया है, किन्तु वे अभी आधमीलकी गहराईतक ही पहुँच पाये हैं। अधिकांश समुद्र काफी गहरे हैं। प्रशान्त महासागरके कुछ भाग तो ६ मीलसे भी अधिक गहरे हैं। आपका समूचा माउण्ट एवरेस्ट प्रशान्त महासागरके अन्दर समा जायगा। अतः अभीतक भूमण्डलके तीन-चौथाई भागमें, जो पानीसे आच्छादित है, हम अधिक दूरतक प्रवेश नहीं कर पाये हैं। बीसवीं सदीके इस वैज्ञानिक युगमें इस क्षेत्रमें हमारी मजबूरी हमें अवश्य खलती है। किन्तु वैज्ञानिक हताश नहीं है, डाक्टर वीव तथा उनके साथी अपना अनुसन्धान-कार्य जारी रखे हुए हैं।

## सबमैरीन

तमाम स्तनपायी प्राणियोंमें अकेला मनुष्य ही ऐसा है जिसे अपने आप पानीपर तैर सकनेकी शक्ति प्रकृतिकी ओरसे नहीं मिलती। अपनी इस खामीको दूर करनेके लिए मनुष्य आदिकालसे ही अत्यन्त प्रयत्नशील



रहा है—एक खास अन्दाजसे हाथ-पाँव मारकर उसने पानीके ऊपर तैरना सीखा, किन्तु वह इतनेसे ही सन्तुष्ट होनेवाला न था। समुद्रपर विजय प्राप्त करनेके लिए उसने लठ्ठोंके वेड़े बनाये, फिर डोंगियाँ तैयार कीं और आखिर मीलों लम्बे विशालकाय जहाज भी तैयार कर लिये। इस लम्बे अरसेके बीच उसने पानीके भीतर डुबकी लगाकर तैर सकनेके लिए भी तरह-तरहके साधन तैयार किये।

### आरम्भके प्रयत्न

सिकन्दर महान्ने युद्धमें कुछ ऐसे व्यक्तियोंको सेनामें भरती किया था जो समुद्रके तलपर पाँव-पाँव चल सकते थे। अवश्य ये लोग विशेष ढंगके यन्त्रका प्रयोग करते थे। फिर भी सद्योतक इस दिशामें कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण आविष्कार न किये जा सके। क्वीन एलिजाबेथके समयमें एक तोपचीने रानीके सामने एक माडेल स्कीम रखी जिसमें एक ऐसी सबमैरीन बनानेकी योजना थी, जो पानीके भीतर तहतक आसानीसे जा सके और फिर इच्छानुसार पानीकी सतहपर उठ भी सके। इस सबमैरीनमें एक-दूसरेके ऊपर तीन कम्पार्टमेंट थे। सबसे ऊपर और नीचेवाले कम्पार्टमेंट इस ढंगके बने थे कि उनमें एक बूँद भी पानी नहीं जा सकता था। बीचवाले कम्पार्टमेंटमें सूराख बने हुए थे, इन्हीं सूराखोंके रास्ते इस कम्पार्टमेंटमें पर्याप्त मात्रामें जल प्रवेश करा देते थे। जल भर जानेके कारण सबमैरीन भारी होकर पानीके अन्दर चला जाता। जब फिर सतहपर आना होता तो इस बीचवाले कम्पार्टमेंटसे विशेष युक्तियों द्वारा जल बाहरको धक्का देकर निकाल देते। बस हलका होकर सबमैरीन (पनडुब्बा जहाज) फौरन ऊपर उठ आता।

अमेरिकामें भी नाविक इस दिशामें प्रयत्नशील थे। एक अमेरिकनने ऐसा सबमैरीन तैयार किया जिसे अकेला एक मनुष्य अपनी शक्तिसे पानीके अन्दर चला सकता था—सबमैरीनको दाहिने-बाएँ घुमानेके लिए साधारण ढंगकी पतवारें उसने इस्तेमाल की थीं।

पहुँचा था। सर्वलाइट बुझा देनेपर डॉक्टर बीवने देखा कि रह-रहकर जैसे पानीके अन्दर विस्फोट होता था और लगभग ५-६ सेकेण्डतक चारों ओर उजैला छा जाता था। गौर करनेपर उन्होंने देखा कि एक छोटी मछली एक दूसरी आततायी मछलीको डरानेके लिए यह आलोक विस्फोट कर रही थी। प्रकृतिने स्वरक्षाके लिए उस छोटी मछलीको मानो यही एक साधन प्रदान किया है।

डाक्टर बीवने अपने इस अन्तर्गमनमें अतुल जलराशिके नीचेकी दुनियाका आँखों-देखा वर्णन जिस समय वाथीस्फियरके अन्दर बैठकर टेलीफोनपर किया था, उसी समय उनकी बातें रेडियो द्वारा चारों ओर ब्राडकास्ट की गयी थीं। यूरोपके सभी देशोंमें लोगोंने उनके इस मनो-रंजक वर्णनको बड़े ध्यानपूर्वक सुना था।

निस्सन्देह डाक्टर बीवने हमें एक नयी दुनियाका दिग्दर्शन कराया है, किन्तु वे अभी आधमीलकी गहराईतक ही पहुँच पाये हैं। अधिकांश समुद्र काफी गहरे हैं। प्रशान्त महासागरके कुछ भाग तो ६ मीलसे भी अधिक गहरे हैं। आपका समूचा माउण्ट एवरेस्ट प्रशान्त महासागरके अन्दर समा जायगा। अतः अभीतक भूमण्डलके तीन-चौथाई भागमें, जो पानीसे आच्छादित है, हम अधिक दूरतक प्रवेश नहीं कर पाये हैं। बीसवीं सदीके इस वैज्ञानिक युगमें इस क्षेत्रमें हमारी मजबूरी हमें अवश्य खलती है। किन्तु वैज्ञानिक हताश नहीं है, डाक्टर बीव तथा उनके साथी अपना अनुसन्धान-कार्य जारी रखे हुए हैं।

## सबमैरीन

तमाम स्तनपायी प्राणियोंमें अकेला मनुष्य ही ऐसा है जिसे अपने आप पानीपर तैर सकनेकी शक्ति प्रकृतिकी ओरसे नहीं मिलती। अपनी इस खामीको दूर करनेके लिए मनुष्य आदिकालसे ही अत्यन्त प्रयत्नशील



रहा है—एक खास अन्दाजसे हाथ-पाँव मारकर उसने पानीके ऊपर तैरना सीखा, किन्तु वह इतनेसे ही सन्तुष्ट होनेवाला न था। समुद्रपर विजय प्राप्त करनेके लिए उसने लठ्ठोंके वेड़े बनाये, फिर डोंगियाँ तैयार कीं और आखिर मीलों लम्बे विशालकाय जहाज भी तैयार कर लिये। इस लम्बे अरसेके बीच उसने पानीके भीतर डुबकी लगाकर तैर सकनेके लिए भी तरह-तरहके साधन तैयार किये।

### आरम्भके प्रयत्न

सिकन्दर महान्ने युद्धमें कुछ ऐसे व्यक्तियोंको सेनामें भरती किया था जो समुद्रके तलपर पाँव-पाँव चल सकते थे। अवश्य ये लोग विशेष ढंगके यन्त्रका प्रयोग करते थे। फिर भी सदिशोंतक इस दिशामें कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण आविष्कार न किये जा सके। क्वीन एलिजाबेथके समयमें एक तोपचीने रानीके सामने एक माडेल स्कीम रखी जिसमें एक ऐसी सबमैरीन बनानेकी योजना थी, जो पानीके भीतर तहतक आसानीसे जा सके और फिर इच्छानुसार पानीकी सतहपर उठ भी सके। इस सबमैरीनमें एक-दूसरेके ऊपर तीन कम्पार्टमेंट थे। सबसे ऊपर और नीचेवाले कम्पार्टमेंट इस ढंगके बने थे कि उनमें एक बूँद भी पानी नहीं जा सकता था। बीचवाले कम्पार्टमेंटमें सूराख बने हुए थे, इन्हीं सूराखोंके रास्ते इस कम्पार्टमेंटमें पर्याप्त मात्रामें जल प्रवेश करा देते थे। जल भर जानेके कारण सबमैरीन भारी होकर पानीके अन्दर चला जाता। जब फिर सतहपर आना होता तो इस बीचवाले कम्पार्टमेंटसे विशेष युक्तियों द्वारा जल बाहरको धक्का देकर निकाल देते। बस हलका होकर सबमैरीन (पनडुब्बा जहाज) फौरन ऊपर उठ आता।

अमेरिकामें भी नाविक इस दिशामें प्रयत्नशील थे। एक अमेरिकनने ऐसा सबमैरीन तैयार किया जिसे अकेला एक मनुष्य अपनी शक्तिसे पानीके अन्दर चला सकता था—सबमैरीनको दाहिने-बाएँ घुमानेके लिए साधारण ढंगकी पतवारें उसने इस्तेमाल की थीं।

तदुपरान्त फ्रांसके राबर्ट फुल्टनने सिगारकी शक्लका एक सबमैरीन तैयार किया। इसमें भी पतवारें लगी थीं। यह बोट घण्टों पानीके अन्दर रह सकती थी। किन्तु फिर भी फुल्टन इस दिशामें कुछ अधिक आगे बढ़ न सका।

### आधुनिक सबमैरीन

निस्सन्देह वैज्ञानिक आविष्कारोंमें सबमैरीनका स्थान बहुत ऊँचा है। इस अद्भुत जलयानमें भौतिक विज्ञानके अनेक सिद्धान्तों और अनुसन्धानोंका समावेश हुआ है। आइये देखें, एक अच्छे सबमैरीनके लिए किन-किन बातोंकी आवश्यकता होती है। सबमैरीनको पानीके अन्दर इच्छित गहराईपर पहुँचनेमें समर्थ होना चाहिये— साथ ही पानीके धरातलपर भी साधारण किशितियोंकी तरह इसे दौड़ लगानेमें किसीसे पीछे नहीं रहना चाहिये। पानीके अन्दर तूफान और लहरोंमें भी इसका सन्तुलन कायम रहना चाहिये। बोटके अन्दर न पानी जा सके और न हवा, किन्तु फिर भी सबमैरीन-बोटके यात्रियोंको साँस लेनेके लिए निरन्तर ताजी हवा लभ्य होनी चाहिये। खतरेके समय एक क्षणमें पानीके अन्दर डुबकी लगानेमें जरा भी दिक्कत महसूस नहीं होनी चाहिये और शत्रुकी टोह लेनेके लिए निष्प्रयास ही इसे ऊपर पानीके धरातलपर भी आनेमें अधिक समय नहीं लेना चाहिये।

अतुल जलराशिके नीचे पानीका दबाव अत्यधिक होता है। अतएव सबमैरीनका नमूना तैयार करनेवालेको सबसे पहले यह निश्चय करना था कि सबमैरीनका आकार कैसा बनाया जाय। भौतिक विज्ञान बताता है कि दबाव सह सकनेके लिए गोल पीपे सबसे ज्यादा उपयुक्त होंगे, किन्तु इस तरहके गोलेको पानीके अन्दर इधर-उधर हरकत करनेमें भारी अड़चन होगी, क्योंकि इस आकारकी वस्तुओंके खिलाफ पानीकी अवरोधक शक्ति ज्यादा होती है। यदि सबमैरीनकी शक्ल तीरनुमा रखी जाय, तो हरकतके समय इसपर पानीकी अवरोधक शक्ति एकदम कम हो जायगी, किन्तु इस शक्लकी बोट पानीका बोझ न सँभाल सकेगी।



अतः सबमैरीनके लिए कद्दूका आकार चुना गया जो न तो एकदम गोल ही होता है और न तीरकी तरह एकदम लम्बा। कद्दूनुमा सबमैरीन (पनडुब्बे) के दोनों छोर नुकीले बनाये गये ताकि आसानीसे पानीको चीरते हुए वह तेजीके साथ आगे बढ़ सके।

बादमें यह अनुभव किया गया कि यदि सबमैरीनमें दोहरा पेंदा लगाया जाय तो इसकी मजबूती भी बढ़ जायगी और साथ ही हरकत करनेमें पानीकी अवरोधक शक्तिमें भी किसी प्रकारकी वृद्धि न होने पायेगी। दोहरा पेंदा बनानेसे सबमैरीनमें जगह भी पहलेकी अपेक्षा ज्यादा हो गयी, क्योंकि डुबकी लगानेके पहले अपना बोझ बढ़ानेके लिए सबमैरीनको बोटके अन्दर एक नियत मात्रामें पानी भरना होता है। जबतक दोहरा पेंदा नहीं बना था, यह बोझ बढ़ानेवाला पानी बोटके अन्दर काफी जगह घेर लेता है। सबमैरीनके भीतर स्थानाभावकी सबसे बड़ी दिक्कत रहती है। थोड़ी-सी जगहमें बीसियों किस्सके सामान रखनेके लिए प्रबन्ध करना पड़ता है—नाविकोंके उठने-बैठनेकी जगह, इंजिन रूम, विद्युत् बैटरी रूम, इंजिनके ईंधनके लिए जगह और युद्ध-सम्बन्धी हथियारोंका गोदाम, सब कुछ इस छोटी-सी बोटके अन्दर मौजूद रहता है। अतः दोहरे पेंदेने इस मुश्किलको भी हल करनेमें काफी सहायता पहुँचायी। भीतर और बाहरवाले पेंदेके बीचमें पर्याप्त जगह निकल आयी—बोझ बढ़ानेके निमित्त पानी भरनेके लिए इसी जगहका इस्तेमाल किया गया। इंजिनमें जलानेके लिए क्रूड-आयल भी यहीं रखते हैं।

सबमैरीनके लिए उपयुक्त चालक-शक्ति चुननेमें भी काफी अरसेतक वैज्ञानिकोंको अनुसन्धान करना पड़ा था। आरम्भमें वाष्प इंजिनके साथ इस सिलसिलेमें प्रयोग किये गये। फलस्वरूप अमेरिकाके जलसेना-विभागके आदेशानुसार नार्डन फेल्डने भापके इंजिनसे चलनेवाले सबमैरीन तैयार किये। किन्तु ऐसी बोटको जब पानीमें डुबकी लगाना होता, तो पहले इंजिनकी धुँएँवाली चिमनी उतारी जाती, भट्टीकी आग बुझायी

जाती और तब संचित की हुई भाप पानीके अन्दर सबमैरीनके लिए चालक-शक्ति प्रदान करती। किन्तु अनेक खामियोंके अतिरिक्त वाष्प द्वारा परिचालित सबमैरीनकी सबसे बड़ी खामी थी इसका भारी वजन। भट्टीमें जलानेके लिए कई टन कोयला, ब्वायलरका पानी तथा भारी-भरकम वाष्प इंजिन—ये सब सबमैरीनका बोझ बेहद ज्यादा बढ़ा देते। इस बोझका सन्तुलन कायम रखना भी अत्यन्त कठिन काम था।

अतएव सबमैरीनके लिए उपयुक्त चालक-शक्तिकी तलाश जारी रही। श्री हालैण्डने वर्षोंतक इस सिलसिलेमें प्रयोग करनेके बाद सही ढंगपर सबमैरीनका निर्माण किया। पानीकी सतहपर चलनेके लिए इसमें पेट्रोल इंजिनसे शक्ति प्राप्त होती थी और पानीके भीतर बिजलीकी बैटरीसे विद्युत्-शक्ति प्राप्त की जाती जो सबमैरीनके लिए चालक-शक्तिकी काम करती। नाविकोंके साँस लेनेके लिए पर्याप्त मात्रामें संकुचित वायु भी सबमैरीनके अन्दर रखी गयी थी।

### पेरिस्कोप

प्रारम्भिक दिनोंमें जो सबमैरीन तैयार किये गये थे वे पानीके अन्दर बिलकुल अन्धे होकर चलते थे। कुतुबनुमा यन्त्र सबमैरीनके अन्दर दिशासूचकका काम करनेमें असमर्थ था, क्योंकि सबमैरीनके विभिन्न यन्त्रोंमें विद्युत्-धारा निरन्तर प्रवाहित होती रहती थी, जो कुतुबनुमा यन्त्रको बेकार बना देती है। अनुसन्धानकारियोंने अपनी यह मुश्किल भी आखिर हल कर ली और उन्होंने गायरोस्कोप नामक एक ऐसा यन्त्र तैयार कर लिया जो दिशा बतानेका काम तो करता है, किन्तु विद्युत्-धारासे रज्जुमात्र भी प्रभावित नहीं होता। फिर इतनेसे सन्तुष्ट न होकर सबमैरीन निर्माण करनेवालोंने अपने लिए आँखें भी बना लीं—पेरिस्कोप ही सबमैरीनकी आँख है।

सन् १९०२ में पहली बार सबमैरीनमें पेरिस्कोप लगाया गया। उसके पहले पानीके अन्दर सबमैरीन आँख मूँदकर चलता था। उन दिनों पेरिस्कोपको अगर यह जाँच करना होता कि हम कहाँपर हैं, तो



पूरे सबमैरीनको ऊपर आना पड़ता । आधुनिक सबमैरीनके ठीक बीचमें कोनिंग टावर बना होता है । उसी टावरके मध्यमें पेरिस्कोप फिट किया होता है । पेरिस्कोपमें शीशेके लेन्स तथा त्रिकोण दर्पण लगे रहते हैं । धातुकी एक लम्बी नलीके अन्दर एक दूरदर्शक सिद्धान्तके अनुसार ये सब यथोचित दूरीपर लगे रहते हैं । जिस समय सबमैरीनको टोह लेना हुआ कि पानीकी सतहपर कौन-कौन-सी चीजें हैं, यह गहरे जलसे जरा ऊपरको आ जाता है, इतना कि इसके पेरिस्कोपका सिरा पानीके बाहर निकल आये । पेरिस्कोपके सिरेपर लगे हुए त्रिकोण शीशे द्वारा बाहरके दृश्यका बिम्ब परावर्तित होकर नीचेको जाता है और विभिन्न लेन्सोंमें प्रवेश करनेके उपरान्त पेरिस्कोपकी नलीके पेंदेपर लगे हुए त्रिकोणसे टकराकर पेरिस्कोप-सञ्चालककी आँखोंके सामने काँचके पेंदेपर आ जाता है । वैसे कैप्टेनकी आँखोंके सामने बाह्य दृश्यका बिम्ब आकारमें छोटा ही बनता है, किन्तु आतशी लेन्ससे देखनेपर वह परिवर्द्धित हो जाता है । अतः आँखोंपर जोर डाले बिना ही बाह्य दृश्यका भलीभाँति अवलोकन किया जा सकता है । प्रत्येक सबमैरीनमें दो पेरिस्कोप लगे रहते हैं—एक कैप्टेनके लिए ताकि वह बाह्य दृश्यको देखकर उसीके अनुसार सबमैरीनके नाविकोंको आदेश दे सके, और दूसरा स्वयं सबमैरीन सञ्चालकके लिए, ताकि उसे पता रहे कि वह कैप्टेनके आदेशानुसार सबमैरीनको ठीक रास्तेपर ले जा रहा है या नहीं । पेरिस्कोपका दृष्टिक्षेत्र भी काफी दूर तक होता है । यदि पेरिस्कोपकी चोटी पानीकी सतहसे एक फुट ऊँची हुई, तो निरीक्षक २२०० गजकी दूरीतककी चीजोंको स्पष्ट देख सकता है और यदि पेरिस्कोपको तीन फुट ऊपर निकाला, तो निरीक्षक बखूबी ४००० गज अर्थात् ढाई मीलकी दूरीतककी चीजोंको स्पष्ट देख सकता है । एक स्कू घूमाया तो पेरिस्कोपके सिरेकी नन्हीं-सी खिड़की बायीं ओर घूम गयी फिर दूसरे स्कूको घुमाया तो ऊपर उड़ते हुए वायुयानकी ओर पेरिस्कोपकी पुतलियाँ घूम गयीं ।

जब शत्रुके डरसे समूचा सबमैरीन अतुल जलराशिके नीचे-नीचे

डोलता-फिरता है, सबमैरीनके नाविक पानीमें कुछ देख नहीं सकते । गायरोस्कोप दिशा-नियामक यन्त्रकी मददसे निर्धारित रास्तेपर वे भले ही सबमैरीनको ले जा सकते हैं किन्तु अभीतक इस ढंगका कोई आविष्कार नहीं हो पाया है जिससे बिना पेरिस्कोपको बाहर निकाले सबमैरीनको समुद्रकी सतहकी चीजें या पानीके अन्दरके जीव-जन्तु नजर आ सकें । इस क्षेत्रमें काम करनेवाले इस बातकी आवश्यकता अच्छी तरह महसूस कर रहे हैं । वे इस ढंगका विद्युत्-यन्त्र बनाना चाहते हैं जो पानीके अन्दर भी धातुके बने हुए सबमैरीन या जहाजके नजदीक आते ही प्रकम्पित हो उठें ।

सबमैरीनकी चालक-शक्तिके लिए भी विचित्र ढंगका प्रबन्ध किया गया है । पानीके अन्दर निस्सन्देह पेट्रोल-इंजिन काम नहीं कर सकता । पानीके धरातलपर खुली हवामें पेट्रोल-इंजिनकी सहायतासे सबमैरीन इधर-उधर दौड़ता-फिरता है । साथ ही विजलीके डायनमो चलाकर विद्युत्-धारा भी यही इंजिन उत्पन्न करता है । इसी विद्युत्-धारासे स्टोरेज बैटरीको चार्ज करते हैं । पानीके अन्दर डुबकी लगानेपर इसी स्टोरेज बैटरीसे प्राप्त विद्युत्-शक्तिकी मददसे सबमैरीनके लिए चालक-शक्ति प्राप्त की जाती है । इसी तरहकी स्टोरेज बैटरीसे मोटरकारमें रोशनी पैदा की जाती है । स्टेशनपर खड़ी हुई रेगाडोंमें भी स्टोरेज बैटरीकी ही विजलीसे रोशनी पैदा करते हैं । सबमैरीनके पेंदेमें बहुत-सी स्टोरेज बैटरियाँ रखी हुई होती हैं । उनसे प्राप्त विद्युत्-धारा विजलीके मोटर इंजिनको घुमाती है जिसका कनेक्शन पानीके अन्दर घूमनेवाले प्रोपेलरसे होता है । प्रोपेलर पानीको तेजीके साथ काटता है, अतः सबमैरीन आगे बढ़ता है ।

सबमैरीनमें स्टोरेज बैटरी जो इस्तेमाल की जाती है, वह आकारमें साधारण बैटरीकी अपेक्षा बहुत बड़ी होती है । सबमैरीनकी बैटरीमें करीब ४०० स्टोरेज सेल रहते हैं, जिनका कुल वजन साढ़े चार हजार मनसे भी ज्यादा होता है । इतने भारी बोझको सबमैरीनमें रखना इस-



लिए स्वीकार किया जाता है कि इससे प्राप्त विद्युत्-शक्ति सबमैरीनको न केवल चालक-शक्ति प्रदान करती है, बल्कि बिना किसी झंझटके दो पतले तारों द्वारा इस विद्युत्-शक्तिको सबमैरीनके जिस कोनेमें चाहें ले जा सकते हैं तथा विभिन्न कामोंके लिए इस शक्तिका प्रयोग भी कर सकते हैं—इससे पंखा चला सकते हैं, लैम्प जला सकते हैं, खाना पका सकते हैं तथा रेडियो सेटका संचालन भी कर सकते हैं। पेट्रोल इंजिनकी तरह न तो इस बैटरीमें किसी तरहकी आवाज होती है, न आक्सिजनका खर्चा होता है और न पेट्रोलका। साढ़े चार हजार मनका यह भारी बोझ सबमैरीनके मध्य भागमें ठीक कोनिंग टावरके नीचे रखा रहता है, ताकि सबमैरीनका सन्तुलन बना रहे।

### टारपीडो

टारपीडो सबमैरीनका मुख्य आक्रमण-अस्त्र है। सच तो यह है कि टारपीडोके निर्माणमें जब युद्ध-विशेषज्ञोंने पूर्ण दक्षता प्राप्त कर ली तब उन्हें ऐसे जलयानका निर्माण करनेकी आवश्यकता महसूस हुई जो इस भयानक अस्त्रका ठीक-ठीक प्रयोग कर सके—इसी प्रयत्नमें सबमैरीनका विकास हुआ। संक्षेपमें टारपीडो उस श्रेणीका बम है, जो छू जानेपर विस्फोट करता है। यह बेलनाकार बम १६ फुट लम्बा होता है तथा डेढ़ पौने दो फुट चौड़ा। इसके भीतर अनेक तरहके यन्त्र लगे रहते हैं, जो टारपीडोको द्रुतवेगसे ले जाकर विशालकाय जहाजोंसे भिड़ा देते हैं—अकेले एक धक्केमें लाखों रुपयोंकी कीमतका युद्धपोत नष्ट हो जाता है।

प्रारम्भिक कालके टारपीडोका परिचालन करना खतरसे खाली न था। उन दिनों कनस्टरमें बारूद भरकर उसके ढक्कनमें लोहेकी एक पिन लगा देते थे ताकि इस पिनपर जरा-सा धक्का लगते ही यह बम विस्फोट कर उठे। रातके अँधेरेमें शत्रुकी आँखें बचाते हुए साहसी नाविक अपनी डोंगीपर लम्बे लम्बे सिरेपर इस कनस्टरको बाँधकर शत्रुके जहाजोंकी ओर तेज रफ्तारसे भागते थे और कनस्टरको जहाजसे भिड़ा देते थे। जहाजसे भिड़ते ही कनस्टरका बम विस्फोट कर जाता,

किन्तु ऐसी हालतमें बम विस्फोट करनेवाले नाविक भी प्रायः शत्रुके साथ जानसे हाथ धो बैठते ।

सर्वप्रथम सफल टारपीडो निर्माण करनेका श्रेय एक अंग्रेज इञ्जीनियर ह्वाइटहेडको प्राप्त है । ह्वाइटहेडने ऐसा टारपीडो बनाया जो पानीके अन्दर-अन्दर दूरतक एक निर्धारित दिशामें जा सकता था । आधुनिक टारपीडोकी शक्ल सिगार जैसी होती है, ताकि जिस वक्त यह आगेकी ओर तेजीके साथ बढ़ रहा हो इसपर पानीकी अवरोधक शक्ति कम पड़े । इसपातकी मजबूत नलीके अन्दर कई कम्पार्टमेंट बने रहते हैं । सिरके नजदीकवाले कम्पार्टमेंटमें विस्फोट पदार्थ भरे रहते हैं और टारपीडोकी नाकपर एक फ्यूज-पिन लगा रहता है, जिसका अधिकांश भाग टारपीडोके भीतर घुसा रहता है, केवल थोड़ा-सा भाग सामने निकला रहता है । जिस वक्त टारपीडो अपने लक्ष्यसे जाकर टकराता है, यह फ्यूज-पिन धक्केके साथ भीतर रखे हुए विस्फोटक पदार्थमें घुसती है । बस समूचा टारपीडो विस्फोट कर जाता है और लक्ष्यको तथा स्वयं अपने अंगकी भी चुन्नी-चुन्नी उड़ा देता है ।

विस्फोटक पदार्थके पीछेवाले कम्पार्टमेंटमें संकुचित वायु भरी रहती है जो टारपीडोके इञ्जिनका संचालन करती है । यही इञ्जिन टारपीडोके प्रोपेलरको घुमाता है । इस प्रोपेलरके घूमनेसे टारपीडो तीव्र-गतिसे आगेको भागता है । इञ्जिनके कम्पार्टमेंटमें अनेक और यन्त्र भी रखे रहते हैं, जो टारपीडोपर भिन्न-भिन्न प्रकारके नियन्त्रण रखनेमें मदद करते हैं । इन यन्त्रोंकी सहायतासे टारपीडोको एक खास दिशामें और पानीकी एक खास गहराईपर भेजा जा सकता है । आधुनिक टारपीडोमें छोटे-बड़े कुल मिलाकर ६००० भिन्न-भिन्न पुर्जे फिट किये हुए रहते हैं । संकुचित वायुके कम्पार्टमेंटके पीछे इञ्जिन और गायरोस्कोप रहते हैं । टारपीडोकी पूँछमें हाइड्रोप्लेन 'पतवारें' लगी रहती हैं ।

कोनिंग टावरमें बैठा हुआ अफसर शत्रुके जहाजका बिम्ब पेरिस्कोप-में देखते ही बिजलीका बटन दबाता है । बटनके दबते ही टारपीडो झट



सबमैरीनसे बाहर निकल पड़ता है और टारपीडोके अन्दरके सभी यन्त्र चालू हो जाते हैं तथा मीलोंतक टारपीडोको तीव्रगतिसे लक्ष्यकी ओर पानीके अन्दर भगाये लिये जाते हैं। आधुनिक युद्धके सबसे महंगे अस्त्रोंमें टारपीडोकी गिनती होती है। कुछके दाम तो अस्सी-नब्बे हजार रुपयोंसे भी ज्यादा होते हैं।

आकारमें भी सबमैरीनने काफी उन्नति की है—कोई-कोई तो ३६० फुटतक लम्बाईमें पहुँचते हैं। बड़े मुँहवाली तोपें भी इनपर फिट की जाती हैं और कुछ सबमैरीनोंके अन्दर तो हवाई जहाजतक रखनेका इन्तजाम रहता है। चारों ओरसे बन्द एक बड़े कमरेमें हवाई जहाज रखा जाता है। वस चुपकेसे पानीके अन्दर-अन्दर चलकर दुश्मनके जहाजोंके ठीक नजदीक पहुँचकर सबमैरीन पानीकी सतहपर उतरा आता है। वस क्षणभरमें हवाई जहाज ऊँचे आकाशमें उड़कर शत्रुके जहाजपर गोले बरसा सकता है।

### डेपथचार्ज

सबमैरीनके खिलाफ प्रयुक्त होनेवाला सबसे अधिक घातक अस्त्र 'डेपथचार्ज' है। एक साधारण-सी नौकापरसे भी 'डेपथचार्ज' सबमैरीनके निकट फेंका जा सकता है। 'डेपथचार्ज' एक साधारण पीपेकी शक्लका होता है जिसमें विस्फोटक पदार्थ भरे रहते हैं। इसका वजन लगभग तीन मन ठहरता है। विस्फोटके निमित्त इसमें टाइम-फ्यूज लगा रहता है। धीरेसे नाव या जहाजपरसे इसे पानीमें लुढ़का देते हैं अथवा विशेष ढंगके यन्त्र द्वारा इसे उछालकर ४०-५० गजके फासलेपर फेंक देते हैं। डेपथचार्ज फेंक देनेके बाद तुरन्त ही जहाज या नौका तेज रफतारसे दूर भागती है, ताकि डेपथचार्जके विस्फोटसे उसे क्षति न पहुँचे। डेपथचार्ज फेंकनेके पूर्व शत्रुके सबमैरीनकी स्थिति और गहराईका ठीक-ठीक पता ध्वनि-यन्त्रोंकी सहायतासे मालूम कर लेते हैं। फिर डेपथचार्जका फ्यूज इस तरह सेट करते हैं कि वह ठीक उसी गहराईपर जाकर फटे। सबमैरीनके निकट जब डेपथचार्ज विस्फोट करता है तो पानीके अन्दर

शक्तिशाली लहरें उत्पन्न होती हैं जिनके दबावसे सबमैरीनका ढाँचा टूट जाता है। यदि सबमैरीन अधिक फासलेपर हुआ तो भी डेपथचार्ज द्वारा उसे इतनी क्षति पहुँच सकती है कि उसकी चदरें ढीली पड़ जायँ और वह इस योग्य न रहे कि ऊपर सतहपर आ सके। शत्रु-जहाजों द्वारा घिर जानेपर सबमैरीन चुपचाप गहराईमें प्रवेश करके बैठ जाता है। अपने इंजिनोंको वह फौरन ही बन्द कर देता है ताकि इंजिनोंकी ध्वनि शत्रुके ध्वनि-यन्त्रोंको उनका पता-ठिकाना न बता दे। डेपथचार्ज द्वारा विनष्ट होनेपर प्रायः सबमैरीनमेंसे तेल और हवाके बबूले पानीकी सतह-पर आ जाते हैं। कभी-कभी पानीकी तहमें छिपा हुआ सबमैरीन शत्रुके जहाजको धोखा देनेके लिए तेल और हवाके बबूले छोड़ता है। शत्रुके जहाज यह समझकर कि डेपथचार्ज द्वारा उन्होंने सबमैरीनको नष्ट कर दिया है, वहाँसे शीघ्र चले जाते हैं। अब मौका पाकर सबमैरीन वहाँसे भाग निकलता है। शत्रुके डरसे सबमैरीन अनिश्चित कालतक पानीकी तहमें छिपा नहीं रह सकता, क्योंकि आक्सीजन समाप्त हो जानेपर ताजी हवाके लिए उसे ऊपर कुछ कालके उपरान्त आना ही पड़ेगा।

## भूकम्प

जापान-सरीखे प्रदेशोंमें जहाँ आये दिन भूकम्प आया करते हैं, लोग भूकम्पकी विपदा सहनेके अभ्यस्त हो जाते हैं। किन्तु भारत और तुर्की आदि देशोंमें भूकम्प कभी-कभी ही आते हैं। फलस्वरूप ऐसे भूकम्पोंसे धन-जनको बेहद क्षति पहुँचती है। सन् १९३४ के बिहारके भूकम्पकी यादसे हम आज भी सिहर उठते हैं। सन् १९५० में आसाममें भी भारी भूकम्प आया था।

रातमें जो भूचाल आते हैं, उनमें धन-जनकी हानिकी अधिक



सम्भावना होती है। स्वयं हमारे ही देशमें यद्यपि सन् १९३५ के केंटाका भूचाल बिहारके भूचालकी अपेक्षा कम क्षेत्रमें फैला हुआ था तथा उसका कम्पन भी उतना तेज नहीं था, फिर भी क्वेटामें लगभग २५ हजार व्यक्ति मरे थे जबकि बिहारमें केवल ८ हजार व्यक्तियोंकी प्राण-हानि हुई। क्वेटाका भूचाल रातको बिना किसी प्रकारकी सूचनात्मक ध्वनिके ही आया था। किन्तु बिहारका भूकम्प दिनमें हुआ था और मुख्य धक्के पहले कई सेकेण्डतक जमीनके अन्दरसे तोपकी गड़गड़ाहट-सी आवाज भी आयी थी।

पहले जमानेमें जब प्रकृतिकी हर एक बात गूढ़ रहस्यसे भरी हुई समझी जाती थी, लोगोंने भूकम्पके कारणको भी रहस्यमय बताया था। किसीने बताया था कि शेषनागके फनपर टिकी हुई पृथ्वी उस समय हिलती है जब शेषनाग भूतलके निवासियोंके पापसे क्षुब्ध होकर फुफकार मारते हैं। किसीने कहा कि कच्छपकी पीठपर पृथ्वी स्थित है, जब कच्छप हिलता-डुलता है तो पृथ्वी भी हिलती है। किन्तु विज्ञानकी इस बीसवीं सदीमें ऐसी काल्पनिक बातोंमें कोई भी विचारशील व्यक्ति विश्वास नहीं कर सकता।

भूगर्भ-विद्याकी प्रगतिके साथ-साथ जब पृथ्वीके बारेमें लोगोंकी जानकारी बढ़ी, तब भूकम्पके सही कारणोंको लोगोंने पहचाना। पृथ्वीका भीतरी भाग अत्यन्त ही गरम है। इस असह्य तापके कारण पृथ्वीके गर्भमें स्थित लोहा, चट्टान तथा अन्य धातुएँ पिघलकर द्रव-रूप धारण कर लेती हैं। जब कभी किसी सूराखके रास्तेसे समुद्रका पानी इस भागमें पहुँच जाता है, तो इन पिघली चट्टानोंके स्पर्शसे तुरन्त ही वह भापमें परिवर्तित होकर ऊपरको निकलना चाहता है। पृथ्वीके ऊपरी पपड़ेको जहाँ कहीं कमजोर पाया, वहीं भाप उसे तोड़कर बाहर निकल आती है और अपने साथ लावा, पिघली चट्टान तथा कंकड़-पत्थरका गुबार ले आती है। ज्वालामुखी पर्वतके उद्गारका आरम्भ इसी प्रकार होता है। पृथ्वीका ऊपरी पपड़ा जब इस तरह टूटता है तो आसपासका

भूमिखण्ड आन्दोलित हो उठता है। तब हमें भूकम्पका भान होता है।

किन्तु सभी भूकम्प ज्वालामुखीके उद्गारसे उत्पन्न नहीं होते। पृथ्वीके अन्दर विशेष भारके कारण चट्टानें अकसर टूटकर नीचेको सरक जाती हैं। ऐसी हालतमें समूची पृथ्वीमें एक प्रकारका कम्पन उत्पन्न होता है। भूतलका वह भाग जो सरकनेवाली चट्टानोंके निकट होता है, सबसे अधिक आन्दोलित होता है।

कभी-कभी तो नीचेकी चट्टानोंके सरकनेसे धरतीका ऊपरी पपड़ा भी टूट जाता है और उसका एक भाग नीचेको और दूसरा ऊपरको सरक जाता है। विशेषज्ञोंका अनुमान है कि कुछ हजार वर्ष पहले भूकम्प अधिक भयावह हुआ करते थे, क्योंकि उन दिनों आजकी अपेक्षा पृथ्वी ज्यादा गरम थी। चट्टानोंका टूटना-फूटना और नये-नये पहाड़ोंके बननेका क्रम जारी था।

सूक्ष्मताके साथ अध्ययन करनेपर वैज्ञानिक इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जो भूकम्प ज्वालामुखीके कारण होते हैं उनका विस्तार बहुत अधिक नहीं होता। उनका कम्पन भूतलके एक परिमित क्षेत्रतक ही सीमित रहता है। जो भूकम्प विशेष रूपसे भयावह साबित हुए हैं वे सभी पृथ्वीके गर्भकी चट्टानोंके टूटनेसे पैदा हुए हैं। भयावहताका कारण यह न था कि पृथ्वीका तल दूरतक फट गया हो और समूचा शहर उसमें समा गया हो, बल्कि यह था कि पृथ्वीके आन्दोलित होनेसे मकान आदि ढह गये और लोग उनके नीचे दबकर मर गये अथवा गैसपाइपके फटनेसे आग समूचे शहरमें फैल गयी, जिससे धन-जनकी विशेष हानि हुई।

जब कभी भूकम्प समुद्रके किनारेके प्रदेशमें आते हैं तो समुद्र भी तीव्र वेगसे उद्वेलित हो उठता है। पानीकी ऊँची लहरें उठकर किनारे-पर मीलौतक फैल जाती हैं और जो कुछ भी रास्तेमें मिला उसे तबाह कर जाती हैं। सन् १७५५ में पुर्तगाल देशके लिसबन नगरके प्रलयकारी भूकम्पमें समुद्रसे ६० फुट ऊँची लहरें उठीं, जिन्होंने नगरके ६० हजार व्यक्तियोंकी जिन्दगी समाप्त कर दी। किनारेपर खड़े हुए जहाज मीलौ



भीतर नगरमें घसिट गये और जब लहरें वापस लौटीं तो ये जहाज वहीं सूखी जमीनपर छूट गये ।

चट्टानोंके सरकनेसे जब भूकम्प आते हैं तो मुख्य धक्केके बाद भी अन्य छोटे-छोटे धक्के लगते हैं; क्योंकि भारी चट्टान जब टूटती है तो कुछ समयतक आसपासकी हलकी चट्टानोंका टूटना और सरकना जारी रहता है । सन् १९२३ में जो प्रलयकारी भूकम्प जापानमें आया था, उस सिलसिलेमें सालभरतक लगभग १२०० हलके धक्के जापानवालोंने महसूस किये थे । १५ जनवरी सन् १९३४ के बिहारके भूकम्पके बाद २० जनवरीतक २८ हलके धक्के सिस्मोग्राफ यन्त्रने अंकित किये थे । फिर २२ जनवरीको चीनमें तथा २९ जनवरीको मैक्सिकोमें भी भयंकर भूकम्प आये थे । भूतत्त्ववेत्ताओंका खयाल है कि सम्भवतः इन तीनों भूकम्पोंमें घनिष्ठ सम्बन्ध था ।

अभी हालतक लोगोंका खयाल था कि भूकम्पका केन्द्र पृथ्वीके गर्भमें बहुत काफी गहराईपर होता है । किन्तु भूतत्त्ववेत्ताओंने इस सम्बन्धमें अनुसन्धान करके यह निष्कर्ष निकाला है कि भूकम्पका केन्द्र कभी भी पृथ्वीके अन्दर २० मीलसे अधिक गहराईपर नहीं होता । प्रायः १० या ५ मीलकी गहराईपरकी चट्टानें टूटतीं और ऊपर-नीचेको सरकती हैं । पृथ्वीतलके उस स्थानको, जो इस केन्द्रके ठीक ऊपर होता है, भूकम्पका केन्द्र कहते हैं ।

केन्द्रके समीप जमीनपर रखी हुई चीजें ऊपरको फिक उठती हैं । कई स्थानोंपर रखी हुई चीजें किस दिशामें उछलती हैं, इसे नोट कर लेते हैं । फिर चार्ट तैयार कर देखते हैं कि ये दिशासूचक रेखाएँ बढ़ानेपर किस बिन्दुपर मिलती हैं । इस प्रकार आसानीसे मालूम कर लेते हैं कि भूकम्पका केन्द्र पृथ्वीतलसे कितनी गहराईपर स्थित है ।

भूकम्पके समय जो बड़ी-बड़ी इमारतें ढह जाती हैं, पुल टूट जाते हैं, वह इसलिए नहीं कि पृथ्वीकी सतहमें कुछ बहुत ज्यादा कम्पन होता है; वरन् इसलिए कि भूकम्पके समय पृथ्वीके पपड़ेमें जो कम्पन होता

है उससे एक जवर्दस्त झटका लगता है। किसी ऊँची चिमनीको हलका-सा धक्का किन्तु तेज झटकेके साथ दीजिये, वह चिमनी फौरन धराशायी हो जायगी।

इस सिलसिलेमें एक दिलचस्प प्रयोगका जिक्र करना अनुपयुक्त न होगा। एक लम्बी मेजपर वच्चोंके खेलनेवाली पत्थरकी गोली रख दीजिये और मेजके एक सिरेपर हथौड़ीसे शीघ्रताके साथ चोट कीजिये। इस झटकेकी चोटसे मेजका धरातल मुश्किलसे एक या दो सूत ऊपर उठेगा, किन्तु मेजपर रखी हुई गोली कई इंच ऊपर उछल उठेगी। ठीक यही सिद्धान्त भूकम्पके समय भी काम करता है। पृथ्वीके ऊपरी पपड़ेमें धीमा-सा झटका लगता है, किन्तु पृथ्वीपर खड़ी हुई इमारतोंमें उस झटकेके कारण बहुत ज्यादा हरकत होती है।

भूकम्पके झटकेके कारण पृथ्वीमें तीन भिन्न प्रकारकी तरंगें अथवा कम्पन उत्पन्न होते हैं। एक तो वह कम्पन जो पृथ्वीके ऊपरी ठोस पपड़ेसे होकर आगेको बढ़ता है—भूकम्पके समय हम प्रायः इसी कम्पनको महसूस कर पाते हैं। यह धरातलका कम्पन होता है। जिस प्रकार तालाबके पानीमें ऊपर धरातलपर लहरें उठती हैं और तब पानीमें कम्पन उत्पन्न होता है ठीक उसी प्रकार भूतलके धरातलपर भी कम्पन उत्पन्न होता है।

इसके अतिरिक्त भूकम्पके केन्द्रसे वेधशालातक बिल्कुल सीधी रेखाओं में भी जमीनके भीतरसे दो भिन्न प्रकारकी तरंगें आती हैं। स्थानाभावसे इन कम्पनोंके बारेमें विस्तृत रूपसे हम यहाँ कुछ नहीं लिख सकते। इतना बता देना काफी होगा कि ये दोनों कम्पन भिन्न-भिन्न गतिसे पृथ्वीके भीतरी भागसे होकर आगेको बढ़ते हैं। वेधशालाओंमें रखा हुआ सिस्मोग्राफ यन्त्र इन दोनों कम्पनोंको, जब वे उस वेधशालातक पहुँचते हैं, अंकित कर लेता है। इनके पहुँचनेके अन्तरसे यह भी मालूम कर लिया जाता है कि इन कम्पनोंका स्थान कितनी दूर है कि यहाँतक पहुँचते-पहुँचते दोनोंमें इतने सेकेण्डका अन्तर पड़ गया। फिर



दो-तीन और वेधशालाओंमें भी उक्त केन्द्रकी दूरी इसी रीतिसे मालूम कर लेते हैं और तब ज्यामितिकी मददसे भूतत्त्ववेत्ता मालूम कर लेता है कि पृथ्वीके किस स्थानपर इस भूकम्पका केन्द्र स्थित है।

विज्ञान अभी इस योग्य नहीं हो पाया है कि वह भूकम्पके बारेमें भविष्यवाणी कर सके और इस प्रकार मनुष्य जातिको इस भयंकर विपदासे बचा सके, फिर भी वैज्ञानिक इस दिशामें काफी प्रयत्नशील हैं। पिछले कई वर्षोंसे संसारके भूकम्पका लेखा रखा जा रहा है और इस बातके मालूम करनेकी कोशिश की जा रही है कि भूकम्पका सम्बन्ध पृथ्वीपर होनेवाली अन्य प्राकृतिक घटनाओंसे है या नहीं। औसत रूपसे प्रति वर्ष ४००० छोटे-बड़े भूकम्प आया करते हैं, जिनमें अधिकांशमें कम्पन बहुत ही थोड़ा होता है—साधारण जनताको पता भी नहीं लगने पाता कि कब भूकम्प आया। जाड़ेमें भारतीय भूकम्पोंका इतिहास देखनेसे पता चलता है कि भारतमें सभी विध्वंसकारी भूकम्प हिमालय पर्वतके ढालसे लगे प्रदेशोंमें ही आते रहे हैं और आसामकी घाटीमें तो पिछले १०० वर्षमें लगभग १२ विशेष रूपसे भयंकर भूकम्प आये हैं। अनुमान किया जाता है कि आसामका सन् १८९७ का भूकम्प कदाचित् मानव इतिहासका सबसे अधिक विध्वंसकारी भूकम्प था। इसके प्रतिकूल दक्षिण भारतमें कभी भी कोई बड़ा भूकम्प नहीं आया। भूतत्त्ववेत्ताओंके मतानुसार उत्तर भारतके भूकम्पोंकी उत्पत्तिके पीछे हिमालय पर्वतश्रेणीके शिलाखण्डोंकी हरकत है।

प्रायः यह भी देखा गया है कि भूकम्प-प्रधान देशोंमें भारी भूकम्पोंकी एक नियतकालके उपरान्त पुनरावृत्ति हुआ करती है। जापानमें पिछले भयंकर भूकम्पोंका विवरण देखनेसे मालूम होता है कि प्रति १३ वें वर्ष वहाँ एक भयंकर भूकम्प अवश्य आता है। भूकम्पोंके बारेमें और भी अनेक दिलचस्प बातें नोट की गयी हैं। उदाहरणके लिए, बड़े भूकम्प प्रायः जाड़ेकी ऋतुमें आते हैं। अमावास्या या पूर्णिमाके दिन इन

भूकम्पोंके आनेकी सम्भावना अधिक रहती है। बिहारका भूकम्प अमावास्याके दिन आया और तुर्कीका पूर्णिमाके दिन आया था।

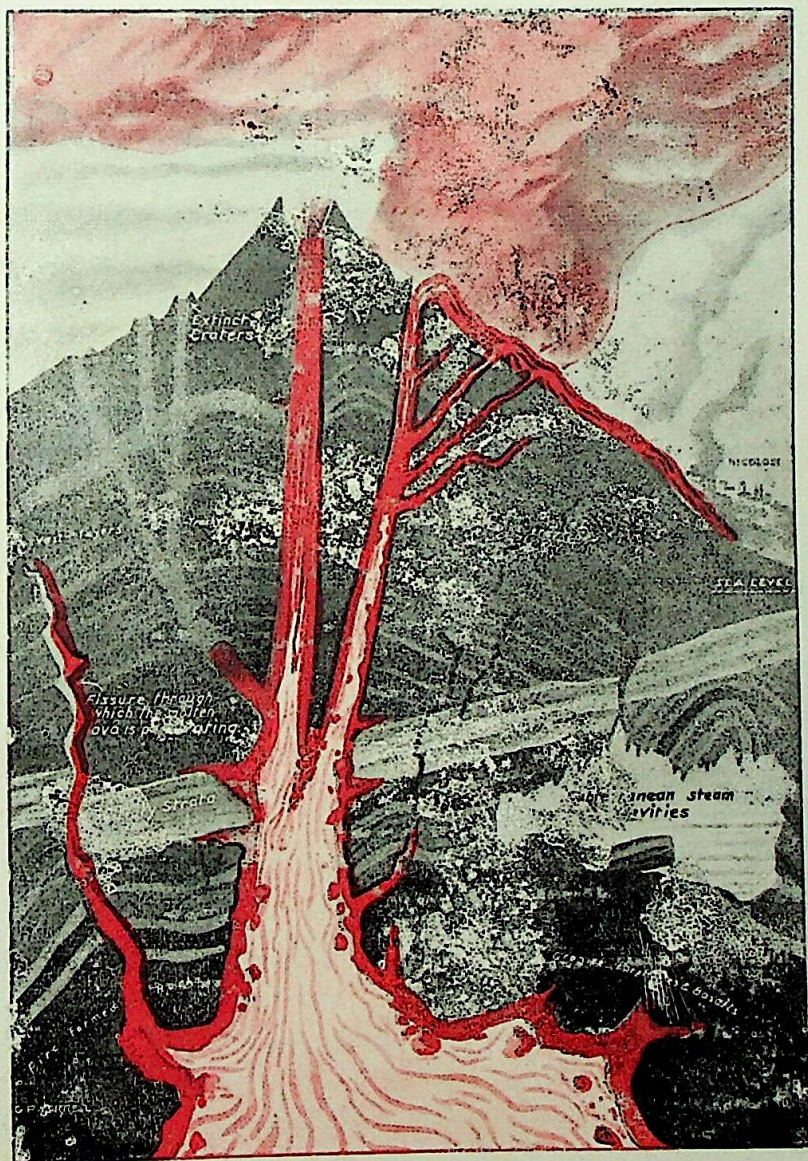
## वैज्ञानिक पृथ्वीके भीतर कैसे देखता है ?

विज्ञानकी प्रगतिके पीछे एक उत्कट अभिलाषा जानकारी हासिल करनेकी काम करती है। वैज्ञानिककी नस-नसमें कौतूहल भरा हुआ है। अपनी इस ज्ञान-पिपासाकी तृप्तिके लिए वह घण्टों प्रयोगशालामें बैठा टेस्ट-ट्यूब और तरह-तरहके रासायनिक पदार्थोंके साथ माथापच्ची करता है। रात-रातभर ठण्डकमें दूरबीन लगाये आकाशके नक्षत्रोंको एकटक देखता रहता है, यह पता लगानेके लिए कि दूरके टिमटिमाते तारे हमारी पृथ्वी-से कितनी दूर हैं, उनका तापक्रम क्या है, वहाँ कौन-कौन-सी गैसें पायी जाती हैं, जीवधारी वहाँ जिन्दा रह सकते हैं या नहीं।

अनन्त अन्तरिक्षमें अपनी दूरबीनकी सहायतासे लाखों-करोड़ों मील दूर प्रवेश करनेपर भी उसकी ज्ञान-पिपासा शान्त नहीं होती। वह पृथ्वीके गर्भके भीतरका रहस्य भी जानना चाहता है। वह इस बातका पता लगाता है कि पृथ्वीके अन्दर कौन-कौनसे पदार्थ मौजूद हैं। जिस तरह वैज्ञानिक शायद मंगल ग्रह तक कभी भी पहुँच न पाया, फिर भी उसके बारेमें वह काफी जानकारी रखता है, उसी तरह पृथ्वीके गर्भमें वैज्ञानिक स्वयं कभी न पहुँच पायेगा, किन्तु फिर भी विज्ञानके नूतनतम यन्त्रोंकी मददसे वह ठीक बतला सकता है कि अमुक स्थानपर पृथ्वीके भीतर लोहा है या कोयला, या मिट्टीके तेलका सोता।

भूगर्भ-विद्याका आरम्भ आजसे ३०० वर्ष पहले स्वीडनमें हुआ था। वहाँके इञ्जीनियरोंने पहली बार कुतुबनुमाकी सुईका प्रयोग लोहेकी खानोंका पता लगानेके लिए किया। इसके उपरान्त बहुत दिनोंतक









इस चुम्बक सुईका प्रयोग केवल कच्चे लोहेकी खानोंका पता लगानेके निमित्त होता रहा ।

इस दर्मियान भौतिक विज्ञानने भी काफी उन्नति की । वैज्ञानिकोंने वर्षोंके अथक परिश्रमके उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला कि संसारके सभी पदार्थ दो श्रेणियोंमें विभाजित किये जा सकते हैं । एक तो वे पदार्थ जिनमें चुम्बकीय शक्ति आसानीसे प्रवेश कर सकती है और दूसरे वे, जिनमें चुम्बकीय शक्तिको प्रवेश करनेमें रुकावट होती है । अब तो इस प्रकारके यन्त्र बन गये हैं जिनकी मददसे चुम्बकीय गुणोंमें तनिक भी अन्तर पड़नेपर हम फौरन उसका पता लगा लेते हैं । एक स्थानसे दूसरे स्थानपर इस यन्त्रको ले जायँ तो यदि पृथ्वीके अन्दरकी चीजोंके चुम्बकीय गुणमें हजारवें हिस्सेका भी अन्तर है, तो आपका यन्त्र फौरन आपको इसकी खबर देगा । इस यन्त्रकी मददसे अमेरिकामें सैकड़ों नमककी खानें, लोहेकी खानें और तेलके सोते वैज्ञानिकोंने ढूँढ़ निकाले हैं । विशेषज्ञोंका दावा है कि इस यन्त्रकी सहायतासे दक्षिण अफ्रीकामें सोनेकी खानोंका पता चला है—और पहलेकी अपेक्षा सोनेका निकास २५ प्रतिशत बढ़ गया है ।

यह सही है कि सोना स्वयं इस यन्त्रको प्रभावित नहीं करता, किन्तु भूगर्भ-विद्याकी जानकारी रखनेवाले लोग जानते हैं कि सोना अकसर उन चट्टानोंके बीच पाया जाता है जिनमें 'मैग्नेटाइट' का अंश प्रचुरतासे मौजूद रहता है; और 'मैग्नेटाइट' में चुम्बकीय शक्तिकी ग्रहण-शीलता भी बहुत ज्यादा होती है—१०० फुट मोटी चट्टानके नीचे भी यदि 'मैग्नेटाइट' मौजूद हो तो वह इस यन्त्रको प्रभावित कर सकता है ।

इस चुम्बकीय शक्तिके अतिरिक्त भूगर्भ-विद्याके पण्डितोंके लिए एक दूसरा साधन भी मौजूद है—वह है गुरुत्वाकर्षण । न्यूटनने बताया है कि प्रत्येक वस्तु अपने आसपासकी चीजोंको अपनी ओर खींचती है—यह आकर्षण-शक्ति उस वस्तुके भारीपनके लिहाजसे कम और ज्यादा हुआ करती है । अतः पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति उस स्थानपर जहाँकी



चट्टानें बालू और साधारण मिट्टीकी बनी हैं, अपेक्षाकृत कम होती है। किन्तु जिस स्थानपर चट्टानोंमें लोहा, सोना या चाँदी मौजूद रहती है वहाँ पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति अवश्य ही ज्यादा होगी।

आजसे ५० वर्ष पूर्व भौतिक विज्ञानके एक प्रोफेसरने इस आकर्षण-शक्तिके आधारपर एक बढ़िया यन्त्रका निर्माण भी किया। पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिमें यदि सूक्ष्म अन्तर भी पड़े तो इस यन्त्रके जरिये हम उसका पता पा सकते हैं। इस यन्त्रको लेकर इन्जीनियर पैसाइश करने-के लिए दौरेपर निकल जाता है। अमेरिकाके टेक्सास और लूजियानाकी रियासतोंमें तो इस यन्त्रने बीसों तेलके सोते ढूँढ़ निकाले हैं।

तेलके सोतोंका पता लगानेके लिए खास तौरसे 'सिस्मोग्राफीका' तरीका इस्तेमालमें लाते हैं। 'सिस्मोग्राफ' यन्त्रकी ईजाद भूचालके कम्पनका अध्ययन करनेके लिए की गयी थी। हम पिछले प्रकरणमें देख चुके हैं कि भूचालके समय पृथ्वीके ऊपरी पपड़ेमें कम्पन उत्पन्न होता है जो चट्टानोंसे होकर दूरतक पहुँच जाता है। जब यह कम्पन 'सिस्मोग्राफ' तक पहुँचता है तो यह यन्त्र हिलने लगता है और वहाँ स्वयं ही एक कार्बन पेपरपर कम्पन अंकित हो जाता है। इस कम्पनकी रफ्तारसे वैज्ञानिक बखूबी वाकिफ है। अतः फौरन बता देता है कि पूना आबजर्वेटरीसे ३५०० मीलकी दूरीपर भूचालका केन्द्र है। इसी समय लन्दन स्थित 'सिस्मोग्राफ' बताता है कि भूचाल जहाँसे शुरू हुआ है, वह स्थान लन्दनसे १५०० मील दूर है। बस पता लग जाता है कि अमुक नगरमें भीषण भूचाल आया है।

पृथ्वीके अन्दर कम्पन भिन्न-भिन्न चट्टानोंमें भिन्न-भिन्न गतिसे प्रवेश करता है, अतः पृथ्वीके अन्दर किस तरहकी चट्टान मौजूद है, इसकी जानकारी हासिल करनेके लिए वैज्ञानिक कृत्रिम ढंगसे भूचाल उत्पन्न करता है। 'डायनामाइट'को एक गड्ढेमें रखकर विस्फोट करा देते हैं, बस दूरतक पृथ्वी काँप उठती है। इस स्थानके चारों ओर दूरतक 'सिस्मोग्राफ' जगह-जगह लगा दिये जाते हैं और उनकी सहायतासे



फौरन कम्पनकी रफ्तार मालूम कर ली जाती है। अकसर तो ये 'सिस्मोग्राफ' दस मीलकी दूरीपर भी रखे गये हैं। कम्पनका अध्ययन करनेके बाद इंजीनियर आपको बतलायेगा कि यहाँपर अमुक किस्मकी चट्टान इतने फुट नीचे मौजूद है।

इसके पहले इंजीनियर लम्बी बर्मीको विद्युत्-शक्तिसे परिचालित करके जमीनमें जगह-जगह सूराख करके देखता था कि यहाँ तेल तो नहीं है। इस अटकल-पच्चूवाले तरीकेमें समय भी बहुत बरबाद होता था और पैसे भी नाहक खर्च होते थे।

तेलके सोतेके लिए गुरुत्वाकर्षण और सिस्मोग्राफके तरीके निस्सन्देह बड़े कारामद साबित होते हैं। किन्तु धातुओंकी खानके लिए विद्युत्-यन्त्रोंकी सहायता अधिकतर ली जाती है। कच्ची धातुओंसे होकर भी विद्युत्-धारा प्रवाहित हो सकती है। जमीनके अन्दर बिजलीके तार जोड़ देते हैं और उन दोनोंके बीच बिजली प्रवाहित कराते हैं। यदि जमीनके अन्दर धातुएँ हुईं तो विद्युत्-धाराके प्रवाहित होनेमें मदद मिलती है। अन्यथा बहुत कम बिजली प्रवाहित हो पाती है।

इण्डक्शन क्वायलके जरिये भी पृथ्वीके अन्दरकी धातुओंका पता लगाया जा सकता है। यूरोपीय मुल्कोंमें इंजीनियरोंके पास हेडफोन और इण्डक्शन क्वायल-युक्त यन्त्र मौजूद रहता है। गैस या पानीके नलमें किसी किसकी खराबी हुई और उसकी मरम्मत करना है, तो यहाँके मिस्त्रियोंकी तरह वे समूची सड़क नहीं खोद डालेंगे, वरन् उक्त यन्त्रको कानमें लगाकर सड़कपर तलाश करेंगे कि यह नल किस स्थानपर जमीनके अन्दर गड़ा हुआ है। इसी ढंगके यन्त्रोंकी मददसे कुहरेके समय जहाज बन्दरगाहके अन्दर आसानीसे प्रवेश करता है। बन्दरगाहसे समुद्रमें ४-५ मील दूरतक एक लम्बा केबुल तार बिछा दिया जाता है। इस तारमें 'आल्टरनेटिंग' करेण्ट प्रवाहित की जाती है। जिस समय जहाज बन्दरगाहके नजदीक पहुँचता है, जहाजका संचालक हेडफोन कानमें लगाता है, तथा इण्डक्शन क्वायलकी मददसे पानीमें गड़े हुए तारकी

टोह लेता है और इस तरह निरापद बन्दरगाहके अन्दर प्रवेश करता है ।

सोनेका पता लगानेके लिए अमेरिकाके एक इन्जीनियरने रेडियो-तरंगोंके प्रयोगका तरीका ईजाद किया है । उसका कहना है कि मील भर नीचे जमीनके अन्दर भी सोना मौजूद हो तो इस यन्त्रकी सहायतासे उसका पता लग सकता है । उसने एक रेडियो यन्त्र बनाया है, जिसमें रेडियो-तरंगें उत्पन्न की जाती हैं । ये तरंगें स्वर्णके अणुओंसे विशेषरूपमें प्रभावित होती हैं । प्रमुख वैज्ञानिकोंके सम्मुख उक्त इन्जीनियरने इस यन्त्रका प्रदर्शन किया है । २६ प्रकारकी भिन्न-भिन्न धातुएँ इस यन्त्रसे कुछ दूरीपर रखी गयीं । किन्तु अकेले स्वर्णसे ही यह यन्त्र प्रभावित हुआ । अन्य कोई धातु यन्त्रमें किसी किसीकी हरकत उत्पन्न न कर सकी । पूरे १२ वर्षतक अनुसन्धान करनेके उपरान्त इस यन्त्रका निर्माण सम्भव हो सका है । आविष्कर्त्ताको आशा है कि समुद्रमें डूबे हुए जहाजमें सोना था या नहीं, इसका भी पता इस यन्त्रकी वदौलत वह लगा सकेगा ।

## भविष्यके वायुयान

वायुयानोंका इतिहास कुछ बहुत अधिक दिनोंका नहीं है । राइट ब्रदर्स फ्रांसमें जिस दिन पहली बार अपनी माडल मशीनमें बैठकर आसमानमें उड़े थे, उस दिन फ्रांसभरमें इस बातपर लोगोंने आश्चर्य किया था कि बिना जमीनको छूये हुए पूरे एक मीलका सफर राइट ब्रदर्सने पूरा कैसे कर लिया । उस युगके लिए यह एक अनहोनी घटना थी । लोगोंने जल्दी विश्वास नहीं किया कि मनुष्य हवामें मशीनकी मददसे उड़ सकता है । कहा जाता है कि कुछ गणितज्ञोंने तो गणितके सिद्धान्तोंपर यह साबित करनेकी कोशिश भी की थी कि मनुष्य कदापि



हवामें उड़ नहीं सकता। यह सन् १९०८ की बात है। किन्तु दो ही तीन सालके दर्मियान यूरोप और अमेरिकामें तरह-तरहके वायुयान बनने लगे। आये दिन दौड़की प्रतियोगिताएँ होने लगीं। किसीने इंग्लिश चैनल पार किया तो किसीने अन्य लम्बी उड़ान ली।

इतनेमें जर्मनीकी लड़ाई छिड़ गयी और वायुयान, जो केवल दिल-बहाव तथा हिस्मतके खेलका साधन समझा जाता था, अब युद्धका एक शक्तिशाली अस्त्र साबित हुआ। यूरोपीय महायुद्धके उन चार वर्षोंमें वायुयानके आकार, मजबूती और रफ्तारमें आश्चर्यजनक उन्नति एवं सुधार हुए। जर्मनीने जो प्रथम वायुयान युद्धके मैदानमें इस्तेमाल किया था, उसकी रफ्तार केवल ६० मील प्रति घण्टे थी और उस वायुयानके भीतर न कोई तोप थी न मशीनगन। कुल दो सैनिक हाथमें रिवाल्वर लेकर बैठे हुए थे, जो दुश्मनकी फौजपर जितनी फुर्तीसे हो सकता था, गोलियाँ चलाते थे। किन्तु शीघ्र ही मशीनोंसे युक्त वायुयान २०० मील प्रति घण्टेकी चालसे उड़ते हुए युद्ध-स्थलमें नजर आने लग गये थे और १५० फुट लम्बे इन वायुयानोंपर विशालकाय तोपें फिट की गयी थीं, जो प्रति मिनट ६०० बार फायर करती थीं।

युद्धके दिनोंमें वायुयानको जो प्रोत्साहन मिला, वह शान्तिके दिनोंमें भी बराबर काम करता रहा। फौजके कामके लायक तथा नागरिकोंकी आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिए, दोनों तरहके वायुयानोंके सम्बन्धमें नये-नये आविष्कार निरन्तर होते रहे। अटलाण्टिक पार करनेका रेकॉर्ड किसीने स्थापित किया तो कोई लन्दनसे भारतको (४१३० मील) बिना कहीं रास्तेमें रुके हुए उड़ा। कितने साहसी वीर सैन-फ्रान्सिस्कोसे न्यूयार्कको उड़े और कितने उत्तर ध्रुवका चक्कर लगा आये। हर एकने वायुयानको इंच-इंच करके विकासके पथपर आगे बढ़ाया।

धीरे-धीरे वायुयानोंपर रेल-जहाजके बराबर ही भरोसा किया जाने लगा। घड़ीकी भाँति समयकी पाबन्दी करनेमें वायुयान समर्थ हुए। फलस्वरूप अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, भारतने एक-राय होकर अन्तर्देशीय

पैमानेपर डाक और सवारी ढोनेका काम वायुयानोंसे लेना शुरू किया। टाइमटेबिलके अनुसार ठीक समयपर अमेरिकाका वायुयान इंग्लैण्डके वायुयानको डाक सुपुर्द कर देता और इंग्लैण्डका हवाई जहाज ठीक टाइमपर फ्रांसके एयरोड्रोमपर डाक उतारता।

जो यात्रा दो सप्ताहमें रेल और समुद्री जहाजकी मददसे पूरी होती थी, वही यात्रा चार-पाँच दिनके अन्दर समाप्त हो जाती है। ये जहाज पहले केवल दिनको उड़ते थे। किन्तु अब रातके समय भी ये अपनी यात्रा जारी रखते हैं।

प्राचीन कालमें लोग बदरीनाथ-द्वारकापुरीकी यात्राको जाते थे तो वसीयत पहले ही लिख जाते थे। किन्तु अब वायुयानकी यात्रा भी इतनी निरापद हो गयी है कि एकदम निश्चिन्त होकर लोग हवाई जहाजमें बैठकर हजारों मीलका सफर सौ-डेढ़-सौ मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे करते हैं।

रफ्तार, ऊँचाई तथा मजबूतीमें वायुयानोंने तीव्रगतिसे उन्नति की है। मीलों ऊँचे आकाशमें उड़नेकी निरन्तर कोशिश की जा रही है ताकि अधिकसे अधिक तेज रफ्तार हासिल की जा सके।

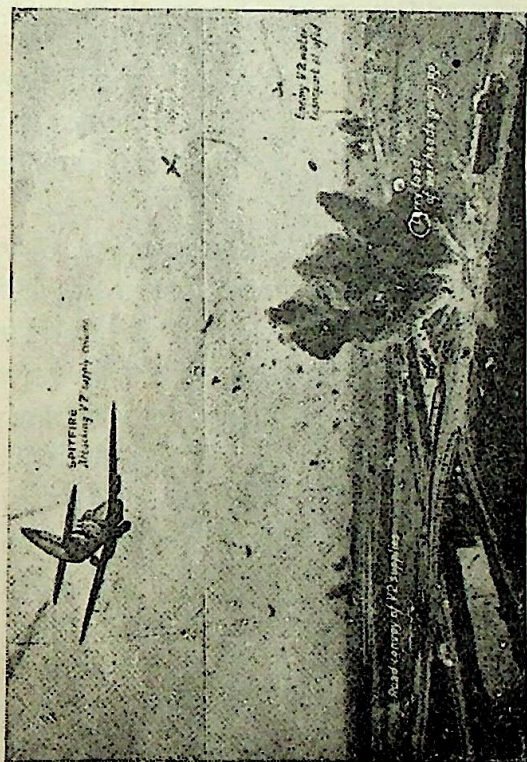
आश्चर्य नहीं कि हममेंसे कितने ही लोग एक दिन ऐसे हवाई जहाज देखेंगे जो ७००-१००० मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे आकाशमें बिजलीकी तेजीसे उड़ा करेंगे। आटोजायरो वायुयान तो यूरोपमें अब काफी अधिक संख्यामें देखनेको मिलते हैं। इन वायुयानोंमें ऊपरकी ओर प्रोपेलर जैसे पंखे लगे रहते हैं और उनकी मददसे ये वायुयान एकदम सीधे ऊपरको उठ जाते हैं। इन्हें आकाशमें उठनेके निमित्त दौड़ लगानेके लिए लम्बे मैदानकी जरूरत नहीं। मकानकी छतोंसे सीधे ये ऊपरको उठ जाते हैं। जहाजके डेकसे भी ये ऊपरको आसानीसे उड़ जाते हैं।

कुछ विशेषज्ञोंका तो खयाल है कि शीघ्र ही ऐसे वायुयान भी बनने लगेंगे जो छोटे साइजके होंगे और उनपर सवार होकर हम ऊँचे-ऊँचे



पेड़ोंसे फल तोड़नेका काम ले सकेंगे तथा आग लगनेपर अठमंजिलेपरसे मनुष्योंको जल्दीसे उतार लायेंगे तथा निस्सन्देह जिस दिन इस तरहके वायुयान बनने लग जायेंगे, लोगोंके अन्दर मोटर और साइकिलोंकी भाँति छोटे-छोटे वायुयानोंका भी प्रचार हो जायगा।

वायुयानकी रफ्तार बढ़ानेके रास्तेमें अनेक अड़चनें हैं। हर एक चीज जब हवामें हरकत करती है, तो हवाके कारण उसपर रुकावट पैदा



ब्रिटिश स्पिटफायर वायुयान

होती है। जितना चौड़ा धरातल होगा, उतनी ही अधिक हवाकी रुकावट उसके ऊपर होगी। इसलिए रफ्तार बढ़ानेके लिए हवाकी मुखालफत

भी कम करनेकी जरूरत होती है। हवाकी अवरोधक शक्ति कम करनेके लिए इंजिनको स्टीम लाइन बनाना आवश्यक हो जाता है। स्टीम लाइन बनानेके लिए इंजिनकी शकल इस तरह बनानी पड़ती है कि इंजिनसे टकराने पर हवा अधिक क्षुब्ध न हो।

जर्मनीमें कुछ रेलगाड़ियाँ इतनी खूबीके साथ स्टीम लाइन की गयी हैं कि जिस समय वे ९० मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे प्लेटफार्मसे होकर गुजरती हैं, प्लेटफार्मपर हवामें तनिक भी जुम्बिश नहीं होती। आप हाथमें रूमाल लेकर प्लेटफार्मपर खड़े रहें, तो समूची ट्रेन निकल जायगी और आपके रूमालमें जरा-सी फड़फड़ाहटतक न होगी। किन्तु हमारे देशमें ट्रेनें अभी स्टीम लाइन नहीं हुई हैं। अतः जब एक्सप्रेस ट्रेन ४० मीलकी रफ्तारसे प्लेटफार्मसे गुजरती है तो वहाँपर मानों एक आँधी-सी आ जाती है।

किन्तु स्टीम लाइन वायुयानोंकी भी रफ्तार जब चार सौ मील प्रति घण्टेसे ऊपर पहुँचती है, तो वायुमण्डलके जर्ने उससे इतने जोरोंके साथ टकरा खाते हैं कि उनकी रगड़से जो गर्मी पैदा होती है। उससे वायुयान-के प्रोपेलर और पंखोंके जल उठनेका खतरा रहता है। इसलिए ५०० मील प्रति घण्टेकी रफ्तार प्राप्त करनेके लिए यह जरूरी समझा गया कि हवाई जहाज आसमानके उस भागमें उड़ें जहाँ हवाके जर्ने बहुत कम संख्यामें मौजूद हों। आसमानमें लगभग ४, ५ मीलकी ऊँचाईपर हवा बहुत पतली पड़ जाती है। अतः इसके जर्नेका घर्षण अधिक नहीं तोता। आसमानके इस ऊपरी भागको स्ट्रैटोस्फियर कहते हैं। स्ट्रैटोस्फियरमें उड़नेवाले हवाई जहाजोंकी रफ्तार सात सौ मीलतक पहुँच चुकी है और कोई वजह नजर नहीं आती कि निकट भविष्यमें अधिक शक्तिशाली इंजिनोंकी सहायतासे वायुयानोंकी गति और न बढ़ सके।

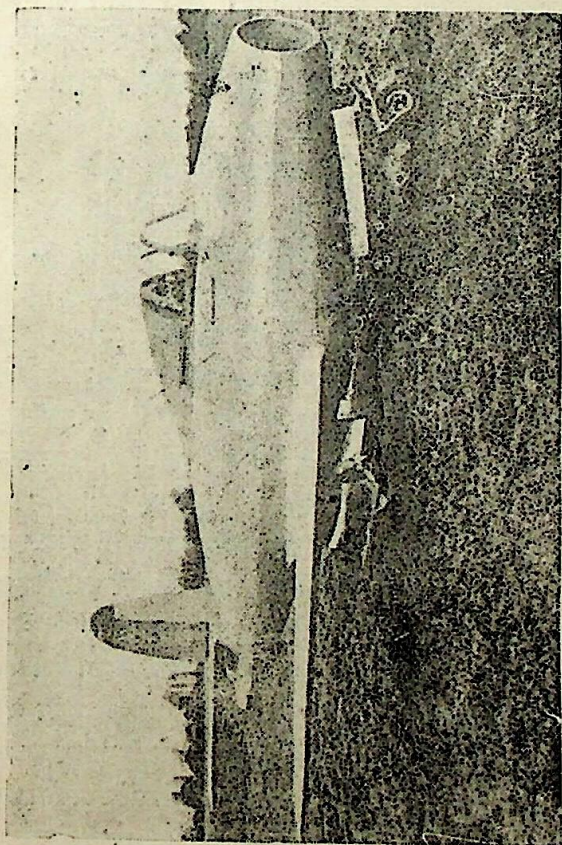
इस सम्बन्धमें भौतिक विज्ञानके ज्ञाताओंने बड़ी छानबीन की है। उनका कहना है कि जिस वस्तु प्रोपेलरके पंख 'ध्वनि' की गतिसे घूमते हैं, वे हवाके जर्नेको पकड़में नहीं ला सकते; नतीजा यह होता है कि



वायुयान आगेको नहीं बढ़ता । इस मुश्किलको भी हल करनेकी कोशिश की जा रही है ।

### जेट वायुयान

इंजीनियरोंने ऐसे वायुयानोंका निर्माण किया है जिनमें प्रोपेलर



ब्रिटेनका सर्वप्रथम जेट वायुयान

होते ही नहीं । ये जेट-वायुयान कहलाते हैं । गत युद्धके दौरानमें जेट वायुयानोंकी डिजाइनमें अनेक महत्वपूर्ण सुधारोंका समावेश किया गया

है। इसके विस्फोटक इंजिनमें पेट्रोलकी जातिके पदार्थ डाले जाते हैं तथा वायुयानके अग्रभागमेंसे होकर वायुमण्डलकी हवा भीतर आती है। इंजिनमें पेट्रोलके साथ इसका विस्फोट होता है। विस्फोटमें उत्पन्न हुई तप्त गैसों तीव्र वेगसे पीछेकी ओर भागती हैं—इनके धक्केसे वायुयान तेज रफ्तारसे आगेकी ओर भागता है। ऊर्ध्वाकाशमें ज्यों-ज्यों ऊँचे चढ़ते हैं, जेट वायुयानकी रफ्तार बढ़ती जाती है। क्योंकि ऊर्ध्वाकाशकी विरल वायुकी अवरोधक शक्ति भी घटती जाती है। प्रायः ये वायुयान ९, १० मीलकी ऊँचाईपर स्वच्छन्दतापूर्वक उड़ सकते हैं, जब कि प्रोपेलरवाले साधारण किस्मके वायुयानोंके लिए इस प्रदेशमें उड़ना असम्भव है।

इस युद्धमें जर्मनीके इंजीनियरोंने जेट वायुयानोंको ही परिष्कृत करके उड़न बमका निर्माण किया था। इन्हें चालकहीन विमानके नामसे भी पुकारते हैं। चालनहीन विमानके पंखकी लम्बाई १७॥ फुट होती है। इसके मुख्य ढाँचेके ऊपर सिगारकी शक्लकी एक मोटी नली लगी होती है, जिसमें चालक-शक्तिका सृजन होता है। इस नलीकी लम्बाई ११ फुटके करीब होती है। नलीकी पूँछ खुली होती है, किन्तु सामनेवाले भागमें झिरीदार खिड़कियाँ लगी होती हैं। खिड़कियोंकी झिरी स्प्रिंगके सहारे खुलती और बन्द होती है। इसमें चालक-शक्ति उत्पन्न करनेके लिए नलीमें पहले अलगसे एसिटीलीन गैस डालकर उसे विद्युत् चिन-गारीसे दागते हैं। उस विस्फोटनके जोरसे उड़न बम अपने स्टैण्डको छोड़कर करीब १८० मील प्रति घण्टेके वेगसे आगे बढ़ता है। आकाशकी हवाके धक्केसे नलीकी खिड़कीकी झिरी खुल जाती है और भीतर हवा प्रवेश कर जाती है। ठीक उस वक्त पेट्रोलकी पतली फुआर नलीमें प्रवेश करती है। हवाके साथ मिलकर यह गर्म इंजिनमें विस्फोट करती है। विस्फोटसे उत्पन्न हुई गैसोंके जोरसे झिरी बन्द हो जाती है तथा पेट्रोलके आनेवाले रास्तेका वाल्व भी बन्द हो जाता है। अतः गैसों पूँछके रास्तेसे भागती हैं और उनके धक्केसे उड़न बम आगे भागता है। गैसोंके यका-



यक बाहर निकल जानेपर नलीके भीतर दबाव हलका पड़ जाता है, अतः खिड़कीकी झिरी फिर खुलती है और हवा तथा पेट्रोलकी वाष्प इंजिनमें पहुँचकर पुनः विस्फोट करती है। प्रति मिनट ५५ बार इस तरह नलीमें विस्फोटन होता है। इनकी रफ्तार ४१५ मील प्रति घण्टेतक पहुँच चुकी है।

### राकेट विमान

राकेट विमान बनानेके भी उद्योग जारी हैं। जेट वायुयान आकाशमें बहुत अधिक ऊँचाईपर नहीं उड़ सकते, क्योंकि उन्हें अपनी चालक-शक्ति उत्पन्न करनेके लिए आकाशकी वायुपर आश्रित रहना पड़ता है। किन्तु अधिक ऊँचाईपर आकाशमें उड़नेके लिए जेट वायुयान उपयुक्त नहीं हो सकते हैं, वहाँपर आकाशमें हवाकी मात्रा नगण्य-सी रहती है। ऐसी परिस्थितिमें राकेट-विमान ही उड़ सकते हैं। राकेट विमानमें न प्रोपेलर होते हैं और न पंख ही।

अमेरिकाके प्रोफेसर गोडार्ड कई वर्षोंसे राकेट इंजिनोंके बारेमें अनुसन्धान कर रहे हैं। आप एक ऐसे राकेटके निर्माणमें लगे हैं जिसकी पूँछमें बारूद भरी रहती है। इस बारूदके दगनेपर राकेट तेज रफ्तारसे आगे बढ़ता है। ठीक उसी तरह जैसे बारूदके दगनेपर आतिशबाजीकी चरखी दूसरी ओरको घूमती है। बारूद जोरोंके साथ बाहरको निकलती है और ऐसा करनेमें यह चरखीको पीछेकी ओर धक्का देती है—फल-स्वरूप चरखी तेजीके साथ चकर काटने लगती है। राकेट इंजिनमें भी ठीक यही सिद्धान्त लागू होना है।

अमेरिकाके एक लखपतिने राकेट वम सम्बन्धी अनुसन्धानोंके लिए प्रोफेसर गोडार्डको ३ लाख रुपये प्रदान किये हैं। पूरे दस वर्षकी मेहनतके बाद प्रोफेसर गोडार्ड ऐसे राकेटका निर्माण कर पाये हैं, जिसकी रफ्तार पाँच हजार मील प्रति घण्टेतक पहुँच चुकी है। गणित हमें बताता है कि अगर कोई चीज २५ हजार मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे आकाशमें फेंकी जाय तो उसपर पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति काम न कर

सकेगी और वह चीज पृथ्वीके आकर्षण-क्षेत्रसे बाहर निकलकर आकाशके ग्रह-नक्षत्रों तक पहुँच जायगी। प्रोफेसर गोडार्ड इसी स्वप्नको सच बनानेमें दत्तचित्त हैं। जिस दिन इस तरहके शीघ्रगामी राकेट वायुयान तैयार हो जायेंगे मानव-इतिहासका एक सर्वथा नवीन युग आरम्भ होगा। पृथ्वी-निवासी तब शायद चन्द्रमाकी सैर करनेके लिए जाया करेंगे। मंगल और शुक्र आदिपर भी अपना प्रभुत्व जमाना चाहेंगे और वहाँ नये-नये उपनिवेश बसायेंगे।

जर्मनीके इंजीनियरोंने इस युद्धमें राकेट सिद्धान्तपर राकेट बम—वी २ का निर्माण भी किया था। सिगारकी शक्लकी नली ही इसका मुख्य ढाँचा होता है। नलीकी पूँछका सिरा खुला होता है, किन्तु अगला सिरा बन्द होता है। नलीकी लम्बाई ४६ फुट होती है तथा इसकी मुटाई एक फुट। धड़के अग्रभागमें विस्फोटक बम रहता है तथा उसके पीछेकी टंकियोंमें इंजनका ईंधन। इन टंकियोंमें ऐसे रासायनिक पदार्थ भरे रहते हैं जो उड़ानके दौरानमें निरन्तर अबाध रूपसे द्रव आक्सीजन बनाते रहते हैं। इस द्रव आक्सीजनका संयोग अलकोहलसे होता है। इस रासायनिक संयोगसे उत्पन्न हुई विस्फोटन क्रियासे वी २ को आगे बढ़नेके लिए शक्ति मिलती है। अपने वेगके कारण आकाशमें ये ६० मीलकी ऊँचाईतक पहुँच जाते हैं। वहाँसे तोपके गोलेकी भाँति वक्र मार्गका अनुसरण करते हुए ये अपने लक्ष्यपर गिरते हैं—उस वक्त पृथ्वीकी गुरुत्वाकर्षण शक्तिके कारण इनकी रफ्तार ३००० मील प्रति घण्टेतक पहुँच जाती है—ध्वनिकी गतिसे भी कहीं अधिक। अतः लक्ष्यसे भिड़नेके क्षण इनके इंजनकी आवाज पीछे ही छूट जाती है। विद्युत्-वेगसे आक्रमण करनेवाले वी २ राकेटके आगमनकी सूचना इनकी ध्वनिसे कदापि नहीं प्राप्त हो सकती।

अवश्य ही डाक्टर पूछेंगे—क्या मनुष्यका शरीर हजारों मील प्रति घण्टेकी तेज रफ्तारको सह सकेगा? इंजनकी शक्ति तो हम विज्ञानकी मददसे बढ़ा सकते हैं, किन्तु उसी हिसाब से हम अपनी इन्द्रियोंकी



सहन-शक्तिको नहीं बढ़ा सकते । तो भी यदि रफ्तार धीरे-धीरे बढ़ायी जाय और उपयुक्त साधनोंसे प्रारम्भिक दिनोंमें अपनी इन्द्रियोंकी रक्षा करें, तो सम्भव है कि हम धीरे-धीरे तीव्रगति से विचरणके अभ्यस्त हो जायँ । संसारमें कुछ ऐसे जीव भी पाये जाते हैं जो ९०० मील प्रति घण्टेके वेगसे हरकत करते हैं और इस तेज रफ्तारका कोई भी बुरा प्रभाव उनके शरीरपर नहीं पड़ता । भविष्यके गर्भमें क्या-क्या निहित है—इसका उत्तर निश्चयपूर्वक कौन दे सकता है ?

## पैराशूट

समुद्री जहाजोंमें जिस प्रकार यात्रियोंकी प्राण-रक्षाके लिए लाइफ-बोट काम देती है, ठीक उसी प्रकार ऊँचे आकाशमें दुर्घटनाओंके समय वायुयान-सञ्चालक पैराशूट ( एक तरहके गुब्बारे ) का आश्रय लेता है ।

पैराशूटका इतिहास भी करीब-करीब उतना ही पुराना है जितना वायुयानोंका । कुछ इतिहासवेत्ताओंका कहना है कि प्राचीन कालके चीन-निवासी भी पैराशूट सदृश यन्त्रका इस्तेमाल करना जानते थे, किन्तु इस सम्बन्धमें कोई प्रामाणिक उल्लेख नहीं मिलता । हाँ, आज-से ४०० वर्ष पहले सुप्रसिद्ध इटालियन विद्वान लिनार्ड विंचीने पैराशूट जैसे यन्त्रका जिक्र अवश्य किया था कि 'यदि कोई व्यक्ति कपड़ेका एक विशाल गुम्बज लेकर उससे लटक जाय तो वह आकाशसे सही-सलामत नीचे उतर सकता है ।' किन्तु वह अपनी कल्पनाको कार्यान्वित नहीं कर सका । १८वीं शताब्दीमें वेरेज़ियो नामक एक व्यक्तिने किरमिचके आयताकार टुकड़ेको एक लम्बे-चौड़े ढाँचेपर चढ़ाकर अपने लिए पैराशूट तैयार किया और उसके सहारे एक ऊँची मीनारसे वह सकुशल नीचे कूदनेमें समर्थ भी हुआ था ।

फिर बैलूनोंके निर्माणके साथ-साथ बढ़िया किस्मके पैराशूट तैयार किये जाने लगे। उन प्रारम्भिक दिनोंमें लोग स्वयं पैराशूटके सहारे बैलूनसे कूदनेमें बहुत डरते थे। अतः ऊपर उड़ते समय वे साथमें भेड़-बकरी वगैरह ले जाते और उनके शरीरसे पैराशूट बाँधकर उन्हें बैलूनसे नीचे गिरा देते। इस तरह जब उन्हें पैराशूटकी कार्यक्षमतापर पूरा भरोसा हो गया तो इक्के-दुक्के साहसी व्यक्तियोंने स्वयं पैराशूटके सहारे कूदना आरम्भ किया।

उन दिनों पैराशूटसे कूदनेवाले व्यक्तियोंके इस आश्चर्यजनक करिश्मेको देखनेके लिए हजारोंकी भीड़ इकट्ठी हुआ करती थी। मेले-तमाशोंमें सर्कसके खिलाड़ियोंकी तरह पैराशूटकी मददसे कूदनेवाले लोग भी पैसे कमाया करते थे। पैराशूटका वास्तविक मूल्य वायुयानोंकी ईजादके बाद ही आंका गया।

शुरूके पैराशूट प्रायः लिनार्ड विंचीके बताये हुए सिद्धान्तपर बने थे—बहुत कुछ अंशोंमें वे एक बड़ी छतरीसे मिलते-जुलते थे। किन्तु इन साधारण पैराशूटोंमें दो भारी अवगुण थे। एक तो यह कि नीचे उतरते समय वे तेजीके साथ नीचे-ऊपरको काँपते थे और दूसरा यह कि घड़ीके लटकनकी तरह ये अगल-बगलमें भी बहुत हिलते थे—इस हरकतका नतीजा यह होता था कि पैराशूट-धारी व्यक्तिका सिर चक्कर खाने लगता था। बरसोंके अथक परिश्रमके बाद इस क्षेत्रमें काम करनेवालोंने आवश्यक सुधार करके इन अवगुणोंको भी दूर कर डाला। आधुनिक पैराशूट स्वच्छ आकाशमें बड़ी शान्तिके साथ नीचेको उतर आते हैं।

उक्त अवगुणोंको दूर करनेके निमित्त किये गये सुधारोंमें विशेष उल्लेखनीय, सुधार है पैराशूटके सिरेमें सूराखका बनाना। इस छोटे सूराखके रास्तेसे धीरे-धीरे पैराशूटमें फँसी हुई हवा निकलती रहती है और इस तरह वह पैराशूटको व्यर्थ झकझोरती नहीं। पैराशूटके विकासमें इस सुधारको विशेष महत्त्व प्राप्त है। यह सुधार एक फ्रेञ्च



उद्योतिपञ्चकी खोजका परिणाम है ।

आधुनिक पैराशूट दो प्रकारके होते हैं । पहले प्रकारके पैराशूटका सम्बन्ध रस्सीद्वारा वायुयानसे रहता है । एक नियत ऊँचाईतक गिर चुकनेके बाद इसी रस्सीके झटकेसे अपने आप पैराशूटके बन्धन खुल जाते हैं और स्प्रिंगके जोरसे पूरा पैराशूट खुल जाता है, और तब मन्द-गतिसे पैराशूटधारी नीचेको गिरने लगता है । इस ढंगके पैराशूट एक-दम निरापद नहीं समझे जाते । क्योंकि दुर्घटनाके समय बहुत सम्भव है कि वायुयानसे काफी दूर हटनेके पहले ही पैराशूट खुल जाय, तथा जलते हुए वायुयानसे शीघ्रताके साथ भाग सकना सम्भव न हो सके । इस कारण इस किस्मके पैराशूटोंका इस्तेमाल दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा है ।

दूसरे प्रकारके पैराशूटका सम्बन्ध वायुयानसे बिल्कुल नहीं रहता । ये फ्री पैराशूट कहलाते हैं । प्रत्येक वायुयान-यात्रीकी पीठपर एक पोदलीमें पैराशूट एक खास तरीकेसे तह किया हुआ बँधा रहता है । चमड़ेके तसमोंके जरिये यह पोदली यात्रीकी पीठसे बँधी रहती है । पोदलीकी गाँठसे एक छल्ला बँधा हुआ लटकता रहता है । इसी छल्लेको खींचकर पैराशूट खोल सकते हैं ।

इस फ्री पैराशूटके इस्तेमाल करनेमें भी थोड़ी-बहुत दक्षता हासिल करना आवश्यक होता है । पैराशूटको तसमोंके जरिये भलीभाँति कन्धोंपर बाँधकर पैराशूटधारी या तो वायुयानसे कूद पड़ता है या यों ही शून्यमें कदम बढ़ा देता है । वायुयानसे बाहर निकलते ही फौरन पैराशूटको नहीं खोलते । प्रायः एक या दो सेकेण्डके बाद ही छल्लेको खींचते हैं । पहले एक या दो सेकेण्डमें यात्री तेजीके साथ नीचेकी ओर गिरता है, फिर पैराशूट खुलते ही उसकी गति मन्द पड़ जाती है । तेज हवाके झोंकेसे अक्सर जमीनपर पहुँचनेपर पैराशूटके साथ लोग दूरतक घसीटते चले जाया करते थे । यह अवगुण भी अब दूर किया जा सका है । जमीनपर पाँव रखते ही एक दूसरा छल्ला खींच देते हैं और फौरन

पैराशूट उस व्यक्तिके शरीरसे अलग हो जाता है ।

आजकलके पैराशूट दोहरे होते हैं । छल्ला खींचते ही ऊपरवाला छोटा पैराशूट खुल जाता है और इस पैराशूटके खुलनेसे इसके झटकेसे नीचेवाला बड़ा पैराशूट भी खुल जाता है । दोहरे पैराशूट रखनेसे पैराशूट-धारीको कड़ा झटका नहीं लगता । अन्यथा अकेला पैराशूट जब एकाएक खुलता था तो तेजीके साथ नीचे जाते हुए पैराशूटधारीको जबर्दस्त झटका लगता था ।

साधारण पैराशूटका व्यास प्रायः २४ फुट होता है और तसमेके सहित इसका वजन लगभग ९ सेर होता है । इसका मूल्य ५० पौण्डके करीब होता है । साधारण कदके यात्रीको लेकर प्रति सेकण्ड १६ फुटकी रफ्तारसे यह पैराशूट नीचे उतरता है । किन्तु फौजमें इस्तेमाल होनेवाले पैराशूटका घेरा कम रहता है ताकि वायुयानसे कूदनेवाले सैनिक तेजीके साथ नीचे जमीनपर उतर सकें । पैराशूट खुलनेपर एक हल्का-सा झटका पैराशूटधारीको लगता है, तब वह धीरे-धीरे मँडराता हुआ जमीनपर आ लगता है । पैराशूटसे उतरते वक्त ऐसा प्रतीत होता है मानो तालाबके प्रशान्त जलमें निष्प्रयास तैर रहे हों । कभी-कभी तेज हवाके झोंकेके प्रवाहमें पैराशूट निर्दिष्ट स्थानसे हटकर ऐसी जगहको चला जाता है जहाँ उतरना निरापद नहीं होता, जैसे किसी मकानकी छतपर या किसी झाड़-झंखाड़में । ऐसी दशामें पैराशूटधारी यों ही हवामें पेंग मारनेकी-सी हरकत करता है और इस तरह अपनेको कुछ दूर हटकर जमीनपर उतरता है ।

पैराशूटधारियोंका कहना है कि पैराशूट लेकर वायुयानसे कूदते समय कुछ अधिक भय नहीं मालूम होता—ऐसा लगता है जैसे किसी धीमी रफ्तारसे चलती हुई मोटर-बससे सड़कपर-फुर्तीके साथ उतर आये हों ।

रूसने तो इस मामलेमें कमाल कर दिखाया है । वहाँ लगभग दस लाख युवक-युवतियाँ पैराशूटके सही प्रयोग करनेकी शिक्षा पा रहे हैं । हजारोंकी संख्यामें वायुयानोंसे ये पैराशूटके सहारे कूदकर शत्रुके



बीच यकायक जा पहुँचेंगे और विपैली गैस अथवा अन्य तरीकोंसे शत्रुका भीषण संहार कर सकनेमें समर्थ हो सकेंगे। फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम आदि देशोंने भी इस प्रकारकी आकाश-सेना बनानेकी कोशिश की है। पैराशूट यदि सही ढंगसे इस्तेमाल किया जाय तो जमीनपर गिरनेसे चोट लगनेकी बिल्कुल ही सम्भावना नहीं रहती। आप कितनी ही ऊँचाईसे कूदें, यदि पैराशूट रास्तेमें आपने खोल लिया है, तो भूमि स्पर्श करते समय आपके पाँवोंको उतना ही धक्का लगेगा जितना १० फुट ऊँची दीवारसे कूदनेपर। पैराशूटसे कूदनेवालोंको पैरसे भूमि स्पर्श करनेका एक विशेष ढंग बतलाया जाता है।

अनेक व्यक्तियोंने पैराशूटके प्रयोगमें भी विचित्र साहसका परिचय दिया है। अमेरिकाका प्रसिद्ध उड़का जे० जे० डन्केल तो इस क्षेत्रमें सबसे वाजी मार ले गया है। शुरूसे ही पैराशूटमें उसकी विशेष दिलचस्पी थी। उन दिनों डन्केल जिन पैराशूटोंके सहारे कूदता था, वे पुराने ढंग पर बने थे, और कूदनेके साथ ही वे भी खुल जाते थे। कुछ दिनोंके उपरान्त डन्केलने सोचा कि अधिक ऊँचाई परसे कूदनेपर शुरूमें ही पैराशूटके खुल जानेसे हमारी नीचे उतरनेकी रफ्तार बहुत ही धीमी पड़ जाती है और भूमितक पहुँचनेमें बड़ी देर लगती है। यदि कोई ऐसी तरकीब होती कि वायुयानसे कूदनेपर काफी नीचेतक गिर चुकनेके पश्चात् पैराशूट खोला जाता तो पृथ्वीतक जल्दी पहुँच भी जाते और भूमिस्पर्शके समय चोट भी न लगती। अतः डन्केलने अपना पैराशूट एक रेशमकी डोरीसे बाँधकर आसानीसे खुल सकनेवाली गाँठ लगायी और वायुयानपरसे कूद पड़ा। कुछ दूर नीचे जानेपर उसने झटका देकर पैराशूट खोला और सकुशल पृथ्वीपर आ पहुँचा। लेकिन ऐसे ही पैराशूटको लेकर जब डन्केल एक दिन कूदा तो झटका देनेपर रेशमकी डोरी उलझ गयी और पैराशूट न खुल पाया। अब तो डन्केल घबड़ाया। पूरी शक्ति लगाकर रेशमकी डोरी उसने तोड़ डाली और भूमिपर गिरनेके दो-तीन सेकण्ड पहले वह पैराशूट खोल पाया। तबसे उसने इस तरहके

घरके बने हुए पैराशूटका प्रयोग करना छोड़ दिया और ऐसे पैराशूट बनानेकी फ़िक्र में लगा जिसके खोलनेमें किसी प्रकारकी अड़चन न पैदा हो। एक जापानी उड़क़ेने ऐसा पैराशूट बनाया जो एक स्प्रिंगदार डब्बेमें बन्द रहता है, एक बटन हलके हाथों दबाया कि फौरन पैराशूट बाहर निकल आता है और स्वयं खुल जाता है।

डन्केलने पैराशूटके दोष दूर करने में कई वर्ष बिताये हैं। वह स्वयं पैराशूटका कारवार करता है, ग्राहकोंको इतमीनान करानेके लिए दिनमें बीसों बार ऊँची-ऊँची इमारतोंसे पैराशूटके सहारे कूदता है। सच बात तो यह है कि पैराशूटसे कूदना उसकी हॉबी (प्रिय विषय) हो गयी है। उसने हजारों नवयुवकों और नवयुवतियोंको पैराशूटसे कूदना सिखाया है और उसे इस बातका गर्व है कि इस दौरानमें उसके किसी भी शिष्यके साथ कोई दुर्घटना नहीं हुई।

पैराशूटका प्रयोग निरे खेल-तमाशे या लड़ाके वायुयानके संचालकों-तक ही परिमित हो, ऐसी बात नहीं। युद्धके पहले फ्रांसमें नर्सों भी पैराशूटका इस्तेमाल सीख रही थीं। लगभग २०० नर्सोंकी एक छोटी-सी टुकड़ी इसलिए तैयार की जा रही थी कि वे दुर्गम स्थानोंपर हवाई जहाजसे पैराशूटके सहारे उतरकर घायलोंकी सेवाशुश्रूषा कर सकें।

बाढ़में, वायुयान-दुर्घटनाओं तथा युद्धस्थलमें भी ऐसी नर्सें निस्सन्देह विपद्ग्रस्तोंकी वास्तविक सेवा कर सकती हैं। इन नर्सोंको पैराशूटसे उतरनेका अभ्यास क्रमशः कराया जाता था। पहले ऊँची-ऊँची मीनारोंसे पैराशूटके जरिये लम्बे-लम्बे तारोंके आधारपर वे नीचेको उतरना सीखती थीं, फिर कुछ दिनों उपरान्त उन्हें स्वयं पैराशूट लेकर मीनारपरसे बिना किसी आधारके कूद जानेका अभ्यास करना पड़ता था। उनके लिए हलके स्ट्रैचर और खेमे भी बनाये गये थे, जिन्हें पीठपर बाँधकर युद्ध-भूमिमें कूद पड़ने और फौरन एक सफरी अस्पताल बनाकर घायलोंकी मरहम-पट्टी शुरूकर देनेका अभ्यास भी उन्हें कराया जाता था।

विशेषज्ञोंका खयाल है कि आज दिन पैराशूट भी उसी अवस्थामें



है जिस अवस्थामें जैपलिनके आविष्कारके पहले बैलून था। बैलूनको इच्छित दिशामें ले जा सकनेके लिए ज्यों ही उपयुक्त इंजिन बन सके—बैलूनका एकदम कायापलट हो गया और वह वास्तवमें जैपलिनके रूपमें हमारे यातायातका एक महत्त्वपूर्ण साधन बन गया। इसी प्रकार पैराशूटमें भी यदि हलका-सा इंजिन लगाकर उसे इच्छित दिशामें ले जा सकना निकट भविष्यमें सम्भव हो सका तो अवश्य ही पैराशूटका इस्तेमाल विभिन्न क्षेत्रोंमें बहुतायतसे होने लगेगा।

अमेरिकामें एक विशालकाय वायुवान, जिसका वजन लगभग २३ मन था, बड़ी आसानीसे एक पैराशूटके सहारे बीच आकाशसे जमीनपर उतर आया। इस प्रयोगकी सफलतासे अब अनुमान किया जाता है कि भविष्यमें प्रत्येक छोटे वायुयानके साथ एक बड़े साइजका पैराशूट लगा रहेगा ताकि दुर्घटनाके अवसरपर यदि वायुयानका इंजन फेल कर जाय या पेट्रोल चुक जाय तो वायुयान यों ही बेतहाशा जमीनपर गिरकर चूर-चूर न हो बल्कि पैराशूटके सहारे सँभलकर धीरे-धीरे उतर पड़े।

## जानवरोंमें सोचनेकी शक्ति

विज्ञानके इस युगमें वैज्ञानिकोंने मस्तिष्क सम्बन्धी समस्याओंके हल करनेका भी प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। मनुष्य जातिको जीव-शिरोमणिकी उपाधि इसलिए दी गयी थी कि मनुष्यमें जान है और सोचने-समझनेकी विशेष क्षमता है। अन्य जीवोंके अन्दर सोचनेकी शक्ति मौजूद नहीं है। इस मामलेमें मनुष्यके साथ उनकी कोई समता नहीं है, ऐसा अबतक लोगोंका विश्वास रहा है।

किन्तु वैज्ञानिक अनुसन्धानने हमारी इस धारणाको अब भ्रान्ति-

मूलक ठहराया है। इस क्षेत्रमें किये गये प्रयोगोंने अनेक नयी बातोंपर प्रकाश डाला है। इन प्रयोगोंके जरिये पता चलता है कि नन्हें-नन्हें जीवोंमें भी निम्नकोटिका मस्तिष्क मौजूद होता है। स्वयं अपने अनुभवसे वे नयी-नयी बातें सीख सकते हैं, चाहे ऐसा करनेमें उन्हें देर भले ही लगे।

इस सम्बन्धमें किये गये प्रयोग निस्सन्देह बड़े दिलचस्प होते हैं। प्रयोगशालामें काठके एक बक्सके अन्दर केंचुआ बन्द कर दिया गया। बक्समें दो दरवाजे थे। इनमेंसे एक दरवाजेपर जब केंचुआ आता तो उसे बिजलीके तारसे शाक पहुँचाया जाता। नतीजा यह हुआ कि करीब १०० बार इस प्रयोगके दुहरानेपर केंचुएने अपने अनुभवसे यह सीख लिया कि अमुक दरवाजेसे नहीं निकलना चाहिये। इस प्रयोगमें उसने बिजलीवाले दरवाजेसे निकलनेकी केवल दो बार गलती की।

मेढकोंमें भी नयी बातोंके सीखनेकी शक्ति मौजूद पायी जाती है—ये चीजोंको पहचान भी सकते हैं और अपने घरका रास्ता जल्द नहीं भूलते। एक प्रयोगमें मेढकके सामने केंचुआ रखा जाता था—मेढक जब केंचुएको पकड़ता तो बिजलीके तार द्वारा इसे शाक दिया जाता। वस, मेढकने केंचुएका खाना ही छोड़ दिया। पूरे १० दिनतक बिजलीके शाकवाली बात उसे याद रही और उसने केंचुएको नहीं पकड़ा।

जानवरोंकी दिमागी शक्तिकी परीक्षा करनेके लिए प्रायः भूलभुलैया-का भी इस्तेमाल किया जाता है। एक भूलभुलैयामें कछुआ बन्द कर दिया गया। पहली बार पूरे ३॥ घण्टेतक रास्ता टटोलनेके बाद वह उस भूलभुलैयासे बाहर निकल पाया। किन्तु चौथी बार उक्त प्रयोगके दुहरानेपर देखा गया कि वह कछुआ महज ३॥ मिनटमें बाहर निकल आया—इस बार वह रास्तेमें दो जगह गलत मुड़ा था। पाँचवीं बारके प्रयोगमें तो वह सिर्फ ३५ सेकण्डमें बाहर निकल आया। इस बार



उसने रास्तेमें कहीं भी गलती नहीं की ।

इस दृष्टिसे तमाम प्राणियोंमें बन्दर मनुष्यके अत्यन्त निकट पहुँचते हैं—फलस्वरूप उनको स्पर्श-शक्ति, दृष्टिक्षमता तथा श्रवण-शक्ति भी मानवजातिकी शक्तियोंकी भाँति ही बड़ी-चढ़ी है । उनकी दोनों आँखोंकी स्थिति भी बहुत-कुछ मनुष्यकी आँखोंकी भाँति है । अतः विभिन्न वस्तुओंकी दूरी और उनकी मोटाईका अन्दाज भी सही तौरपर वे लगा सकते हैं । भिन्न-भिन्न रङ्गोंको पहचाननेकी शक्ति उनके अन्दर मौजूद पायी जाती है । भिन्न-भिन्न शकल और साइज ( आकार ) के भेदको पहचाना भी वे जानते हैं ।

एक और बात है—बन्दर कभी चुपचाप निश्चेष्ट नहीं बैठ सकता । उसकी नसनसमें मानो कार्यशीलता भरी हुई है । किसी भी बन्दरको आप गौरसे देखिये—आप गिन नहीं सकते कि थोड़ी-सी देरमें वह कौन-कौन-सी शरारतें कर डालता है । उसे किसी खास उद्देश्यकी जरूरत नहीं, वह तो अपनेको व्यस्त रखनेके लिए कुछ-न-कुछ करते रहना चाहता है । शरीरकी यह चंचलता उसके मस्तिष्कके अन्दर भी कुछ-बुड़ाती रहती है । ऐसा जान पड़ता है मानो बन्दर विश्वकी हरएक बात-के प्रति नयी जानकारी हासिल करनेके लिए उत्सुक रहता है । जो कोई समस्या सामने आ पड़ी, उसीकी असलियत मालूम करनेके लिए उसका मस्तिष्क उससे उलझ पड़ा ।

इसी कारण मनोवैज्ञानिकोंने बन्दरोंपर बड़े ध्यानपूर्वक प्रयोग किये हैं । इनमें मास्कोकी मैडम कोहता और बर्लिनके प्रोफेसर कोलेरके प्रयोग विशेष उल्लेखनीय हैं । मैडम कोहताके चिम्पैजी बन्दरका नाम आयोनी था । मैडम कोहताने आयोनीके साथ भिन्न-भिन्न तरहके प्रयोग किये ।

आयोनीके सामने भिन्न-भिन्न रङ्गके कागजके टुकड़े रखे जाते और उसके हाथमें एक खास रङ्गका टुकड़ा थमा दिया जाता । आयोनीको उसी रङ्गका टुकड़ा सामनेके ढेरमेंसे निकालना होता । यदि ऐसा करनेमें वह सफल होता तो उसे खानेको केले दिये जाते और जब वह सही रङ्ग

नहीं ढूँढ़ पाता तो उसे किसी तरहका ढण्ड नहीं दिया जाता और न केला ही उसे खानेको मिलता । इन प्रयोगोंके सिलसिलेमें यह आश्चर्यजनक बात मालूम हुई कि आयोनीमें ३० भिन्न-भिन्न रङ्गोंका अन्तर पहचाननेकी तमीज थी ।

यह बन्दर वृत्त, वर्ग, आयत, दीर्घवृत्त तथा पटकोणको भी एक दूसरेसे अलग कर सकता था और भिन्न-भिन्न शकलके लकड़ीके माडलोंको भी वह पहचान सकता था । लकड़ीके दो टुकड़े जिनकी लम्बाईमें केवल चौथाई इंचका अन्तर रहता, जब कभी उसके सामने रखे जाते तो वह फौरन पहचान लेता था कि इनमेंसे कौन टुकड़ा बड़ा है और कौन छोटा ।

इसी ढंगके बीसियों प्रयोग आयोनीके साथ मैडम कोहताने किये और वे इस नतीजेपर पहुँचीं कि चिम्पैजीकी दिमागी शक्ति मानव बच्चेके मस्तिष्ककी शक्तिके बराबर होती है तथा आवश्यकतासे कहीं अधिक बुद्धि चिम्पैजीको प्राप्त है । मैडम कोहताका कहना है कि चिम्पैजी दिमागी कामोंमें बहुत जल्दी थक जाता है । गिननेकी क्रिया उसके दिमागकी सामर्थ्यके बाहर है ।

प्रोफेसर कोलेरने चिम्पैजीकी क्षुधा-निवृत्तिकी इच्छाके आधारपर भी अनेक प्रयोग किये हैं । उन्होंने छतसे केले लटकवा दिये—इतनी ऊँचाईपर कि चिम्पैजी खड़ा होनेपर भी उसे पा न सके और उसकी बगलमें उन्होंने ढण्डा रख दिया । चिम्पैजीने फौरन ढण्डेकी मददसे केलेको नीचे गिरा दिया । एक दूसरे अवसरपर उसने कमरेमें रखे हुए बक्सोंको एकके ऊपर एक जमाकर ढेर लगा दिया और उसपर खड़ा होकर केलेको तोड़ लिया । पिंजड़ेके अन्दर बन्द चिम्पैजीने बाहर रखे हुए केलेको हुकदार ढण्डेसे अपनी ओर खींच लिया था ।

इन प्रयोगोंके आधारपर प्रोफेसर कोलेर इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि चिम्पैजी किसी खास समस्याको उसी हालतमें हल कर सकता है, जब हल करनेके सभी साधन उसकी आँखोंके सामने मौजूद हों । छतसे



लटकते हुए केलेको तोड़नेके लिए वह डण्डा ढूँढ़ने दूसरे कमरेमें न जायगा। पहले देखी हुई चीजोंकी प्रतिमाको वह उस वक्ततक अपनी आँखोंके सामने नहीं ला सकता जबतक ठीक उसी तरहकी कोई चीज उसके सामने न लायी जाय। चिम्पैजीकी इस विशेषताका आभास हमें उसके सामाजिक जीवनसे भी मिलता है। बन्दर झुण्डमें रहना पसन्द करते हैं और एक दूसरेके प्रति उनके दिलमें अनुराग भी रहता है। झुण्डके किसी एक बन्दरपर यदि किसी आततायीने हमला किया तो सबके-सब उसे घेर लेते हैं। किन्तु उनका साथी जब एक बार भी आँखोंसे ओझल हो गया तो उसके बारेमें फिर वे कभी नहीं सोचते।

बन्दर अपने बच्चोंको कितना प्यार करते हैं ! मरे हुए बच्चेको लेकर हफ्तोंतक बन्दरिया कलेजेसे चिपकाये रहती है। किन्तु उसकी लाश जब आँखोंके सामनेसे हट जाती है, तो वही बन्दरिया बच्चेकी बात एकदम भूल जाती है और पूर्ववत् प्रसन्नचित्त होकर किलकारियाँ मारने लगती है।

बन्दरोंमें हर्ष, खेद, जोश, क्रोध आदि भावातिरेक भी पाये जाते हैं। उनमें अकसर डाह और ईर्ष्याके भी दृष्टान्त पाये जाते हैं। क्यूबामें प्राणिविज्ञानके एक विशेषज्ञके पास 'एप' जातिके कई बन्दर थे। इनमेंसे एक नर एप हमेशा किसी नरको पिंजड़ेके नजदीक आते देखकर अपनी मादा एपको पीठके पीछे छिपा लेता ! किन्तु जब कोई मादा पिंजड़ेके पास जाती तो नर एप जरा भी न घबराता और न उसके मनमें ईर्ष्याके भाव ही उत्पन्न होते और मादा एपको छिपानेकी वह बिलकुल कोशिश न करता।

जहाँतक भावोन्मादका सम्बन्ध है एप और मनुष्यमें कोई अन्तर नहीं है। हाँ बुद्धिकी कमीके कारण भावोन्मादके प्रदर्शनमें कुछ फर्क अवश्य आ जाता है। एक जीवविज्ञानीने एक चिम्पैजी पाल रखा था। रसोईघरकी बगलमें उसका पिंजड़ा था। रसोईघरमें खाना एक चौदह वर्षकी सुनहले बालवाली लड़की पकाया करती थी। चिम्पैजी उसपर

रीझ गया और उससे वह प्रेम करने लग गया ! लड़कीको चिम्पैँजीकी हरकतोंसे परेशान होनेसे बचानेके लिए नौकरने रसोईघरके सामने एक परदा टाँग दिया । दूसरे दिन जब चिम्पैँजीको खाना देनेके लिए नौकर पिंजड़ा खोलने गया तो चिम्पैँजी, जो नौकरकी हरकतसे खार खाये हुए बैठा था, उसपर हमला कर बैठा ।

बुद्धिकी कमीकी वजहसे चिम्पैँजीमें तर्क करनेकी शक्ति नहीं होती । मनुष्य बन्दरसे श्रेष्ठ केवल इसी कारण है कि उसका दिमाग बन्दरके दिमागसे आकारमें बड़ा है । कूड़-मगज और निपट मूर्ख मनुष्य और बन्दरके आचरणमें इसी वजहसे कुछ अधिक अन्तर नहीं होता क्योंकि दोनोंके भावोन्मादपरसे बुद्धिका अंकुश हट जाता है ।

क्रोधका आवेश बन्दरोंके अतिरिक्त हाथी, वनसुअरा तथा मोरमें भी पाया जाता है । किन्तु बदला लेनेकी प्रवृत्ति जानवरोंके अन्दर नहीं पायी जाती । अकसर कहा जाता है कि हाथी और साँप बहुत दिनोंतक बदला लेनेकी ताकमें रहते हैं—इस सम्बन्धमें दिलचस्प दृष्टान्त भी देखनेको मिले हैं । किन्तु इस क्रियाको 'प्रतिशोध' कहना ठीक न होगा, क्योंकि प्रतिशोधके माने होते हैं जान-बूझकर बदला लेनेकी गरजसे तैयारी करना—उसके लिए मनसूबे बाँधना । जानवरोंकी बुद्धि इतनी ऊँचाईको नहीं पहुँच पाती ।

निद्रा और स्वप्नका सवाल भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । बड़ी जातिके तमाम जीव निद्राका अनुभव करते हैं । जिस समय वे नींदमें होते हैं, उनकी बाह्य इन्द्रियाँ शिथिल पड़ जाती हैं । अचानक जागनेपर इन इन्द्रियोंको एक झटका-सा लगता है और तब एकाध सेकेण्डके बाद उनके स्नायु अपना सन्तुलन ठीक कर पाते हैं । घोड़ा खड़े-खड़े सो लेता है, चमगादड़ पेड़की डालसे लटका हुआ आरामकी नींद लेता है और ह्वेल समुद्रपर उतराती हुई सो लेती है । कुत्ता भी खूब सोता है । डाक्टरोंका कहना है कि कुत्तेको यदि चार दिनतक सोनेका मौका न दिया जाय तो वह मर जायगा । बिना खाये-पीये कुत्ता बहुत दिनोंतक जिन्दा रह



सकता है किन्तु बिना सोये हुए चार दिनसे ज्यादा वह कदापि जिन्दा नहीं रह सकता ।

किन्तु पक्षियोंसे निम्न कोटिके जीव कभी निद्रा अनुभव नहीं करते, चाहे वे आराम भले ही करते हों । साँप छिपकली, मछलियाँ तथा अन्य रेंगनेवाले जीव-जन्तु कभी नहीं सोते । निश्चल भावसे बिना हिले-डुले आराम अवश्य करते हैं, किन्तु इस हालतमें इनकी बाह्य इन्द्रियाँ सुपुप्त अवस्थाको नहीं प्राप्त कर पातीं । इन्हें आप छूयें तो फौरन ये भाग खड़े होंगे—इनकी तमाम कर्मेन्द्रियाँ निरन्तर अबाध रूपसे चेतनाशील बनी रहती हैं ।

सच तो यह है कि दिमागके साथ ही निद्राकी आवश्यकता भी बढ़ जाती है । निम्न कोटिके प्राणियोंके शरीरमें दिमाग बहुत कम होता है, अतः उन्हें नींदकी भी कुछ अधिक जरूरत नहीं होती ।

नींदमें जब कि शरीरके और अंग आराम करते हैं, मस्तिष्ककी क्रिया जारी रहती है । सुपुप्त मस्तिष्ककी क्रियाशीलतामें तनिक भी सुस्ती नहीं आने पाती । वरन् सच तो यह है कि निद्रावस्थामें जाग्रत मस्तिष्कका नियन्त्रण न रहनेके कारण सुपुप्त मस्तिष्क स्वच्छन्द हो जाता है और मनमाने तरीकेसे विचारों और प्रतिमाओंका सृजन करने लगता है । इन विचारों और प्रतिमाओंका हम सपनेमें अनुभव करते हैं ।

सोते समय कुत्ते अकसर भूँकते हैं और बिल्लियाँ गुर्राती हैं । निस्सन्देह नींदमें ये सपने अवश्य देखते हैं । घोड़े भी सोते समय सपनेमें हिनहिनाते हैं और खुर पटकते हैं । बाह्य कृत्रिम साधनोंकी मददसे मनुष्योंके मस्तिष्कमें नींदके समय तरह-तरहके स्वप्नोंका सृजन किया जा सकता है । ठीक इसी तरह गहरी नींदमें सोये हुए कुत्तेको भी बाह्य साधनोंकी मददसे सपने दिखाये जा सकते हैं । एक कुत्ता नींदमें सो रहा था, उसके नथुनेके पास जंगलकी लकड़ीकी गन्ध लायी गयी । वह फौरन गुर्राते लगा, उसने सपनेमें अनुभव किया कि वह जंगलमें शिकार कर रहा है । जग जानेपर कुत्ता फिर शान्तचित्त हो गया । स्वप्नकी स्मृति

उसके दिमागमें बाकी न रही ।

पशु-पक्षियोंके अन्दर एक प्रकारकी प्रणयक्रियाका भी हमें आभास मिलता है । अपनी लाल कलंगियोंको ऊँचा किये हुए मुर्गा गव्वेके साथ मुर्गीके इर्द-गिर्द बार-बार चक्कर लगाता है । मुर्गीको अपनी ओर आकर्षित करनेमें वह उसके सामने अपनी तमाम शान व शौकतका प्रदर्शन करता है । मोरनीके इर्द-गिर्द मोर भी अपने बहुरंगी पंख फैलाकर नाचता है । इन सभी हरकतोंमें हम इन प्राणियोंके अन्दर प्रणयक्रियाका एक जबर्दस्त पुट मौजूद पाते हैं ।

मादा मकड़ीको रिझानेके लिए मकड़ोंको विशेष युक्तिसे काम लेना पड़ता है । मकड़ियोंकी दृष्टि-शक्ति बहुत मन्द होती है । किसी भी छोटी चीजको जालमें हिलते-डुलते देखा कि उसे अपना शिकार समझकर उस-पर बेतहाशा टूट पड़ती हैं । अतः जिस वक्त मकड़ा प्रणय-भिक्षाके लिए मकड़ीके नजदीक आता है, उसे किसी-न-किसी उपायसे मादाके ऊपर यह बात प्रकट करनी होती है कि जालपरसे होकर उसकी ओर आनेवाला जीव उसके प्रणयका प्रार्थी है, मामूली शिकार कहीं । इसलिए दूरसे ही मकड़ीका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करनेके लिए मकड़ा जालके एक तारको पकड़कर विशेष संकेतके साथ हिलाने लगता है । इस संकेतसे प्रभावित होकर मकड़ेके प्रति वह आकर्षित होती है । किन्तु प्रणयक्रिया समाप्त होनेपर अक्सर मकड़ी उस मकड़ेको अपना शिकार भी बना डालती है ।

विच्छुओंमें तो यह अनिवार्य नियम-सा है कि प्रणयक्रियाके बाद वासनाकी पूर्ति हो जानेपर मादा नर-विच्छुको मारकर खा डालती है । मान्तिश नामका प्राणी तो और भी विचित्र रूपमें पेश आता है । प्रणय-क्रिया पूरी भी नहीं हो पाती कि मादा नरको मारकर खा जाती है ।

कुछ जीव नन्हें-नन्हें कीड़े-मकोड़ोंका शिकार करके अपनी रालका ववूला बनाकर उसमें उस खाद्य-पदार्थको बढ़िया तरीकेसे पैक करके मादाको उपहार प्रदान करते हैं, ठीक उसी प्रकार जिस तरह सभ्य



पुरुष बढ़िया पैकिंग-केसमें नेकलेस रखकर अपनी प्रेमिकाको उपहार देता है। कुछ और प्राणी कलात्मक ढंगका प्रयोग करते हैं। फूलकी पंखुड़ियों तथा नरम पत्तियोंको अपनी प्रेमिकाओंके पास उपहार-स्वरूप ले जाते हैं।

स्तनपायी जानवरोंमें प्रणयकी भिक्षा प्राप्त करनेके लिए नर इस प्रकारकी कोशिशें नहीं करते। मादाको रिझाकर उसे अपनी ओर आकर्षित करनेकी प्रथा इनके अन्दर नहीं पायी जाती। यहाँ तो जिसकी लाठी उसकी भैंस है। पुरुषत्वका सिक्का जमानेके लिए अपनी शक्तिपर भरोसा रखना पड़ता है। हिरन, जंगली भेंड़, विसन आदिके अन्दर प्रणयक्रियाका कोई आयोजन नहीं है। मादापर अधिकार प्राप्त करनेके लिए नरको आपसमें एक दूसरेसे लड़ना होता है। विजयी नरको मादा स्वयं आत्मसमर्पण कर देती है। अवश्य हाथियोंमें चुम्बन-सरीखी क्रियाएँ देखी गयी हैं।

## साँपका जहर कैसे दुहते हैं ?

अकेले भारतमें प्रतिवर्ष बीस हजार मनुष्य साँपके काटनेसे मरते हैं। झाड़-फूँक, मन्त्र तथा जड़ी-बूटियाँ विपैले साँपके जहरको मिटा नहीं सकतीं। सच तो यह है कि अभी हालतक आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानको भी कोई ऐसी तरकीब मालूम न थी जिसकी मददसे साँपके जहरसे वह मनुष्योंकी रक्षा कर सके।

किन्तु 'विषस्य विषमौषधम्' के सिद्धान्तने इस मुश्किलको भी हल किया। डाक्टरोंने अनगिनत प्रयोग करके यह देखा कि यदि किसी जानवरके रुधिरमें थोड़ा-थोड़ा करके साँपका विष सूई देकर प्रविष्ट

कराया जाय और रोज इस विषकी मात्रा क्रमशः बढ़ायें, तो कुछ ही दिनोंमें उस जानवरके रुधिरमें यह गुण आ जायगा कि यदि उसे सचमुच कोई साँप काट खाये तो उसे जरा भी विष न व्यापेगा। इसी रुधिरसे साँपका जहर मारनेके लिए 'सीरम' तैयार करते हैं। किन्तु साँपका जहर इकट्ठा करना सहल काम नहीं है। ऐसे काममें जान जानेका खतरा रहता है।

साँपके जहरको मारनेके लिए 'सीरम' तैयार करना हो तो सैकड़ों स्वस्थ साँपोंकी जरूरत होती है। जिन्दा साँप पकड़नेके लिए हुनरकी आवश्यकता होती है, तनिक भी चूके कि जानसे हाथ धोना पड़ा। किन्तु साँप पकड़नेकी कलामें प्रवीण व्यक्तियोंके लिए जहरीलेसे जहरीला साँप पकड़नेमें भी तनिक-सी हिचक नहीं होती। एक हाथमें डण्डा और दूसरे हाथमें थैला—बस यही उनका सामान रहता है। शेषके लिए उन्हें अपने हाथकी सफाईपर भरोसा रखना होता है। स्वयं हमारे देशमें नट वगैरह खाली हाथ जहरीले साँपको पकड़ लेते हैं—उनके हाथकी फुर्ती बस देखने ही योग्य होती है।

इन साँपोंको शीशेके बक्समें, जिसमें ताजी हवाके आने-जानेका प्रबन्ध रहता है, रखते हैं। फिर प्रयोगशालाके अन्दर साँपोंके विषको उनके मुँहके अन्दरसे जबर्दस्ती निकालते हैं, और इस विषसे तरह-तरहके प्रयोग करते हैं।

भारतवर्षमें इस प्रकारकी एकमात्र प्रयोगशाला बम्बईमें है। इस प्रयोगशालाका नाम हाफकिन इन्स्टिट्यूट है। यहाँ २०० जहरीले साँप कैद हैं। नियमित रूपसे प्रतिदिन उन्हें आहार दिया जाता है और हर प्रकारकी सावधानी बरती जाती है कि वे बीमार न होने पावें। सप्ताहमें एक बार इन साँपोंका जहर दुहा जाता है। वहाँके कर्मचारियोंके लिए तो विष दुहनेकी क्रिया एक मामूली-सा काम है, किन्तु दर्शकोंका दिल भयसे दहला देनेके लिए यह क्रिया काफी होती है। इन पंक्तियोंके लेखकको हाफकिन इन्स्टिट्यूटमें जानेका सौभाग्य मिला है। विष



दुहनेकी क्रियाकी फोटो लेनेके लिए लेखक जरा नजदीक बैठा था। प्रतिक्षण ऐसा लगता था कि अब उन लोगोंके पंजेसे अपनेको छुड़ाकर क्रुद्ध साँप लेखकके ऊपर हमला करना ही चाहता है।

हाफकिन इन्स्ट्र्यूटमें करैत साँप नहीं थे। इन्स्ट्र्यूटके अध्यक्ष डाक्टर दलालसे पूछनेपर मालूम हुआ कि करैत साँपको यदि पिंजड़ेमें रखा जाय तो वह शीघ्र मर जाता है। गेहुँअन तथा अन्य किस्मके जहरीले साँप वहाँ अवश्य मौजूद थे।

हाथमें डण्डा लेकर कर्मचारी साँपवाले बक्सको खोलता है और क्रुद्ध गेहुँअनको उस बक्सके बाहर उसी डण्डेके जरिये निकालता है। फुर्तीके साथ हाथ बढ़ाकर वह साँपकी पूँछ पकड़ ऊपर उठा लेता है। ऐसा करते समय इस बातका ध्यान रखना पड़ता है कि साँप उस कर्मचारीके शरीरसे दूर रहे, वरना लपककर वह उस आदमीको काट सकता है। तदुपरान्त साँपको ताड़की बुनी चटाईपर फुर्तीसे लिटाकर झट डण्डेसे उसका सिर दबा देते हैं। अब वह बिलकुल बेबस हो जाता है। तब वह कर्मचारी उस गेहुँअन साँपकी पूँछको पैरसे दबाता है और हाथसे साँपका सिर दबोच लेता है। साँप अब पूर्णतया उसके वशमें आ जाता है। किन्तु यह काम खतरेसे खाली नहीं है—पूछनेपर मालूम हुआ कि उस आदमीको इसी क्रियामें पिछले पाँच वर्षोंमें साँपने चार-चार बार काट खाया था, किन्तु ‘एण्टीवेनिन’ इंजेक्शन फौरन लगानेसे उसकी प्राणरक्षा की जा सकी।

अब एक शीशेका प्याला साँपके मुँहसे लगाया जाता है, इस प्यालेकी बारीपर झिल्ली चढ़ायी रहती है—साँप गुस्सेमें आकर जोरोंसे इस झिल्लीको काटता है और गाढ़ा-गाढ़ा पीले रङ्गका जहर निकलकर उसी प्यालेमें इकट्ठा हो जाता है। जब सारा जहर निकल जाता है, तब उस साँपको शीशेकी एक नलीके रास्तेसे दूध और अण्डा खिलाया जाता है, ताकि वह कमजोरी महसूस न करे। डाक्टर दलालने बताया था कि उस गेहुँअनके मुँहमें उस वक्त १२ मनुष्योंकी जान लेने भरको काफी

जहर मौजूद रहता है।

भिन्न जातियोंके साँपोंके लिए भिन्न प्रकारके प्याले इस्तेमाल किये जाते हैं क्योंकि सभी किस्मके साँपोंके मुँहमें जहरकी थैलीकी बनावट एक-सी नहीं होती।

इस रीतिसे विष दुहनेमें प्रायः साँपके मुँहका फेन भी प्यालेमें इकट्ठा हो जाता है और यदि साँप ज्यादा गुस्सेमें रहा तो प्यालेकी बारीपर वार करनेमें उसे चोट भी आ सकती है; इस हालतमें उसके मुँहसे खून भी निकलकर प्यालेमें इकट्ठा हो जाता है।

अमेरिकामें वैज्ञानिकोंने विद्युत्-धाराकी सहायतासे साँपका जहर निकालनेकी तरकीब ईजाद की है। १० वोल्टकी बिजलीकी शॉक (धक्का) तार द्वारा साँपके सिरपर दिया जाता है। बिजलीके शॉकसे वे स्नायु प्रभावित होते हैं जिनका सम्बन्ध विष-ग्रन्थियोंसे है। शॉक लगनेसे स्नायुओंमें संकुचन होता है, फलस्वरूप अपने आप जहर साँपके मुँहसे बाहर निकल आता है। इस तरकीबके ईजाद करनेवाले डाक्टर जान्सनका कहना कि इस तरीकेसे विष दुहनेमें साँपको जरा भी तकलीफ नहीं होती और न उसके स्वास्थ्यपर ही कोई बुरा असर पड़ता है, बल्कि पुराने तरीकेमें, जिसमें साँपके मुँहको प्यालेकी बारीपर टिका उसके सिरको जबर्दस्ती दबाते हैं, साँपको बेहद पीड़ा पहुँचती है और उस साँपसे काफी मात्रामें विष भी नहीं प्राप्त हो पाता।

साँपके विषका प्रभाव हमारे रुधिरपर क्या पड़ता है? इस प्रश्नका उत्तर भी प्रयोगशालाके भीतर ही प्राप्त किया जा चुका है। मनुष्यके ऊपर तो यह प्रयोग नहीं किया जा सकता था, अतः मनुष्यके शरीरसे निकाला गया ताजा रुधिर इस कामके लिए इस्तेमाल किया गया। एक शीशेकी नलीमें रुधिर रख दिया गया और इसमें एक बूँद साँपका जहर डाल दिया गया। देखते-देखते रासायनिक परिवर्तन होनेके कारण दहीकी तरह रुधिरके थक्के जम गये।

फिर साँपके विषको सुखाकर उसे, नन्हें-नन्हें जरोंमें परिवर्तित कर



लिया गया। जब ये जरेँ चूहोंके शरीरमें प्रविष्ट कराये गये तो एक मिनटके अन्दर उनके शरीरमें जहर भिन गया और वे सब-के-सब मर गये।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि यदि साँपका जहर आपके भोजनमें मिला दिया जाय तो ऐसा भोजन आपको नुकसान न करेगा, किन्तु इस शर्तके साथ कि आपके मुँहमें किसी तरहकी चोट या छाले न पड़े हों, क्योंकि विष ज्यों ही आपके रुधिरसे स्पर्श करेगा आपके समूचे शरीरमें व्याप जायगा। अक्सर देहातोंमें साँपका विष लोग साँप काटे हुए व्यक्तियोंके शरीरसे चूसते हैं, किन्तु ऐसा करते समय इस बातकी सावधानी रखना जरूरी है कि चूसनेवालेके मुँहमें किसी प्रकारका ज्वर तो नहीं है।

यद्यपि पेटमें जानेसे साँपका जहर असर नहीं करता, किन्तु इसकी भाप यदि आपकी नाकमें चली जाय तो उस हालतमें भी आपके शरीरमें वह विष भिन जायगा।

प्रयोगशालाओंसे विष दुह लेनेके बाद गवर्नमेण्ट प्रयोगशालामें उसे भेजते हैं, जहाँपर उस विषको अन्य जानवरोंके रुधिरमें इंजेक्ट करके 'सीरम' बनाते हैं। इसी सीरमको छोटी-छोटी शीशियोंमें भरकर दवाखानोंमें भेजते हैं जहाँसे डाक्टर लोग उसे खरीदकर साँपके काटे हुएोंका इलाज इसकी सहायतासे करते हैं। हमारे देशमें एण्टीवेनिन सीरम (साँपका जहर मारनेकी दवा) कसौलीमें तैयार किया जाता है। बम्बईकी हाफकिन इंस्टिट्यूटसे साँपका जहर कसौली ही भेजा जाता है।

## अपराधियों के पकड़ने में विज्ञान की सहायता

अपराध के भण्डाफोड़ में विज्ञान के उपयोग ने अपराध-विज्ञान (क्रिमिनॉलॉजी) में एक नवीन युग का समावेश किया है। विज्ञान के प्रत्येक विभाग के अनुसन्धानों से अपराध विशेषज्ञ (क्रिमिनॉलॉजिस्ट) को अपराध के भण्डाफोड़ में सहायता मिली है। अपराध के विश्लेषण में वैज्ञानिक-यन्त्रों का इस्तेमाल अब एक बड़े पैमाने पर होने लग गया है और शरलॉक होम्स के जासूसी उपन्यासों वाले निष्कर्ष के लिए आधुनिक क्रिमिनॉलॉजी में गुआयश नहीं है। वैज्ञानिक प्रयोग के प्रमाण अकाट्य होते हैं, इन पर पूर्णतया भरोसा किया जा सकता है। साक्षी अपनी गवाही में झूठ बोल सकता है किन्तु वैज्ञानिक-यन्त्र कभी झूठ नहीं बोल सकते।

क्रिमिनॉलॉजिस्ट और अपराधी दोनों के बीच निरन्तर संघर्ष चलता रहता है। अपराधी नित्य नये-नये वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग इस दृष्टिकोण से करता है कि वह दक्षतापूर्वक अपना काम पूरा कर सके, साथ ही ऐसे चिह्न वह न छोड़े जो उसका भेद खोल सकें। निम्नश्रेणी के अपराधी प्रायः पुरानी लकीर पर चलनेवाले होते हैं; न तो इनमें पर्याप्त बुद्धि होती है और न इतना अध्यवसाय ही कि वे नूतनतम वैज्ञानिक साधनों का सहारा लेकर अपने अपराध के साधनों को उत्कृष्ट बना सकें। किन्तु ऊँची श्रेणी के अपराधी एक कुशल कलाकार की भाँति निरन्तर अपने साधनों को वैज्ञानिक आविष्कारों द्वारा परिष्कृत करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। क्रिमिनॉलॉजिस्ट को इस श्रेणी के अपराधी से लोहा लेने में अवश्य कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

उदाहरण के लिए रसायन विज्ञान ने अनेक नये रासायनिक पदार्थ ऐसे तैयार किये हैं जिनकी सहायता से कागज पर लिखे हुए अक्षर इस सफाई से मिटायें जा सकते हैं कि किसी को गुमान न हो कि वहाँ पहले कुछ लिखा गया था। फलस्वरूप पाश्चात्य देशों में बीमे के मूल्यवान



स्टाम्पपरसे मुहरके निशान मिटाकर उन्हें दुबारा इस्तेमाल करनेके अनेक दृष्टान्त मिलते हैं जिनके कारण गवर्नमेण्टको हजारों रुपयोंका घाटा उठाना पड़ा। इसी तरहकी जालसाजी काफी दिनों तक जारी रही तब कहीं क्रिमिनलॉजिस्ट इस ढंगकी जालसाजीका भण्डाफोड़ करनेमें समर्थ हो पाये।

आइये देखें अपराधकी छान-बीनमें विज्ञानके विभिन्न विभागोंने कहाँ तक सहायता पहुँचायी है। भौतिक विज्ञानने अदृश्य किरणोंके रूपमें अपूर्व साधन प्रदान किये हैं। इनमेंसे अल्ट्रावायलेट किरणें, एक्स रश्मियाँ तथा इन्फ्रारेड-रे विशेष उल्लेखनीय हैं। अल्ट्रावायलेट किरणका एक विशेष गुण यह है कि अनेक पदार्थ इन रश्मियोंके प्रकाशमें देदीप्यमान होकर चमकने लगते हैं—यह चमक विभिन्न पदार्थोंके लिए विभिन्न रंगकी होती है। अतः अल्ट्रावायलेट रश्मियों द्वारा उकसायी गयी चमकका निरीक्षण करके किसी पदार्थकी उपस्थिति या अनुपस्थिति निश्चय रूपसे मालूम की जा सकती है। उदाहरणके लिए अनेक देशोंमें सिझाये हुए रबड़पर आयात-कर लगता है किन्तु कच्चे रबड़पर नहीं। देखनेमें दोनों तरहके रबड़ एकसे लगते हैं। चुंगीके अधिकारी ऐसे अवसरपर अल्ट्रावायलेट रश्मियों द्वारा जाँच करके पता लगा लेते हैं कि रबड़ सिझाया हुआ है या कच्चा क्योंकि कच्चे रबड़ में वैसी चमक उत्पन्न नहीं होती जैसी सिझाये हुए रबड़में। दस्तावेजोंकी जालसाजीमें यदि अक्षरोंमें रबड़द्वारा या अन्य किसी साधनसे दक्षतापूर्वक मिटाकर उनके स्थानपर नये अक्षर लिख दिये गये हों तो साधारण रोशनीमें इस जालसाजीका पता नहीं लग सकता। किन्तु अल्ट्रावायलेट रश्मियोंके प्रकाशमें कागजकी चमक द्वारा इस जालसाजीका सहजमें भण्डाफोड़ किया जा सकता है और कभी-कभी तो मिटाये गये अक्षर भी साफ-साफ पढ़े जा सकते हैं। मानव शरीरपर भी अल्ट्रावायलेट रश्मियोंका प्रयोग सी० आई० डी० विभागवालोंने अकसर किया है। प्रायः भागा हुआ अपराधी अपनी हुलिया बदलनेके लिए शरीरपरके गुदनेके चिह्न या चोटके निशानको

रासायनिक पदार्थोंकी सहायतासे इतनी सफाईके साथ मिटा देता है कि साधारणतः देखनेपर पता नहीं चलता कि शरीरकी त्वचापर पहले किसी प्रकारका चिह्न मौजूद था। किन्तु अल्ट्रावायलेट रश्मियोंके प्रकाशमें फौरन ही पता लग जाता है कि वहाँकी त्वचापरसे कुछ चिह्न मिटाये गये हैं। यूरोप तथा अमेरिकामें बैंकोंमें चेकोंकी जालसाजी रोकनेके लिए भी अल्ट्रावायलेट किरणोंकी मदद ली जाती है। बैंकके अधिकारी चेक बुकके लिए विशेष ढंगका कागज इस्तेमाल करते हैं। इस कागजमें पेपर-मिलके अन्दर ही कुनैन या इसी जातिके अन्य रासायनिक पदार्थ थोड़ी-सी मात्रा में मिला दिये जाते हैं। ये पदार्थ अल्ट्रावायलेट रश्मियोंके प्रकाशमें एक खास रंगकी रोशनीकी चमक उत्पन्न करते हैं। अतः सन्देह होनेपर चेककी जाँच दो मिनटके अन्दर अल्ट्रावायलेट लैम्पकी सहायतासे अँधेरे कमरेमें की जा सकती है।

इत्रके एक सुप्रसिद्ध व्यापारीके इत्रकी नकल बाजारमें विकने लगी। उसकी शीशीपर लगे लेविल और असली लेविलमें किसी तरहका अन्तर नहीं मालूम पड़ता था किन्तु अल्ट्रावायलेट किरणोंके प्रकाशमें उत्पन्न हुई चमकको देखकर नकली लेविल सहजमें ही पहचाना जा सका, क्योंकि नकल करनेवाले फर्मने यद्यपि लेविल छापनेका ब्लाक तो किसी तरह चुरा लिया था किन्तु छापनेके लिए उसने भिन्न स्याहीका इस्तेमाल किया था।

जेलखानेके बन्दी अथवा शत्रुदलके गुप्तचर अकसर अधिकारियों तथा सेंसरकी आँख बचाकर कागजपर अदृश्य सन्देश लिखकर भेजते हैं। ऐसे मामलोंमें अल्ट्रावायलेट किरणकी मददसे पत्रको बिना किसी तरहकी क्षति पहुँचाये ये अदृश्य अक्षर सुगमतासे पढ़े जा सकते हैं। पत्र पानेवालेको पता भी नहीं चलेगा कि पत्रका भेद किसीको मालूम हो सका है। अतः समूचे पड़यन्त्रका भण्डाफोड़ किया जा सकता है। रक्तके धब्बोंकी जाँचमें भी ये रश्मियाँ विशेष उपयोगी साबित हुई हैं। धोबीद्वारा धुले जा चुकनेपर अकसर कपड़ेपरसे रक्तके

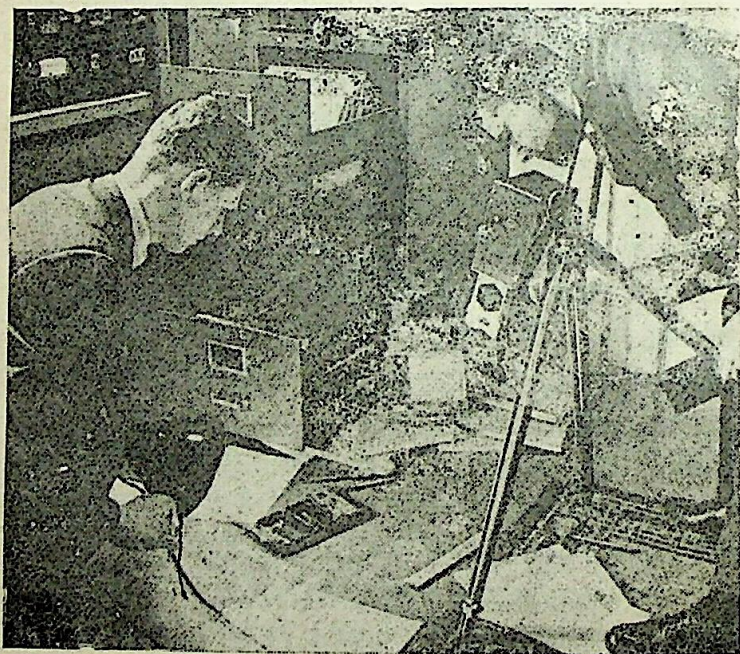


धब्बे मिट जाते हैं, किन्तु विशेष रासायनिक द्रवोंमें भिगोये जानेपर धब्बेके स्थानसे अल्ट्रावायलेट किरणोंके प्रकाशमें लाल रंगकी चमक उत्पन्न होती है। कई हत्याकारी जो अपने वस्त्रपर पड़े रक्तके धब्बोंको साफ करके निश्चिन्त हो गये थे, इस जाँचके फलस्वरूप फाँसीके दण्ड भोगनेपर बाध्य हुए। इन्फ्रारेड-किरणें क्रिमिनलॉजिस्टके लिए विशेष महत्वपूर्ण साबित हुई हैं। इन्फ्रारेड-किरणें अनेक पदार्थोंको भेद सकती हैं, किन्तु स्वयं अदृश्य होनेके कारण ये हमारी आँखोंको प्रभावित नहीं कर पातीं, केवल फोटोग्राफीके प्लेटपर ही ये अंकित की जा सकती हैं। विभिन्न पदार्थोंके लिए इनकी भेदनशीलता विभिन्न होती है। फलस्वरूप इन्फ्रारेड फोटोग्राफी द्वारा बन्द लिफाफेके अन्दरकी लिखावट पढ़ी जा सकती है। इन्फ्रारेड लैम्प और फोटोग्राफी प्लेटके दर्मियान लिफाफा रख देनेपर थोड़ी देर उपरान्त फोटोप्लेटपर लिखावटके अक्षर अंकित हो जाते हैं क्योंकि इन्फ्रारेड रश्मियाँ कागजको आसानीसे भेदकर दूसरी ओर पहुँच जाती हैं जबकि स्याहीके अक्षरोंको उतनी आसानीके साथ ये नहीं भेद पातीं। चमड़ेके थैलेके अन्दर रखे हुए सिक्के आदि इन्फ्रारेड रश्मियोंकी मददसे आसानीसे देखे जा सकते हैं। आगमें झुलसे हुए दस्तावेजकी लिखावट भी इन्फ्रारेड फोटोग्राफी द्वारा आसानीसे पढ़ी जा सकती है। कई उदाहरण इस बातके मिले हैं कि सेन्सर द्वारा स्याही फेर देनेपर जो अक्षर पढ़े नहीं जा सकते थे, वे इन्फ्रारेड फोटोग्राफमें बिलकुल स्पष्ट दीख गये क्योंकि सेन्सरकी स्याहीको इन्फ्रारेड किरणें अपेक्षाकृत अधिक सरलतासे पार कर गयीं जबकि असल लिखावटकी स्याहीके भेद सकनेमें वे समर्थ न थीं। बड़े-बड़े बैंकोंमें तिजोरियोंके पास फोटो-एलेक्ट्रिक सेल लगा देते हैं, कमरेके दूसरे कोनेसे इन्फ्रारेडकी एक पतली किरण उस फोटो-एलेक्ट्रिक सेलपर पड़ती है। जब बैंकके तहखानेमें रात्रिके अँधेरेमें चोर तिजोरी तोड़नेके लिए घुसता है तो एक क्षणके लिए फोटो-एलेक्ट्रिक सेलपर छाया पड़ जाती है और इसी कारण सेलके अन्दरकी विद्युत्-धारा भी उतनी देरके लिए बन्द हो जाती है।



सेलका सम्बन्ध खतरेकी घण्टीसे रहता है जो सेलकी विद्युत्-धाराके रुकते ही बज उठती है। प्रायः इसीसे सम्बद्ध एक घण्टी पुलिस दफ्तरमें भी लगा देते हैं ताकि वहाँ भी फौरन खबर हो जाय।

अन्य साधनोंकी अपेक्षा अनुवीक्षण यन्त्र तथा कैमरा अपराध विज्ञान (क्रिमिनालॉजी) में अधिक इस्तेमाल किये जाते हैं। अंगुलियोंके धब्बे, हाथकी लिखावट तथा कागज और कपड़ेकी जाँचमें अनुवीक्षण



लन्दनके पुलिस-विभागके विशेषज्ञ अँगूठेके निशानकी फोटो ले रहे हैं। फोटोकी सहायतासे अपराधियोंका पता आसानीसे लगाया जा सकता है। लन्दनकी पुलिसके पास कई लाख अपराधियोंके अँगूठेके निशान सुरक्षित रखे हुए हैं।



यन्त्रकी सदैव ही सहायता ली जाती है। कैमरेकी मददसे अनुवीक्षण यन्त्रमें दीखनेवाले बिम्बकी फोटो लेकर 'क्रिमिनॉलॉजिस्ट' न्यायाधीशके सामने जुर्मके पक्ष या विपक्षमें स्पष्ट रूपसे प्रमाण रख सकता है। शरीर-विज्ञानके ज्ञाता इसे अच्छी तरह साबित कर चुके हैं कि प्रत्येक व्यक्तिके अँगूठे तथा उँगलियोंकी त्वचाकी रेखाओंकी डिजाइन भिन्न होती है। किन्हीं दो व्यक्तियोंके अँगूठेकी रेखाओंकी डिजाइन आजतक एक-सी नहीं मिली। फिर जन्मकालसे लेकर मृत्युपर्यन्त यह डिजाइन अक्षुण्ण बनी रहती है। उम्र या बीमारीका कोई प्रभाव इन रेखाओंपर नहीं पड़ता। जेलसे भागे हुए कई अपराधियोंने पहचानसे बचनेके लिए अँगूठेको खुरचकर इन रेखाओंको बदलना चाहा किन्तु घाव ठीक हो जानेपर पहले जैसी ही रेखाएँ पुनः बन गयीं, अतः पहलेके लिए हुए उँगूठा-निशानकी मददसे उसकी पहचान आसानीसे की जा सकी।

लिखावटके विशेषज्ञ बतलाते हैं कि कोई भी व्यक्ति जब हस्ताक्षर करता है तो दो बारके किये हस्ताक्षर परस्पर एक दूसरेकी सही कापी कभी नहीं हो सकते। हस्ताक्षरके एकाध अक्षर छोटे-बड़े अवश्य हो जायँगे। इस तथ्यके आधारपर दस्तावेजके हस्ताक्षरकी फोटो लेकर उसे परिवर्द्धित किया जाता है फिर सही हस्ताक्षरकी फोटोको भी उसी पैमानेपर परिवर्द्धित करके दोनोंको एक दूसरेके ऊपर रखते हैं; यदि ये दोनों एक दूसरेको पूर्णतया ढँक लेती हैं तो सहज ही यह निष्कर्ष निकलता है कि सन्दिग्ध हस्ताक्षर जाली था और यह सही हस्ताक्षरकी हুবहू नकल थी।

शरीरांगोंके बालकी भी अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा करके क्रिमिनॉलॉजिस्ट महत्वपूर्ण बातोंका पता लगा सकता है। साधारणतया हर किस्मके बाल एक सरीखे ही दीखते हैं, किन्तु विशेषज्ञ उसकी परीक्षा करके फौरन बतला सकता है कि अमुक बाल पुरुषके सिरका है या स्त्रीके सिरका। बालसे उस व्यक्तिकी उम्रका भी अन्दाज लग सकता है। यह भी मालूम किया जा सकता है कि बाल सिरका है या अन्य

किसी अंगका । फिर यह भी बतलाया जा सकता है कि जिस व्यक्तिके शरीरका यह बाल है वह मोटा है या पतला, तथा बाल सिरमेंसे उखाड़ा गया था या अपनेसे झड़ गया था, अथवा कैंची आदिसे काटा गया था । बालकी परीक्षासे ही उस व्यक्तिकी जातिका पता चल सकता है कि वह मंगोल जाति या इवशी, रेड इण्डियन आदिका है । यूरोपवासियोंके सिरके बाल दीर्घ वृत्ताकार मुटाईके होते हैं, नीग्रोके बाल अत्यधिक चिपटे होते हैं, मंगोल जातिवालोंके बालकी मुटाई गोल होती है ।

नार्दिगम पुलिस प्रयोगशालामें वालोंके सम्बन्धमें महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान किये गये हैं । इस प्रयोगशालामें हर प्रकारके जीवजन्तुओंके बालोंका संग्रह मौजूद है तथा सैकड़ों व्यक्तियोंके बाल भी यहाँ रखे गये हैं । पशुओंके बाल भी एक दूसरेसे अनेक मानोंमें भिन्न होते हैं ।

रसायन विज्ञान तथा औषधि विज्ञान भी क्रिमिनलॉजीके लिए कम महत्त्व नहीं रखते । रासायनिक विश्लेषणकी दो प्रधान विधियाँ हैं— एक जिसमें केवल पदार्थकी पहचान की जाती है, दूसरी जिसमें यह भी मालूम किया जाता है कि दिये हुए नमूनेमें पाये जानेवाले पदार्थोंकी मात्रा कितनी है । विष द्वारा की गयी हत्यामें रासायनिक साधनोंकी सहायता विशेष तौरपर ली जाती है । विष द्वारा शत्रुसे बदला लेनेकी प्रथा प्राचीनकालसे चली आ रही है । उन दिनों विष-विज्ञानके विशेषज्ञ अपनी विष-सम्बन्धी जानकारीकी बदौलत प्रचुर धन कमा लेते थे । विभिन्न परिस्थितियोंके लिए उपयुक्त विष वे आर्डर पानेपर चुपकेसे तैयार कर लेते थे । इटलीमें तो मध्यकालमें राजनीतिक दृष्टिसे विषका प्रयोग एक तरहसे जायज समझा जाता था और बीसवीं सदीके इस विज्ञानयुगमें तो विष-विज्ञानका विशेषज्ञ समाजके लिए बहुत ही खतरनाक साबित हो सकता है ।

विष द्वारा हत्यामें संखियाका प्रयोग अधिक किया जाता है, क्योंकि खाद्य पदार्थोंमें संखियाकी मौजूदगी उनके स्वादमें किसी तरहका अन्तर नहीं डालती । साथ ही इसका प्रभाव उलटी तथा तेज किस्मके दस्तके



रूपमें होता है जो बदहजमी-सरीखी बीमारीके बहानेमें छिप सकता है। इंग्लैण्डके एक गवर्नमेण्ट अफसरकी तबीयत अचानक बहुत खराब हो गयी। उसके मूत्र तथा केशकी रासायनिक परीक्षा करनेपर उनमें संखियाका अंश मिला। विशेषज्ञने हिसाब लगाकर बतलाया था कि दस सप्ताह पूर्व उस अफसरको संखिया एक बड़ी मात्रामें दी गयी थी। खोजबीन करनेपर मालूम हुआ कि दस सप्ताह पहले उस अफसरने अपने रसोइयेको पीटा था और रसोइयेने बदला लेनेकी नीयतसे अफसरको खानेके साथ संखिया दे दिया था। विपके मामलोंमें विशेषज्ञको हत्याका आरोप साबित करनेके लिए यह तो दिखलाना ही पड़ता है कि मृत व्यक्तिके शरीरके अन्दर विष मौजूद था। इसके अतिरिक्त उसे यह भी साबित करना पड़ता है कि जिस वक्त विष दिया गया था वह इतने परिमाणमें था कि उसका प्रभाव मानव शरीरपर वातक सिद्ध हुआ। यह निस्सन्देह झंझटका काम है।

रुधिरकी परीक्षा करके भी क्रिमिनलॉजिस्ट अनेक जरूरी बातोंका पता लगा सकता है। मानव रुधिर चार मुख्य श्रेणियोंमें विभाजित किया जा सकता है। सन्तानके रुधिरकी श्रेणी माता-पिताके रुधिरकी श्रेणी द्वारा निर्धारित होती है। अतः सन्तानके रुधिरकी परीक्षा करके यह तो निश्चय रूपसे नहीं कहा जा सकता कि अमुक व्यक्ति ही उसका पिता है किन्तु यह निश्चय रूपसे कहा जा सकता है कि भिन्न श्रेणीके रुधिरवाला व्यक्ति उसका पिता कदापि नहीं हो सकता। अतः ऐसे मामलोंमें जिनमें किसी अवैध सन्तानके जन्मका उत्तरदायित्व किसी व्यक्तिके ऊपर अनायास रखा जा रहा हो, रुधिर-परीक्षा द्वारा उसे निर्दोष साबित किये जानेकी सम्भावना हो सकती है। इसी प्रकार यदि अपराधीके कपड़ेपर रक्तकी बूँद पड़ी है और उसका कहना है कि यह रक्त उसकी अँगुलीके कट जानेसे गिरा है तो धब्बेके रुधिरकी जाँच करके यह मालूम किया जा सकता है कि रुधिर उस व्यक्तिके शरीरके रुधिरकी श्रेणीका है या नहीं। यदि दोनोंमें विभिन्नता है तो यह

निश्चय हो जाता है कि रक्तके धब्बे अन्य किसी व्यक्तिके हैं। सन् १९३९ में रुधिर-परीक्षाके सम्बन्धमें इंग्लैण्डमें कानून बनाकर इस तरीकेको कानूनी प्रतिष्ठा प्रदान कर दी गयी। रूसमें तो गत ५ वर्षोंसे रुधिर-परीक्षाकी प्रामाणिकताको वहाँके न्यायालय स्वीकार करते आ रहे हैं। यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि पशुके रुधिर तथा मानव-रुधिरमें आसानीके साथ पहचान की जा सकती है।

मनोविज्ञानने भी अपराधके मूलोच्छेदनमें सहायता पहुँचायी है। मनोविज्ञान अपराधकी मूल तहतक पैठनेका प्रयत्न करता है। अपराधके आधुनिक विश्लेषणके फलस्वरूप मनोवैज्ञानिक इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि अपराध करनेकी मनोवृत्ति मस्तिष्कके विकारसे उत्पन्न होती है। अतः अपराधके रोकनेका आदर्श तरीका है मस्तिष्कके विकारका मनोवैज्ञानिक उपचार करना। इसी उद्देश्यको लेकर 'सायकियाट्री' मनोविज्ञानका आविर्भाव हुआ। अपराधके क्षेत्रमें मनोविज्ञानके ऊपर तीन प्रकारके उत्तरदायित्व हैं। प्रथम अपराध-मनोवृत्तिको रोकनेके निमित्त उपयुक्त साधन प्रस्तुत करना; द्वितीय अपराध किये जा चुकनेपर अपराधीकी मनोवैज्ञानिक चिकित्सा करके उसे सुधारना जिससे वह पुनः अपराधके प्रति आकृष्ट न हो सके; और तृतीय अपराधके विश्लेषण तथा छान-बीनमें मनोविज्ञानकी सहायता लेना, जैसे पेचीदा मामलेमें साक्षीकी एक कुशल मनोवैज्ञानिक द्वारा जिरह। अपराधकी इस नवीन मनोवैज्ञानिक व्याख्याने दण्डविधानमें मूल परिवर्तनोंका समावेश करना आरम्भ किया है। आधुनिक मन्तव्य यह है कि अपराधीके लिए भी मनोवैज्ञानिक चिकित्सालय खुलने चाहिये और बजाय जेल भेजनेके उसे चिकित्सालयमें भेजना होगा ताकि उसके मानसिक विकारका उपचार करके उसे पुनः आदर्श नागरिक बनाया जा सके।



## मनुष्यके शरीरकी विचित्रताएँ

मनुष्यके शरीरमें ऐसी विचित्र चीजें प्रकृतिने बनायी हैं कि उन्हें जानकर आप चकित हो जायेंगे। रुधिरको ही लीजिये—आपके शरीरमें रुधिर चार-पाँच सेरसे अधिक नहीं होता, फिर भी इसीपर आपका जीवन अवलम्बित है। आपका दिल प्रतिदिन आपके शरीरमें रुधिरको पम्प करके प्रत्येक अंगमें पहुँचाता है। डाक्टरोंने हिसाब लगाया है कि प्रतिदिन रुधिरको एक मील लम्बा सफर शरीरके भीतर करना पड़ता है। रुधिरमें अनेक क्षुद्र कण सदैव तैरते रहते हैं—एक बूँद रुधिरमें कम-से-कम पचास लाख रक्तवर्णके कण और करीब ३० हजार सफेद कण मौजूद रहते हैं। ये कण इतने छोटे होते हैं कि यदि चार हजार कण एक दूसरेसे सटाकर रख दिये जायँ तो इन सबकी लम्बाई एक इंच तक पहुँच पायेगी। इन्हीं कणोंकी सहायतासे रुधिर आक्सिजनको खींचता है। इन कणोंमें लोहेका अंश भी पर्याप्त मात्रामें मौजूद रहता है और लौहकणोंकी वजहसे ही हमारा रुधिर रक्तवर्णका होता है। लौहकणोंकी ही बदौलत रोप प्रकट करते समय हमारा चेहरा लाल हो आता है।

हमारे शरीरके भीतरकी नसोंका जाल भी कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है। यदि इन नसोंको रस्सीकी भाँति एक सिरेसे दूसरे सिरे तक फैलायें तो अटलाण्टिक महासागरको भी हम पारकर सकते हैं।

आपका मस्तिष्क, जो आपके कामोंका संचालन करता है, केवल डेढ़ सेर वजनमें है, किन्तु इसका आकार भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंमें भिन्न-भिन्न हुआ करता है। मस्तिष्क शरीरका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अंग है क्योंकि आपकी लगभग सभी इन्द्रियाँ मस्तिष्कके आसरे ही अपना काम कर पाती हैं। आपको बताया गया है कि आप आँखोंसे देखते हैं, किन्तु यह एक अधूरा सत्य है। जिस तरह आप यह नहीं कह सकते कि केवल कैमरेके लेन्स द्वारा आप फोटो उतारते हैं, उसी तरह आप यह

भी नहीं कह सकते कि आप केवल अपनी आँखोंके ही सहारे देख पाते हैं। कैमरेमें लेन्स फोटोके अक्सको फोकस करके प्लेटपर फोकस करता है, और तब इस प्लेटपर फोटो उभरती है। ठीक इसी प्रकार आपकी आँखें बाहरकी वस्तुओंका अक्स आँखके पीछे एक पर्देपर डालती हैं और तब छोटी-छोटी नसों द्वारा आपका मस्तिष्क इस अक्सका अनुभव करता है। इस प्रकार देखनेका काम मस्तिष्कका है, आँखोंका नहीं।

फिर अगर आपकी आँखें निर्दोष हों तो भी जबतक वे एकाध क्षण-तक स्थिर नहीं होतीं, आप कोई चीज देख नहीं सकते। देख सकनेके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि आपकी आँख उस वस्तुपर थोड़ी देर तक टिकी रहे। पुस्तक पढ़ते समय आपकी आँखें लाइनके प्रत्येक शब्दपर रुक-रुककर आगे बढ़ती हैं। साथ ही आप काले-काले अक्षरोंको नहीं देख सकते, उसके चारों ओरके सफेद कागजको देखते हैं, क्योंकि काले अक्षरोंसे बहुत कम प्रकाश प्रक्षिप्त होकर आपकी आँखों तक पहुँचता है, किन्तु सफेद कागज अधिक मात्रामें प्रकाश आपकी आँखोंमें भेजता है। 'र' अच्छर जब आप देखते हैं, तब काली रेखाका चित्र आपकी आँखोंमें नहीं बन पाता वरन् आपको सफेद कागज दिखता है और जहाँ 'र' अक्षर है वहाँ आप कुछ भी नहीं देखते।

वैज्ञानिकोंका खयाल है कि मनुष्यके मस्तिष्कका विकास वैज्ञानिक ढंगपर किया जा सकता है। समाजकी ओरसे इस वैज्ञानिक स्कीमको चालू करके मनुष्यकी मानसिक शक्ति खूब बढ़ायी जा सकती है। प्रसिद्ध जीव-विज्ञानी प्रो० हक्सलेका कहना है कि दूर देशकी बातें जान लेनेकी क्षमता मस्तिष्कमें उत्पन्न की जा सकती है—अर्थात् 'टेलीपैथी' की शक्ति प्राप्त कर लेना सम्भव है। मनुष्य-जातिका इतिहास बताता है कि हमारा दिमाग आदि पुरुषोंके दिमागकी अपेक्षा आकारमें बहुत बड़ा है और इसका आकार अब भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी बढ़ता ही जा रहा है। आकारके साथ ही बुद्धि भी बढ़ती है। उक्त स्कीमके अनुसार समाजको जितने गणितज्ञोंकी आवश्यकता होगी या जितने इंजीनियरों,



डाक्टरों या वकीलोंकी जरूरत होगी सब नियत संख्यामें उत्पन्न किये जा सकेंगे ।

एक साधारण व्यक्तिके पाँच ही इन्द्रियाँ नहीं होतीं वरन् कमसे कम दस और यदि जरा वारीकीसे देखें तो आप १५ इन्द्रियाँ गिन सकते हैं । डाक्टरोंके मतके अनुसार आपके पास देखने, सुनने, चखने, स्पर्श करनेकी शक्ति तो होनी ही चाहिये । इनके अतिरिक्त आपमें सूँघनेकी शक्ति, ठण्ड और गर्मी अनुभव करनेकी क्षमता, चमड़ेसे पीड़ा अनुभव करनेकी शक्ति भी होनी चाहिये ।

आपकी तमाम इन्द्रियोंमें नाक सबसे अधिक निपुण है—लगभग ६००० गन्धोंको आपकी घ्राण-शक्ति पहचान सकती है । चखनेकी कलामें दक्ष व्यक्ति भी केवल जिह्वाकी सहायतासे सेव और प्याजके स्वादको अलग नहीं कर सकता । स्वादके काममें आपकी नाक भी मदद देती है । आपकी जबान स्वादके लिए एक निकम्मा यन्त्र है । केवल तीन प्रकारका स्वाद यह पहचान सकती है—मीठा, खट्टा और कड़वा । स्वादके वारीक अन्तरकी पहचान आपकी घ्राण-शक्ति करती है ।

ठण्ड और गर्मीका अनुभव करनेकी शक्ति भी आपकी कुछ प्रशंसनीय नहीं है । यदि आपकी साँखोंपर पट्टी बाँध दी जाय और तब आप गरम तपता हुआ लोहा एक हाथसे छुयें और दूसरे हाथसे ठण्डा जमा हुआ पारा, तो आप हरगिज न बता पायेंगे कि कौन वस्तु ठण्डी है, कौन गरम । स्पर्श-शक्तिके बारेमें भी लोगोंके बीच गलत धारणाएँ पायी जाती हैं । यूरोपमें बायें हाथकी अनामिका शुभ मानी जाती है । इसो उँगलीमें शादीकी अँगूठी पहनायी जाती है । लोगोंका खयाल था कि मनुष्यके हृदयसे इस उँगली तक एक विशेष नस आती है, अतः इस उँगलीमें अँगूठी पहननेसे वह व्यक्ति अपनी पत्नीको दिलसे प्यार करेगा । वैज्ञानिकोंने शरीरके भिन्न-भिन्न अङ्गोंकी स्पर्श-शक्तिकी जाँच की और वे इस नतीजेपर पहुँचे कि हाथकी तमाम उँगलियोंमें अनामिका में सबसे कम स्पर्शज्ञान मौजूद है ।

मनुष्यके शरीरके सभी भागोंकी प्रकृति स्वयं मरम्मत करती रहती है, किन्तु दाँतोंकी मरम्मत प्रकृति नहीं करती। इसी कारण दाँतकी पीड़ासे लोग बहुत अधिक संख्यामें परेशान रहते हैं। सच तो यह है कि दाँतकी पीड़ाने तो जुकामसे बाजी मार ली है। किन्तु प्रकृतिद्वारा उपेक्षित होनेपर भी दाँत ही आपके शरीरकी सबसे सख्त वस्तु है। इतनी सख्त है कि पत्थरके टुकड़ेसे दाँतपर चोट करके आप आगकी चिनगारियाँ उत्पन्न कर सकते हैं।

आपका निकटतम सम्बन्धी कौन है—पिता या माता? नहीं इनमेंसे कोई नहीं, यदि आपके कोई भाई या बहन है। वच्चेका सम्बन्ध वैज्ञानिक दृष्टिसे माता या पिताकी अपेक्षा अपने भाई या बहनके साथ ज्यादा घनिष्ठ होता है। भाई और बहनमें रुधिरका पूर्ण सामंजस्य होता है, किन्तु पिता और उसकी सन्तानमें यह सामंजस्य केवल आधा ही होता है, इसलिए सम्बन्धियोंकी सूचीमें भाई या बहनका नाम पहले आता है और पिताका बादमें। किन्तु कानून इस सत्यको स्वीकार नहीं करता। कोई व्यक्ति यदि मरता है तो उसकी सम्पत्ति उसके निकटतम सम्बन्धी भाईको नहीं मिलती वरन् उसका पुत्र उसका उत्तराधिकारी बनता है।

आप चाहे विश्वास करें या न करें, किन्तु यह बात सच है कि आधुनिक चिकित्सा-शास्त्रकी ईजादोंके होते हुए भी मनुष्यकी औसत आयु एक दिनके लिए भी नहीं बढ़ पायी है। इसलिए आप कितने ही संयमसे क्यों न रहें, कितनी ही दवाइयाँ क्यों न पी डालें, किन्तु आपकी आयु आपके पूर्वपुरुषोंकी उम्रसे अधिक नहीं बढ़ सकती, जब कि वे विटैमिन, हॉरोफार्म, गर्दनतोड़ बुखार आदि झंझटोंसे बरी थे। किन्तु इस बातसे आपको हतोत्साह भी नहीं होना चाहिये। विज्ञान जिस कामको पूरा करनेमें असमर्थ है, प्रकृति उसे पूरा करती है। एक ओर यमराजके दूत प्रतिक्षण खिली-अधखिली कलियोंको तोड़कर अपना झोला भरते रहते हैं, तो दूसरी ओर प्रकृति प्रतिदिन ५०,००० बच्चे उत्पन्न करती



है। इस रफ्तारसे ६५ वर्षके अन्दर ही संसारकी जनसंख्या दुगुनी हो जायगी। अकेले पिछली शताब्दीमें संसारकी जनसंख्या इतनी बढ़ी है जितनी मनुष्य-जातिके जन्मकालसे १९ वीं शताब्दीका आरम्भ होनेतक नहीं बढ़ सकी थी।

इस प्रकारके अद्भुत शरीरकी यह विशेषता भी आपको अधिक आश्चर्यचकित न कर सकेगी कि जन्मकालसे मृत्यु पर्यन्त प्रतिक्षण हम क्रमशः मृत्युका आलिंगन करते रहते हैं। आपके शरीरके स्नायुओंका निरन्तर क्षय होता रहता है, उनकी जगह नये स्नायुओंका निर्माण भी होता रहता है। किन्तु इस प्रतिक्षणकी मृत्युमें ही तो जीवन निहित है—जिस क्षण यह क्रिया रुक जायगी आपकी जिन्दगी समाप्त हो जायगी।

## भविष्यके मनुष्य

मनुष्य-जातिके इतिहासके पिछले पन्नांतक पहुँचनेका श्रेय डार्विनको प्राप्त है। विकासकी अनेक सीढ़ियाँ तय करनेके उपरान्त मनुष्य किस तरह बुद्धि, आत्मचेतन आदि विभूतियाँ प्राप्त कर सका है, इस रहस्यका सर्वप्रथम पता लगानेवाला डाक्टर डार्विन ही था।

विकासका यह क्रम अब भी जारी है। मनुष्य शनैः शनैः अब भी शारीरिक और मानसिक परिवर्तनका अनुभव कर रहा है। अमेरिकाके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर हर्डलीकाने इस क्षेत्रमें काफी दिनोंतक अनुसन्धान किया है। उनका कहना है कि हमारा सिर पीढ़ी-दर-पीढ़ी आकारमें बढ़ता जा रहा है, और इस कारण हमारे मस्तिष्क भी हमारे पूर्वजोंके मस्तिष्ककी अपेक्षा उन्नत और बढ़िया हैं।

१८ वीं शताब्दीके मृत व्यक्तियोंके सिरकी जाँच करके वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि १०० वर्षके पहले अमेरिकन लोगोंके सिर

आधुनिक अमेरिकनोंके सिरसे छोटे होते थे, तथा प्रत्येक मनुष्यका माथा ५०-६० वर्षकी अवस्थातक निरन्तर बढ़ता रहता है ।

एक दूसरे वैज्ञानिक डा० टिल्लेका कहना है कि आधुनिक युगकी दिनचर्याके अनुकूल अपना सामञ्जस्य स्थापित करनेके लिए मनुष्यका सिर आकारमें बढ़ा हो रहा है तथा इसकी शक्ति बहुत कुछ गुम्बजसरीखी हो रही है । मनुष्यका मस्तिष्क अब भी विकास-पथपर अग्रसर हो रहा है—आजका मानव-मस्तिष्क वास्तवमें मछलीके मस्तिष्कका ही विकसित रूप है । लाखों-करोड़ों वर्षके विकास-क्रमने यह करामात कर दिखायी है । मस्तिष्कसे जितना ही अधिक काम लिया जायगा, उतना ही अधिक तेजीके साथ विकसित होनेका इसे अवसर मिलेगा ।

पौलैण्डकी वारसा यूनिवर्सिटीमें भी इस क्षेत्रमें काफी खोज-बीनका काम हुआ है । युद्धके पूर्व डाक्टर एडवर्ड लाथकी अध्यक्षतामें यह कार्य वहाँ चल रहा था । भविष्यके मनुष्यके बारेमें उनका कहना है कि हजार-दो-हजार वर्षके अन्दर ही मानव-शरीरमें पर्याप्त मात्रामें परिवर्तन हो जायगा । भविष्यके मनुष्य खूब लम्बे होंगे । उनका पेट छोटा होगा, खासकर पेड़ू । कनिष्ठ उँगली छोटी होगी और हाथकी अन्य उँगलियाँ छरहरी तथा लम्बी होंगी । पैरकी उँगलियाँ छोटी होंगी, किन्तु तलवे बड़े होंगे । खोपड़ीका पर्दा पतला होगा, किन्तु ललाट खूब चौड़ा होगा—अर्थात् भविष्यका मनुष्य प्रखर बुद्धिवाला होगा ।

शरीर और बुद्धि के विकासके साथ उसके दुःखोंका भी भार बढ़ जायगा । उसकी आयु बढ़ेगी, किन्तु उसकी मानसिक परेशानियाँ भी बढ़ जायँगी । उसका हाजमा घट जायगा और अनिद्रा रोगसे वह अधिक परेशान रहेगा । बुद्धि विकसित अवश्य होगी किन्तु मनुष्यकी सन्तानोत्पादन-शक्तिसँहास होगा । अतः सन्तानोत्पादनके लिए कृत्रिम उपायोंकी शरण ली जायगी । मनचाही सन्तान पैदा करनेके लिए हार्मोन और गिल्डियोंका रस इस्तेमाल किया जायगा । सन्तानोत्पादनका काम भी बहुत कुछ अंशोंमें देशकी गवर्नमेण्टके आधीन होगा । देशकी



आवश्यकतानुसार हर तरहके व्यक्ति पैदा किये जायँगे। वैज्ञानिक, गणितज्ञ, इंजीनियर, डाक्टर आदि हर श्रेणीकी सन्तानके लिए भिन्न-भिन्न उपाय इस्तेमाल किये जायँगे।

वैज्ञानिक मानव-शरीरके प्राकृतिक विकासकी प्रतीक्षामें चुपचाप बैठनेवाला नहीं है। चिकित्सा-विभागके विशेषज्ञोंने इस क्षेत्रमें प्रकृतिसे मानो होड़ लगा रखी है। शरीर-विज्ञानकी वारीकियोंका पता लगाकर आज दिन वैज्ञानिक इस फेरमें है कि वह मानव-जातिको बुढ़ापे और मृत्युसे कैसे बचाव दिलावे। पौराणिक-कालमें यौवन-दानकी भी बात सुनी गयी है। राजा ययातिको अपने पुत्रसे यौवन-दान मिला था। आधुनिक कालमें भी डाक्टर लोग प्रयोगशालाके भीतर तरह-तरहकी तरकीबें बुढ़ापेपर विजय प्राप्त करनेके लिए ढूँढ़ रहे हैं।

सुप्रसिद्ध फ्रेड्रिच डॉक्टर बोरोनाफने शरीरकी भिन्न-भिन्न गिल्टियोंका विशेष रूपसे अध्ययन किया है। शरीर-विज्ञान बताता है कि हमारे शरीरमें अनेक ग्रन्थिकोष (गिल्टियाँ) हैं जिनका हमारे शरीरके भिन्न-भिन्न अवयवोंसे बड़ा गहरा सम्बन्ध है। इन गिल्टियोंमेंसे समय-समयपर हमारे शरीरमें विशेष प्रकारके रसका प्रवाह होता है। भिन्न-भिन्न ग्रन्थियोंका रस हमारे शरीरके भिन्न-भिन्न अवयवोंकी कार्य-क्षमतापर पूरा नियन्त्रण रखता है—उदाहरणके लिए हमारे गलेकी गिल्टी (घाँटी) का सम्बन्ध हमारे मस्तिष्कसे है। इस ग्रन्थिके काममें तनिक भी गड़बड़ी हुई कि हमारे मस्तिष्कमें खराबी आ जाती है। हमारा स्वभाव यकायक चिड़चिड़ा हो जाता है, हम झक्की और सनकी बन जाते हैं। कभी-कभी इस गिल्टीकी खराबीसे मनुष्य पागल तक हो जाता है।

जनन-ग्रन्थियाँ भी मनुष्यके मस्तिष्क और उसके शारीरिक स्वास्थ्य-पर बड़ा प्रभाव रखती हैं। बुढ़े आदमीकी ग्रन्थियोंमें दोष आ जाता है। वे सुचारु रूपसे अपना काम नहीं कर पातीं। अतः उनकी शारीरिक तथा मानसिक शक्तियाँ मन्द पड़ जाती हैं। डाक्टर बोरोनाफने सोचा कि यदि बुढ़े व्यक्तियोंकी ग्रन्थियोंको निकालकर उनके स्थानपर

स्वस्थ तथा जवान जानवरोंके शरीरकी गिल्टियाँ आपरेशनद्वारा लगा दी जायँ तो उनका ग्रन्थिदोष दूर हो जायगा और उनके शरीरमें पुनः यौवनकी स्फूर्ति प्रकट हो सकेगी ।

इस सिलसिलेमें यह बता देना आवश्यक है कि प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया गया है कि हर श्रेणीके जानवरोंके शरीरकी ग्रन्थियोंसे एक ही प्रकारके रसका स्राव होता है । अतः मेढ़े या बन्दरकी शरीरकी ग्रन्थियाँ मनुष्यके शरीरमें लगा देनेपर मनुष्यके शरीरमें बन्दरके लक्षण नहीं उत्पन्न होंगे ।

अतः डाक्टर वीरोनाफने बन्दरोंकी ग्रन्थियोंकी कलम अनेक बुद्धि व्यक्तियोंके शरीरमें लगायी । डाक्टर साहबका कहना है कि जिन व्यक्तियोंके शरीरमें ये ग्रन्थियाँ लगायी गयीं उनकी स्मरण-शक्ति खूब बढ़ गयी, उनके शरीरमें नयी शक्तिका संचार हो आया, उनकी रंगोंमें ताजगी आ गयी, आँखोंमें चमक दिखायी देने लगी—वे हर बातमें बिलकुल जवान हो गये ।

डाक्टर वीरोनाफका विश्वास है कि 'मंकी ग्लैण्ड आपरेशन' से मनुष्यकी आयु भी बढ़ायी जा सकती है, क्योंकि वृद्धावस्थामें मनुष्यकी रोग-अवरोधक-शक्ति भी मन्द पड़ जाती है, अतः वृद्धावस्थाको दूरकर यदि यौवनकी शक्तिका समावेश हम करा सकें, तो रोग भी हमारे शरीरपर जल्द आक्रमण न कर पायेंगे ।

कई पुस्तोतक गिल्टियोंकी कलम लगाकर डाक्टर वीरोनाफने मेढ़ोंकी असाधारण नस्ल पैदा की है । आपका खयाल है कि यदि इस क्षेत्रमें काफी दिनोंतक अनुसन्धान किया जा सका, तो सम्भव है, निकट-भविष्यमें ही हम मनुष्यकी भी ग्लैण्ड आपरेशन द्वारा सर्वगुण सम्पन्न नस्लें पैदा कर सकें ।

गत युरोपीय महायुद्धमें डाक्टर वीरोनाफ एक फौजी अस्पतालके इनचार्ज थे । यहाँपर उन्होंने युद्धके घायल सिपाहियोंकी दूटी हड्डियोंके स्थानपर बन्दरोंकी हड्डियाँ लगाकर अनेक व्यक्तियोंको भला-चंगा कर



दिया। मनुष्यके टूटे-फूटे अंगोंकी मरम्मतके लिए बन्दरोंके शरीरकी हड्डियाँ बहुत ही उपयुक्त साबित हुई हैं। आश्चर्य नहीं कि सभ्य देशोंमें शीघ्र ही बन्दर पालनेके लिए बड़े-बड़े फर्म खोले जायँ, ताकि इलाजके लिए पर्याप्त संख्यामें स्वस्थ बन्दर मिल सकें।

इटलीके रीवीरा प्रान्तमें तथा पेरिसमें 'मंकी ग्लैण्ड आपरेशन' के लिए डाक्टर महोदयने बन्दरके फार्म खोल रखे हैं। फ्रेंच तथा बेलजियम सरकारने अपने साम्राज्यमें बन्दरोंकी रक्षाका समुचित प्रबन्ध किया है, बन्दरोंका शिकार कानून द्वारा वर्जित ठहराया है।

'मंकी ग्लैण्ड आपरेशन' के बाद मनुष्यमें नयी शक्ति ३ से १० सालतक मौजूद रहती है। इसके उपरान्त वह पुनः नयी ग्रन्थियाँ अपने शरीरमें लगा सकता है। इस तरह बार-बार वह खोये हुए यौवनको प्राप्त कर सकता है। इस विधिसे मनुष्यकी आयु काफी दिनोंतक बढ़ायी जा सकती है। अभी ठीक मालूम नहीं कि मनुष्य कितने वर्षतक जी सकता है। स्काटलैण्डका एक व्यक्ति अभी हालमें ही १४० वर्षकी आयु प्राप्त करके मरा है। हमारे भारतवर्षमें भी सौ-सवा सौ वर्षतक लोग अकसर जीते हैं।

वियेनाके प्रोफेसर यूजेन स्टनाक भी इस क्षेत्रमें काफी प्रसिद्धि पा चुके हैं। आपकी प्रयोगशालामें दूर-दूरसे लोग कायाकल्पके लिए आते हैं।

भारतीय चिकित्सा-पद्धतिमें भी 'कायाकल्प' की विशेष महत्ता थी, किन्तु आधुनिक कालमें कायाकल्पका वास्तविक रहस्य यूरोपके डाक्टरोंको ही मालूम है। प्रयोगशालाओंके भीतर गलतियों और भूलोंके बीहड़ वनमें बीसों वर्षतक भटकनेके उपरान्त वे इस रहस्यका पता लगा पाये हैं। कुछ ही दिनोंमें भूतलसे वे 'वृद्ध' शब्दका अस्तित्व मिटा देंगे, ऐसा उनका विश्वास है।



## मस्तिष्क के अन्दर विद्युत्-तरंगें

मनुष्यको अपने व्यक्तित्व और दिमागका सदैवसे गर्व रहा है। अबतक उसकी धारणा थी कि उसके व्यक्तित्व और मस्तिष्ककी दुनिया-में वैज्ञानिक प्रवेश नहीं कर सकता। किन्तु बीसवीं सदीमें विज्ञानने सर्वतोमुखी प्रगति की है। वैज्ञानिकने अनन्त अन्तरिक्षमें प्रवेश करके लाखों मील दूरके ग्रह-नक्षत्रोंका पता लगाया है। अनुसन्धानके लिए उसे कभी मीलों ऊँचे आकाशमें उड़ना पड़ा, तो कभी जानको हथेलीपर रखकर अनुल जलराशिके नीचे प्रवेश करना पड़ा।

अभी हालतक लोग समझते थे कि मनुष्यका मस्तिष्क हमारी समझसे परे है। मस्तिष्ककी क्रियाओंको समझनेमें विज्ञान हमारी तनिक भी मदद नहीं कर सकता। अधिकांश लोगोंका यही विश्वास था। डार्विनने अपने विकासवादकी सहायतासे जब यह साबित कर दिखाया कि मनुष्य जाति बन्दरका ही विकसित रूप है, तो तत्कालीन लोगोंके आत्माभिमानको बड़ी ठेस पहुँची। संसारके समस्त जीवोंमें अपनेको सर्वश्रेष्ठ समझनेवाला मनुष्य भला बन्दरको कब अपना पुरखा स्वीकर करना गवारा कर सकता था ? किन्तु डार्विनकी अकाट्य युक्तियोंका खण्डन भी वे नहीं कर पाते थे, अतः अपना आत्मसम्मान बनाये रखनेके लिए उन्होंने यह कहा कि मनुष्यकी देह बन्दरकी देहका विकसित रूप भले ही हो, किन्तु मनुष्यका दिमाग और उसकी आत्मा ईश्वरकी विशेष देन है, पर इस दलीलमें कोई विशेष दम न था, मनोविज्ञानके विशेषज्ञोंने शीघ्र ही यह साबित कर दिखाया कि शरीरकी भाँति मस्तिष्कका भी क्रमशः विकास हुआ है। चिम्पैजी आदि उच्च श्रेणीके बन्दरोंमें भी बुद्धि काफी मात्रामें पायी जाती है। ठीक मनुष्यकी भाँति इनमें तर्क करनेकी योग्यता होती है। पिछले अनुभवके आधारपर सही निष्कर्षपर पहुँचनेकी क्षमता चिम्पैजीमें भी पायी जाती है। यह बात निर्विवाद रूपसे मान ली गयी है कि मनुष्यका मस्तिष्क अन्य निम्न-



कोटिके जीवोंके मस्तिष्कका ही परिष्कृत रूप है ।

मनोवैज्ञानिकोंने मस्तिष्कका भलीभाँति अध्ययन किया है । मस्तिष्कके विकारोंके बारेमें उनकी जानकारी बीस वर्ष पहलेकी अपेक्षा आज बहुत कुछ आगे बढ़ी हुई है । इस जानकारीके आधारपर आपकी बुद्धिकी वे सही-सही जाँच कर सकते हैं । उन्होंने ऐसे विचित्र यन्त्र बनाये हैं जिनकी सहायतासे मस्तिष्कके भीतर उत्पन्न होनेवाली विद्युत्-तरंगें अंकित की जा सकती हैं । ये विद्युत्-तरंगें मस्तिष्ककी क्रियाशीलताकी द्योतक हैं । इन यन्त्रोंमें अंकित विद्युत्-तरंगोंको देखकर वैज्ञानिक आपकी बीमारी, स्वास्थ्य, चेतनशीलता, हर्ष या शोकका अतिरेक तथा उत्तेजनाका पता लगा सकता है । किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वैज्ञानिक आपके मस्तिष्ककी तरंगोंका अध्ययन करके यह बता सकता है कि आप वास्तवमें क्या सोच रहे हैं । इन तरंगोंकी मददसे यह पता अवश्य चल सकता है कि आप यों ही चुपचाप बैठे आराम कर रहे हैं या किसी विकट समस्याको हल करनेके लिए जोरोंसे सोच रहे हैं । आपको देखे बिना केवल मस्तिष्क-तरंगोंकी ही जाँच करके वैज्ञानिक बता सकता है कि जिस समय आपके मस्तिष्ककी तरंगें अंकित की गयीं, आप सो रहे थे या जगे हुए थे—होशमें थे या बेहोश अथवा उस समय क्लोरोफार्मके प्रभावमें आप बेखबर तो नहीं थे । मृगीके रोगीकी मस्तिष्ककी तरंगें भी विशेष प्रकारकी होती हैं—इन तरंगोंका विस्तृत विश्लेषण करके मृगी रोगके बारेमें जानकारी भी हासिल की गयी है । मस्तिष्ककी इन विद्युत्-तरंगोंके अध्ययनसे पता चला है कि मृगी रोगमें मस्तिष्कके भीतर एक तूफान-सा उत्पन्न होता है और इस तूफानके फलस्वरूप शरीरके स्नायु क्षुब्ध होकर अकड़ जाते हैं ।

क्लोरोफार्म आदि बेहोशी लानेवाली दवाओंका मस्तिष्कके ज्ञान-तन्तुओंपर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है ? भिन्न उम्रके रोगियोंके लिए कितनी देरतक क्लोरोफार्म सुँघाना आवश्यक है ? कितनी बार श्वास र्खींचनेपर रोगी पूर्णतया चेतनारहित हो जायगा ? इन सभी प्रश्नोंका

सही उत्तर वैज्ञानिक आज इन विद्युत्-तरंगोंकी सहायतासे प्राप्त कर सकता है। डाक्टरोंका खयाल है कि यह जानकारी सर्जरीके लिए बड़ी अमूल्य साबित होगी। प्रत्येक रोगी के लिए सही किस्मकी बेहोशीकी दवा डाक्टर बता सकेगा।

मस्तिष्ककी इन विद्युत्-तरंगोंने मनोविज्ञानके लिए एक नया क्षेत्र खोल दिया है। इंग्लैण्ड, अमेरिका और जर्मनीमें सैकड़ों डाक्टर इन तरंगोंका अध्ययन कर रहे हैं। आजसे लगभग १०० वर्ष पहले भी यूरोपके वैज्ञानिकोंको मालूम था कि हमारे स्नायुओंमें विद्युत् सम्बन्धी गुण हैं। आज जब हमने रेडियो और विद्युत्के बारेमें काफी जानकारी हासिल कर ली है, रेडियोके नूतनतम यन्त्रोंकी सहायतासे हम इन तरंगोंको नाप भी सकते हैं।

हृदय, मांस-पेशियाँ, स्नायु और स्वयं दिमागके अन्दरकी तरंगें अब नापी जा सकती हैं। ५० वर्ष पूर्व डाक्टर वालेरने गैल्वानोमीटरके तारके दोनों सिरोंको शरीरके भीगे हुए चमड़ेपर रखकर हृदयकी गतिसे उत्पन्न हुई विद्युत्-धाराको पहली बार नापा था।

इस क्षेत्रमें इस प्रयोगके कारण डा० वालेरको विशेष महत्त्व प्राप्त है। स्नायुकी अकेली नसकी विद्युत्-धारा नापनेके उपलक्ष्यमें कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटीके एक वैज्ञानिकको नोबेल पुरस्कार भी मिल चुका है। सन् १९३५ में जर्मनीके एक वैज्ञानिक डाक्टर बर्जेरने रेडियो वाल्वद्वारा परिवर्द्धित करके शीशे के एक परदेपर उन्हें अंकित करनेकी तरकीब भी ईजाद की है।

उक्त जर्मन वैज्ञानिकने शुरूमें सोचा कि मस्तिष्ककी विद्युत्-तरंगोंको नापनेके लिए यह आवश्यक है कि विद्युत्-यन्त्रके दोनों तार ललाटमें चमड़ेके अन्दर धँसा दिये जायँ। अतः उसने चमड़ेपर आयोडीन लगाकर अपने यन्त्रके दोनों तार उसमें धँसाये और इस तरह सैकड़ों व्यक्तियोंके मस्तिष्ककी उसने परीक्षा की। कुछ दिनों उपरान्त वैज्ञानिकोंने इन प्रयोगोंके आधारपर देखा कि तारको ललाटके अन्दर प्रवेश



करानेकी आवश्यकता नहीं है—ताँबेका एक छोटा-सा पत्तर तारके सिरेपर जोड़ दिया जाता है और इसी पत्तरको ललाटपर रख देते हैं—तारके रास्तेसे मस्तिष्कका विद्युत्-कम्पन रेडियो वाल्ववाले यन्त्रमें पहुँचता है और शीशेके पदोंपर ये विद्युत्-तरंगें अंकित हो जाती हैं। उस व्यक्तिको, जिसकी मस्तिष्क-तरंगें अंकित की जाती हैं, लेशमात्र भी कष्ट नहीं होता।

इन तरंगोंकी लम्बाई, इनकी शक्ति तथा इनकी आपसकी दूरी ये सभी बातें उस व्यक्तिकी मानसिक दशापर प्रकाश डालती हैं। सम्प्रति वैज्ञानिक महसूस करता है कि इन तरंगोंकी सहायतासे निकट-भविष्यमें वह मस्तिष्क सम्बन्धी अनेक गुत्थियोंको सुलझा सकेगा। मस्तिष्क-विज्ञान तथा स्नायु-विज्ञानके लिए यह यन्त्र सचमुच बड़े कामका है।

डाक्टर बर्जर बताते हैं कि जब मनुष्य आराम करता रहता है, तो उसके मस्तिष्ककी तरंगोंकी आपसकी दूरी बढ़ जाती है, और जब वह किसी फिक्रमें होता है या एकाग्रचित्तसे किसी बात को सोचता है तो, ये तरंगें एक दूसरेके पास मिली हुई होती हैं। उत्तेजित अवस्थामें ये तीव्र हो जाती हैं तथा इनके बीचकी दूरी भी कम हो जाती है।

कभी-कभी मस्तिष्कका दाहिना और बायाँ भाग एक-सा काम नहीं करता। इस तरह रोगीके मस्तिष्कके बायें भागमें एक प्रकारकी तरंगें उत्पन्न होती हैं और दाहिने भागमें दूसरे किसकी।

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, मृगी रोगके बारेमें भी इन विद्युत्-तरंगोंकी सहायतासे काफी जानकारी हासिल की गयी है। दौरा होनेके ठीक पहले रोगीके मस्तिष्कमें एक तूफान-सा उठता है—धीरे-धीरे मस्तिष्कके किसी एक भागमें बहुत-सी विद्युत्-शक्ति संकलित हो जाती है और तब एकाएक इस विद्युत्-शक्तिका डिसचार्ज हो जाता है और रोगी बेहोश होकर गिर पड़ता है। अमेरिकामें हजारों व्यक्ति मृगी रोगसे पीड़ित हैं। अतः वहाँ इस रोगके मूलोच्छेदनके लिए जोरोंमें कोशिश की जा रही है। इस यन्त्रकी सहायतासे डाक्टरोंने यह भी

पता लगाया है कि मृगी रोगसे पीड़ित व्यक्तियोंके मस्तिष्कमें खल्व्य हालतमें भी कुछ विकार मौजूद रहता है। वैज्ञानिकोंका खयाल है कि निकट-भविष्यमें इस यन्त्रकी सहायतासे पता लगा सकेंगे कि मस्तिष्कके किस भागमें मृगी रोग सम्बन्धी विद्युत्-तूफान आरम्भ होता है—इस दूषित भागको सम्भव हो सका तो डाक्टर आपरेशन करके बाहर निकाल देगा और रोगी मृगीके विकट रोगसे सदाके लिए छुटकारा पा जायगा।

मस्तिष्क तथा ज्ञायु-विज्ञानके लिए यह यन्त्र उतना ही महत्वपूर्ण है जितना शरीर-विज्ञानके लिए डाक्टरोंके हाथमें खुर्दबोन साबित हो चुका है। हाथकी लिखावटकी तरह प्रत्येक व्यक्तिके मस्तिष्ककी तरंगें भी भिन्न हुआ करती हैं।

## बुद्धिकी नाप-जोख

किसी भी क्षेत्रमें जब वैज्ञानिक प्रवेश करता है तो उसका सर्व-प्रथम विषय होता है अध्ययन की जानेवाली वस्तुओंकी नाप-जोखका काम । अनुसन्धानके मार्गपर अग्रसर होनेके लिए वह प्रत्येक प्रयोगमें वैज्ञानिक नाप-जोखकी शरण लेता है ।

पदार्थ-विज्ञानके लिए नाप-जोख करनेमें कोई विशेष कठिनाई नहीं होती, किन्तु मनोवैज्ञानिक तथा मस्तिष्ककी गुत्थियाँ सुलझानेवालोंको गूढ़ तथा अगम्य विचार, उद्वेलन, हर्षातिरेक आदि राशियोंसे काम पड़ा करता है। इन सूक्ष्म राशियोंकी सही तौरपर नाप-जोख करना सरल कार्य नहीं है।

बुद्धिकी थाह लगाना वास्तवमें मुश्किल काम है। वैसे तो स्कूल-कालेजोंमें परीक्षाएँ होती रहती हैं, किन्तु ये परीक्षाएँ बुद्धि-प्रखरताका



अन्दाज नहीं लगतीं, वरन् इनसे तो केवल इस बातका पता चलता है कि अमुक व्यक्तिके मस्तिष्कके अन्दर कितनी जानकारी भरी पड़ी है। यही कारण है कि स्कूल-कालेजोंमें अनेक कुन्द दिमागवाले भी परीक्षामें रट-रटाकर फर्स्ट क्लास ले आते हैं और प्रखर बुद्धिवाले विद्यार्थी, जो अपने दिमागमें उतनी अधिक बातें ठूँस नहीं सकते प्रथम श्रेणीसे वञ्चित रह जाते हैं। सच तो यह है कि इन परीक्षाओंकी मददसे केवल इतनाभर हम जान सकते हैं कि मस्तिष्कके अन्दर क्या है। स्वयं मस्तिष्ककी प्रौढ़ता और शक्ति कितनी है, इस बातका पता स्कूल-कालेजकी परीक्षाओंसे नहीं लग सकता।

स्वर्गीय गणितज्ञ रामानुजम्की बुद्धिप्रखरतामें किसे सन्देह हो सकता है ? किन्तु क्या आपको मालूम है कि दरिद्र कुटुम्बमें पैदा हुआ यह प्रतिभाशाली बालक मद्रास युनिवर्सिटीकी इण्टरमीडियेट परीक्षामें उत्तीर्ण न हो सका ? दिनरात गणितकी गुथियोंमें डूबा हुआ बालक अन्य विषयोंकी ओर ध्यान भी न दे सका। नवीं श्रेणीमें ही उसने बी० ए० कक्षाके गणितका कोर्स समाप्त कर डाला था—सो भी बिना किसी अध्यापककी मददसे। पड़ोसके एक बी० ए० के विद्यार्थीसे गणितकी पुस्तकें कुछ दिनोंके लिए उसने उधार माँग रखी थीं।

गरीब घरानेका बालक इण्टरमीडियेट परीक्षामें असफल होनेके बाद दुबारा कालेजकी पढ़ाई आरम्भ करनेका साहस न कर सका। बेचारेकी स्कालर्शिप भी बन्द हो चुकी थी। आखिर मुश्किलोंसे पोस्ट आफिसके विभागमें उसे ३०) मासिककी क्लर्की मिली—किन्तु उसके गणितके अनुसन्धान पूर्ववत् जारी रहे। इसी बीच मित्रोंके अनुरोधसे उसने अपने गणित सम्बन्धी अनुसन्धानके कागज ट्रिनिटी कालेज कैम्ब्रिजके गणितके प्रोफेसर हार्डीके पास भेजे। हार्डीने इन महत्त्वपूर्ण गवेषणापत्रोंको देखते ही धूलमें पड़े हुए हीरेको पहचाना—उन्हींके उद्योगसे मद्रास युनिवर्सिटीने रामानुजम्को २५०) मासिककी विशेष छात्रवृत्ति प्रदान की कि वे इंग्लैण्ड जाकर गणितके अनुसन्धान-कार्यको पूरा कर सकें।

उनकी प्रतिभाकी कद्र संसारकी सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक-संस्था रायल सोसाइटीने भी की। ३० वर्षकी ही अवस्थामें यह नवयुवक रायल सोसाइटीका सदस्य चुन लिया गया। इस सम्मानको प्राप्त करनेवाले यह सर्वप्रथम भारतीय थे।

अपनी गलत परीक्षा-प्रणालीके कारण युनिवर्सिटीने इस अपूर्व प्रतिभावाले युवककी कितनी जबरदस्त नाकदमी की थी ! आज भी अनेक प्रखर बुद्धिवाले युवक परिस्थितियोंके फेरमें पड़कर क्लर्कमें कलम घिस रहे हैं।

बुद्धिकी नाप-जोखका प्रयत्न सैकड़ों वर्ष पूर्व भी लोगोंने किया था। उन्होंने सोचा कि सिर अगर बड़ा होगा तो उस व्यक्तिका दिमाग भी बड़ा होगा ही; अतएव उसके अन्दर अक्ल भी अधिक मात्रामें मौजूद होगी। 'सर बड़ा सरदारका, पैर बड़ा गँवारका' जैसी कहावतें भी इसी धारणासे उत्पन्न हुईं जान पड़ती हैं। किन्तु अपराध-विज्ञानकी प्रगतिने यह बताया कि औसतसे ज्यादा बड़ा सिर इस बातका द्योतक है कि उस व्यक्तिकी बुद्धिमें कोई दोष है।

नाककी वनावट, ऊँचा ललाट—इन सभी बातोंका सम्बन्ध बुद्धिसे स्थापित करनेका प्रयत्न लोगोंने समय-समयपर किया है, किन्तु बादमें जाँच करनेपर किसीमें कुछ तथ्य नजर नहीं आया। ललाटकी चौड़ाई नापकर न तो आप यह कह सकते हैं कि अमुक व्यक्ति चोटीका बुद्धिमान है, और न यह ही कह सकते हैं कि अमुक शरदसके कान लम्बे हैं, अतएव वह हड़ दर्जेका मूर्ख होगा।

फिर इन्द्रियोंकी चैतन्यशीलता और बुद्धि-प्रखरतामें सम्बन्ध ढूँढ़नेकी कोशिश की गयी। जाँचके भिन्न-भिन्न तरीके ईजाद किये गये—किसीमें स्पर्शज्ञानकी क्षमता नापनी थी, तो किसीमें घ्राणशक्तिकी और किसीमें दृष्टिकी जाँच थी। किन्तु जब ये प्रयोग काफी अधिक लोगोंपर आजमाये जा चुके तो आखिर यही निष्कर्ष निकला कि इन्द्रियोंकी चैतन्यशीलता और बुद्धि-प्रखरतामें किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं।



आखिर सन् १९०५ में सुप्रसिद्ध फ्रेंच मनोवैज्ञानिक बिनेने बुद्धिकी थाह लगानेका वैज्ञानिक तरीका ईजाद किया। आवश्यकता ही आविष्कारोंकी जननी है। पेरिसके अधिकारियोंको फिर हुई कि स्कूलके अन्दर कुछ विद्यार्थी इतने मन्दबुद्धि और क्लाससे पिछड़े हुए क्यों पाये जाते हैं, उनके सुधारनेके लिए कुछ किया जा सकता है या नहीं। उन्होंने अपनी मुश्किल बिनेके सामने पेश की। फलस्वरूप बिनेने अपने अनुसन्धानोंके आधारपर बुद्धिकी प्रखरता नापनेके लिए तरीके ईजाद किये।

भिन्न-भिन्न उम्रके लड़कोंकी उसने जाँच की। औसत बुद्धिवाले लड़कोंने जिन प्रश्नोंका उत्तर सन्तोषजनक ढंगसे दे दिया, उन्हीं प्रश्नोंको उसने उस उम्रके बच्चोंके लिए मापदण्ड माना। सहस्रों व्यक्तियोंकी बौद्धिक परीक्षा लेनेके बाद यह देखा गया कि १६ वर्षके लड़के वयस्क व्यक्तियोंके बराबर ही उन परीक्षाओंमें नम्बर प्राप्त कर लेते हैं। अतः इस निष्कर्षपर लोग पहुँचे कि १६ वर्षकी अवस्थातक तो बुद्धि बढ़ती है, किन्तु इसके आगे बुद्धिका बढ़ना रुक जाता है। हाँ, जानकारी भले ही बढ़े और मृत्युपर्यन्त आदमीकी जानकारी बढ़ती ही रहती है। इस निष्कर्षके आधारपर मनुष्यकी सबसे बड़ी बौद्धिक आयु १६ वर्षपर रखी गयी।

अब बुद्धि-प्रखरताके लिए उपर्युक्त पैमाना प्रो० बिनेने बनाया। मान लीजिये एक १४ वर्षके बालककी बौद्धिक परीक्षा ली जा रही है। यदि उसने उन प्रश्नोंका सही-सही उत्तर दे दिया जो बारह वर्षके औसत बालकोंकी श्रेणीके हैं, तो उसकी बौद्धिक अवस्था केवल १२ मानी जायगी। अतः उसकी बुद्धिका परिचायक अंक होगा  $(१२ \div १४) \times १००$ ; इस अंकको प्राप्त करनेके लिए उस व्यक्तिकी बौद्धिक अवस्थाको उसकी वास्तविक अवस्थासे भाग देकर १०० से गुणा करते हैं, किन्तु इस प्रणालीमें यदि उस व्यक्तिकी वास्तविक अवस्था १६ वर्षसे ऊपर हुई तो उस हालतमें भी उसकी वास्तविक अवस्था १६ ही मानी जायगी। क्योंकि इस परीक्षामें पूछे जानेवाले प्रश्नोंकी श्रेणियाँ ४ या ५ वर्षसे

लेकर केवल १६ वर्षतक ही होती हैं ।

बुद्धिमापक परीक्षाओंका महत्त्व समझनेके लिए यह आवश्यक होगा कि हम बुद्धिकी सही परिभाषा कर सकें । बुद्धि कोई ऐसी स्थूल वस्तु नहीं है जिसकी कम या अधिक मात्रा आपके पास संचित हो । वास्तवमें कार्य करनेके ढंगसे हमें किसी व्यक्तिकी बुद्धिका अन्दाज लगता है । यदि वह किसी परिस्थितिका सामना सफलतापूर्वक कर लेता है तब हम कहते हैं कि उसने बुद्धिका परिचय दिया; और यदि उसने परिस्थितिका सामना ऊटपटांग तरीकेसे किया तो उसे हम बुद्धिहीन कहते हैं । संक्षेपमें परिस्थितिको सम्भालने या किसी कार्यको पूरा करनेमें अपने पूर्व-अर्जित अनुभवसे प्राप्त ज्ञानके सही उपयोग करनेकी क्षमता ही बुद्धि है । अतः बुद्धिकी इस परिभाषाके आधारपर ही बुद्धि-मापक परीक्षाओंके लिए परीक्षापत्र बनाये गये हैं । उदाहरणके लिए ६ वर्षके स्तरके बालकोंकी परीक्षाके लिए मनुष्यके चेहरेके कई चित्र उनके सामने रखे जाते हैं । इसमें कुछ चीजें छुटी रहती हैं जैसे किसी चेहरेसे नाक गायब होगी, किसीके एक आँख तो किसीके एक कान गायब होगा । परीक्षामें यह आवश्यक होता है कि वह बालक बताये कि चित्रमें किस चीजकी कमी है । एक दूसरा उदाहरण लीजिये, नौ वर्षके स्तरके बालकके सामने लकड़ी और कोयला, सन्तरा और गेंद; इस तरहकी चार जोड़ी वस्तुएँ रखी जाती हैं और उससे पूछा जाता है कि प्रत्येक जोड़ेकी वस्तुओंके बीच समानता और असमानता बताये ।

क्रियात्मक-बुद्धि-परीक्षामें ठोस वस्तुओंका अधिक प्रयोग होता है और मौखिक प्रश्नोंका कम, जैसे परीक्षार्थीके सामने एक लकड़ीका तख्ता रखा जाता है जिसमें भिन्न आकारके सूराख कटे होते हैं । इन सूराखोंमें उन्हींके आकारवाले लकड़ीके टुकड़े फिट बिठाने होते हैं । यदि परीक्षार्थी किसी छिद्रमें उससे भिन्न आकारके टुकड़े बिठानेका प्रयत्न करता है तो उसकी एक अशुद्धि मानी जाती है । इस परीक्षाके लिए बालकको केवल चन्द मिनट ही दिये जाते हैं ।



क्रियात्मक-बुद्धि-परीक्षाके एक और नमूनेमें कागजपर बने एक भूल-भुलैयाका चित्र परीक्षार्थीके सामने रखा जाता है और उससे कहा जाता है कि वह भूल-भुलैयासे निकलनेका सबसे छोटा मार्ग पेंसिलसे दिखाये ।

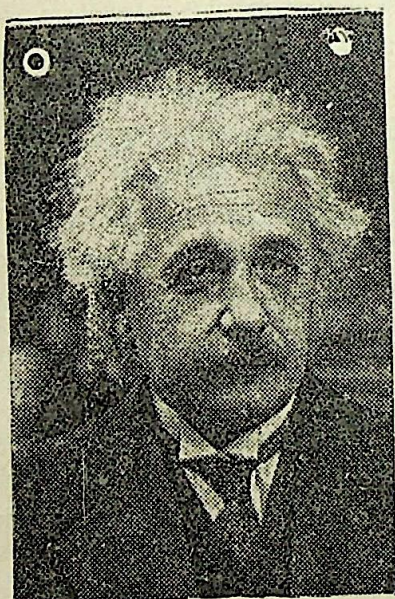
सन् १९१७ में अमेरिकामें जर्मन महायुद्धमें भर्ती होनेके लिए आये हुए रंगरूटोंकी बौद्धिक परीक्षा इसी प्रणाली द्वारा ली गयी । लगभग २० लाख रंगरूटोंकी परीक्षा ली गयी और उनकी औसत बौद्धिक उम्र केवल १३ वर्ष निकली—एक औसत १६ वर्षके लड़केसे भी कम ! उक्त रीतिसे बौद्धिक अंक प्राप्त करके उन रंगरूटोंको उनकी बुद्धिके अनुसार भिन्न-भिन्न श्रेणियोंमें बाँटा गया, अतः प्रत्येकको उसकी योग्यताके अनुसार काम भी बाँट दिया गया—कौन-सा रंगरूट सेनामें अफसरका काम अंजाम दे सकता है, कौन-सा रंगरूट विध्वंसक वायु-यानका परिचालन दक्षतापूर्वक कर सकता है और कौन-सा रंगरूट सबमैरीनकी शिद्दतोंको धैर्यपूर्वक सहते हुए भी होश-हवास दुरुस्त रख सकता है । इन प्रश्नोंका सन्तोषजनक उत्तर मनोवैज्ञानिकने उक्त परीक्षा-प्रणालीद्वारा दिया । रंगरूटोंको सेनाके विभिन्न विभागोंमें बाँटनेके कुछ काल पश्चात् जब उनके सम्बन्धमें रिपोर्ट मँगायी गयी तो पता चला कि सभी रंगरूट अपने-अपने स्थानपर अपनी ड्यूटी कुशलता-पूर्वक अंजाम दे रहे थे ।

डा० बिनेकी बौद्धिक परीक्षा द्वारा जनसाधारणकी जाँच करनेपर विचित्र निष्कर्षपर हम पहुँचते हैं । सबसे ऊँचा बौद्धिक अंक जगत्-विख्यात वैज्ञानिक प्रो० आइन्सटाइनने प्राप्त किया है—इनका बौद्धिक अंक २१० था । इसमें आश्चर्य करनेकी भी कोई गुस्ताइश नहीं है, क्योंकि जिन दिनों प्रो० आइन्सटाइनने पहली बार अपना सापेक्षवादका सिद्धान्त वैज्ञानिकोंके सामने रखा था समस्त संसारमें केवल गिनतीके बारह वैज्ञानिक उनके इस महत्वपूर्ण अनुसन्धानको समझ पाये थे ।

१४० बौद्धिक अंक प्राप्त करनेवालोंकी संख्या १ प्रतिशत पहुँचती

है। इन्हें हम चोटीके विद्वान् कह सकते हैं। १२०-१४० तक जिनका बौद्धिक अंक पहुँचता है उन्हें 'विशेष प्रखर बुद्धिमान' कह सकते हैं। ऐसे व्यक्तियोंकी संख्या ५ प्रतिशतके हिसाबसे जनसाधारणमें पायी जाती है। ११०-१२० बौद्धिक अंक प्राप्त करनेवालोंकी संख्या जन-

### डा० आइन्स्टाइन



आपका बौद्धिक अंक बहुत ही ऊँचा था। आप संसारके सबसे बड़े वैज्ञानिक समझे जाते हैं।  
 'सापेक्षवाद'के सिद्धान्तकी खोज  
 आपने ही की थी।

साधारणमें ढाई प्रतिशत है। इन्हें 'प्रखर बुद्धि' कहते हैं। ९०-११० तक बौद्धिक अंक प्राप्त करनेवाले ६० प्रतिशत हैं। इन्हें औसत बुद्धिवालोंकी श्रेणीमें रख सकते हैं। हम और आप भी इसी श्रेणीमें शामिल



हैं। ८०-९० तक जिनका बौद्धिक अंक पहुँचता है, वे मन्दबुद्धि कहलाते हैं। जनसाधारणमें १४ प्रतिशत लोग इसी श्रेणीके पाये जाते हैं।

७० तक बौद्धिक अंक प्राप्त करनेवालोंको 'जाहिल' या 'मूढ़' कह सकते हैं। जनसंख्यामें प्रायः आठ प्रतिशत लोग इस श्रेणीके मिलते हैं। ५० या इससे कम बौद्धिक अंक प्राप्त करनेवाले 'निपट जाहिल' या 'जड़' कहलाते हैं। सौभाग्यवश जनसाधारणमें इस श्रेणीके लोगोंकी संख्या एक प्रतिशतसे अधिक नहीं होती है, वरना संसारके कारवारका सुचारु रूपसे चलना असम्भव हो जाता।

'जड़' श्रेणीके व्यक्तियोंकी दशा वास्तवमें दयनीय होती है। इनकी बुद्धिहीनता इतनी अधिक होती है कि जीवन-क्रियाके साधारण कार्योंको भी ये अन्जाम नहीं दे पाते हैं। वे स्वयं न अपने कपड़े पहन सकते हैं और न स्नान कर सकते हैं। बातचीत करनेमें उनका शब्द भण्डार 'हाँ' या 'ना' शब्दोंतक ही सीमित रहता है। ये बेचारे बिना आगा-पीछा देखे गहरे पानीमें उतर जायँगे या अपने हाथ आगमें डाल देंगे। 'मूढ़' श्रेणीके व्यक्ति बुद्धि स्तरमें 'जड़' से तनिक ऊँचे रहते हैं। ये जिन्दगीके मामूली खतरोंसे बचना जानते हैं। काम चलाने भर ये बातचीत भी कर लेते हैं किन्तु अत्यन्त सरल कार्योंको छोड़कर अन्य कार्य ये दूसरोंकी देख-रेखमें ही कर सकते हैं।

क्षीण बुद्धिवाले व्यक्तियोंमें सबसे उच्च श्रेणी 'मूखों' की होती है। जीवनकी साधारण क्रियाएँ ये बखूबी अन्जाम दे लेते हैं। घरेलू नौकर, टहलुआ अथवा मजदूरीका काम ये लोग ठीक तरहसे कर सकते हैं। किसी नवीन परिस्थिति या समस्याको ये लोग अपने आप स्वतन्त्रतापूर्वक सँभाल नहीं सकते। इस श्रेणीके लड़के प्रायः विपम परिस्थितियोंमें गलत रास्ता अख्तियार करके चोरी करने लग जाते हैं और लड़कियाँ वेश्यावृत्ति धारण कर लेती हैं।

सीधे-सादे देहाती-समाजमें क्षीण बुद्धिवाले व्यक्ति भले ही खप जायँ, किन्तु वैज्ञानिक साधनोंसे परिपूर्ण उन्नत समाजमें इस श्रेणीके

व्यक्ति स्वयं एक समस्या बन जाते हैं। अतः ऐसे समाजमें यह आवश्यक हो जाता है कि मनोविज्ञानके नूतन अनुसन्धानोंकी सहायतासे ऐसे उपाय ढूँढ़े जायँ कि इस श्रेणीके व्यक्ति भी समाजके लिए उपयोगी बन सकें। बुद्धिमापक परीक्षाओंकी उपयोगिता क्या है? प्रथम ऐसे बालक जो औसतसे कम बौद्धिक अंक प्राप्त करते हैं, स्कूलकी कक्षाओंमें अन्य बालकोंके साथ समुचित प्रगति करनेमें असमर्थ रहते हैं। अतः इस श्रेणीके बालकोंकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध अलग एक विशेषज्ञकी देखरेखमें किया जा सकता है जो उनकी मानसिक कमजोरियोंका ध्यान रखते हुए उन्हें उचित शिक्षा तथा ट्रैनिङ्ग प्रदान करके उन्हें समाजके लिए उपयोगी बना सके। द्वितीय कक्षामें प्रखर बुद्धिवाले बालकोंको औसत बुद्धिके बालकोंके संग धीमी गतिसे चलना पड़ता है जब कि वे तीव्रगतिसे शिक्षा ग्रहण करनेकी क्षमता रखते हैं। अतः बुद्धिमापक परीक्षाकी सहायतासे ऐसे बालकोंको चुनकर उनकी शिक्षाका प्रबन्ध अलग किया जा सकता है जिससे थोड़े समयमें ही उनकी प्रतिभाका पूर्ण विकास हो सके। और अन्तमें, बुद्धिमापक परीक्षाओंकी तृतीय उपयोगिता यह है कि माता-पिताको अपने बालकके बौद्धिक स्तरका सही पता लग जाता है अतः वे पहलेसे इस बातका निर्णय कर सकते हैं कि उनके बालकके अन्दर एक उच्च कलाकार, वैज्ञानिक अथवा इंजीनियर बननेकी योग्यता मौजूद है या कि बीमेके एजेण्ट बनने की। प्रायः देखा गया है कि धनी पिताने अपने औसत बुद्धिवाले पुत्रको डाक्टरी पढ़नेके लिए मेडिकल कालेजमें भर्ती कर दिया और वहाँपर उस बेचारेको अपनी औसत बुद्धिके कारण पग-पगपर असफलताओंका सामना करना पड़ता है तथा क्लासमें अपमानित होना पड़ता है। प्रायः इन परिस्थितियोंमें ऐसे ही विद्यार्थी आत्महत्या कर बैठते हैं। निस्सन्देह बुद्धिमापक परीक्षाएँ इन विद्यार्थियोंको इन विषम परिस्थितियोंसे त्राण दिला सकती हैं।

बुद्धि सम्बन्धी प्रतिभाके विकासके लिए बौद्धिक धरातलका ऊँचा



होना आवश्यक है। किन्तु आपकी बुद्धिको किन परिस्थितियोंमें विकसित होनेका अवसर मिल रहा है, यह बात भी ध्यानमें रखना जरूरी है। मस्तिष्क-विज्ञानके विशेषज्ञ इस सम्बन्धमें छानबीन करनेपर इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि प्रत्येक व्यक्तिके मस्तिष्ककी कार्यक्षमताकी मात्रा नियत होती है। उसकी टोटल मस्तिष्क-शक्ति घटती-बढ़ती नहीं। उसमें परिस्थितियोंके कारण तेजी या मन्दी भले ही आ सकती है। यदि किसी कार्यमें आपकी गहरी दिलचस्पी है, तो आपकी सारी इच्छाशक्ति उसीपर केन्द्रित हो जायगी और आपकी मानसिक क्रियाओंमें भी उसी अनुपातसे तेजी आ जायगी। शरीरकी अवस्थाका भी मस्तिष्ककी कार्यक्षमतापर काफी असर पड़ता है। भूखे-प्यासे या थके हुए व्यक्तियोंसे कोई भी मानसिक श्रम ठीक तौरसे नहीं किया जा सकता। किन्तु वे ही व्यक्ति स्वस्थ तथा शान्तचित्त होनेपर उसी कामको सफलतापूर्वक कर सकते हैं।

स्पियरमेंनने बुद्धिकी विस्तृत व्याख्या करते हुए बतलाया है कि हमारी मानसिक क्रियाओंके पीछे दो प्रकारकी बौद्धिक शक्तियाँ काम करती हैं—एक हमारी जन्मजात बुद्धि और दूसरी विशेष रूपसे प्राप्त की गयी बुद्धि। हमारी जन्मजात बुद्धि प्रत्येक मानसिक क्रियामें मौजूद रहती है, किन्तु विशेष बुद्धि अपने निजी क्षेत्रमें ही काम करती है। किसी क्रियामें समूची जन्मजात बुद्धि और तनिक-सी विशेष बुद्धि इस्तेमाल होती है, तो किसी क्रियामें विशेष बुद्धि ही अधिक लगती है, जन्मजात बुद्धि थोड़ी मात्रामें काम करती है।

इसी कारण प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण होनेवाले कुछ-एक विद्यार्थी जीवनके संघर्षमें एक क्षणके लिए भी नहीं टिक पाते। अपनी विशेष बुद्धिके भरोसे विद्याध्ययनमें तो वे बाजी मार ले जाते हैं, किन्तु जन्मजात बुद्धिकी कमीके कारण अन्य क्षेत्रोंमें वे पिछड़ जाते हैं। इसके प्रतिकूल, ऐसे व्यक्ति जिनके अन्दर जन्मजात बुद्धिकी मात्रा अधिक होती है, लगभग सभी क्षेत्रोंमें औसत दिमागवालोंकी अपेक्षा आगे ही रहते हैं

और यदि किसी विशेष क्षेत्रमें उनकी प्रवृत्ति हुई तो उसमें वे अद्वितीय होकर चमकते हैं ।

मनुष्यकी यह जन्मजात बुद्धि जन्मकालसे १६ वर्षकी अवस्थातक निरन्तर बढ़ती रहती है, फिर उसकी वाढ़ रुक जाती है । लाख प्रयत्न करनेपर भी इस जन्मजात बुद्धिमें आप किसी प्रकारकी वृद्धि नहीं कर सकते । अवश्य किसी खास क्षेत्रमें दक्षता प्राप्त करनेके लिए आप विशेष बुद्धिको प्रखर बना सकते हैं, किन्तु इस कारण आपका बौद्धिक धरातल ऊँचा न हो पायेगा । ईश्वरने यदि आपको बुद्धि प्रदान करनेमें कृपणता की है तो उस कमीको आप किसी तरह पूरा नहीं कर सकते । मृत्यु-पर्यन्त आप मन्द-बुद्धि ही कहलायेंगे ।

## जीवधारियोंके आकारकी उपयुक्तता

कदाचित् जीवधारियोंकी पारस्परिक विभिन्नताएँ सबसे अधिक उनके आकार ( साइज ) से प्रकट होती हैं । फिर भी विज्ञानके सिद्धान्तों द्वारा यह सरलतापूर्वक साबित किया जा सकता है कि खरगोशकी सूरत-शङ्कुका जानवर गैंड़ेके साइजका शरीर धारण करनेसे जीवित नहीं रह सकता । प्रत्येक श्रेणीके जानवरके लिए सबसे उपयुक्त साइज नियत है । डील-डौलमें प्रचुर अभिवर्द्धन करनेके लिए प्रकृतिको उस जानवरकी आकृति भी अनिवार्यतः बदलनी होती है ।

दानवके आकारके एक ६० फुट लम्बे मनुष्यकी कल्पना कीजिये—रामलीलामें रावण और मेघनाद आदिके पुतले प्रायः इसी साइजके बनाये जाते हैं । ये दानव मनुष्यकी अपेक्षा दसगुने चौड़े तथा दसगुने मोटे भी बनाये जाते हैं । इस हिसाबसे इन दानवोंका भार मनुष्यके भारसे हजार गुना अधिक होगा । इसका अर्थ हुआ कि उस दानवके



शरीरकी हड्डीके प्रत्येक वर्ग इंचको साधारण मानव शरीरकी हड्डीकी अपेक्षा दसगुना अधिक भार सँभालना पड़ेगा—फलस्वरूप कदम उठाते ही उस दानवकी हड्डी चूर-चूर हो जायगी ।

प्रकृतिने इस मुश्किलको बड़ी होशियारीके साथ हल किया है । जीवधारियोंके साइजको असाधारण रूपसे बढ़ानेके साथ प्रकृति दो उपायोंकी शरण लेती है । या तो उस जीवधारीकी टाँगें खूब मोटी और स्थूल बना देती है, जैसे हाथी और दरियाई घोड़ेकी, या उस जानवरके शरीरको जिराफ और ऊँटकी भाँति पतला बनाकर उसकी लम्बी टाँगोंको छितरा देती है ताकि उनका सन्तुलन कायम रहे ।

### पृथ्वीकी आकर्षण शक्ति

पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षणका भी भिन्न-भिन्न जीवधारियोंपर उनके शरीरकी स्थूलताके अनुसार भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ता है । खुहियाको पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिसे विशेष खतरा नहीं होता । उसे एक हजार फुट गहरे गड्ढेमें गिरा दीजिये, नीचे तलपर पहुँचनेपर उसे एक हलका-सा धक्का मात्र महसूस होगा । कुछ ही क्षण उपरान्त वह रेंगने लगेगी, जैसे कुछ हुआ ही नहीं ।

जरा-बड़े आकारका चूहा इतना नीचे गिरनेपर चोट खाकर मर जायगा, मनुष्यकी हड्डी-पसली टूट जायगी और घोड़ा इतने गहरे गड्ढेमें गिरनेपर ऐसा जबरदस्त धक्का खायगा कि उसकी हड्डियोंके छोटे-छोटे टुकड़े होकर इधर-उधर उड़ जायँगे, जैसे आसमानसे पक्के फर्शपर गिरनेपर पानीकी बूँदें नन्हें-नन्हें जराँके रूपमें चारों ओर बिखर जाती हैं ।

किसी जीवधारीके शरीरकी लम्बाई, चौड़ाई तथा मोटाई प्रत्येकको दसगुना कम करनेपर उसके वजनमें हजार गुना कमी हो जाती है, किन्तु उसके शरीरका आयतन तो केवल सौगुना ही कम होता है । इस हिसाबसे नन्हें साइजके जीवधारियोंके लिए वायुकी अवरोधक शक्ति पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिकी अपेक्षा दसगुनी बैठती है ।

## तरल पदार्थोंके संसर्गका भय

इसी कारण कीड़े-मकोड़ोंके लिए नीचे गिरकर चोट खानेका तो प्रश्न ही नहीं उठता, और यही वजह है कि मकड़े-मक्खी आदिको छतपर उलटे चलनेमें बहुत ही कम प्रयास करना पड़ता है। किन्तु जहाँ पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिके भयसे उन्हें सर्वथा छुट्टी मिली है, वहाँ प्रकृतिने इस छूटके लिए उनसे भारी मूल्य वसूल किया है। वह है पानी सरीखे तरल पदार्थोंके संसर्गका भय। स्नान करनेके उपरान्त मनुष्यके शरीरपर १/५० इंच मोटी तह पानीकी मौजूद होती है। इस पानीका वजन लगभग आध सेर होता है। एक भींगी हुई चुहियाके शरीरपर लगे हुए पानीका वजन लगभग उतना ही होता है जितना उसके शरीरका वजन। भींगी हुई मक्खीको अपने शरीरके वजनके कई गुने पानीको ढोना पड़ता है और जैसा पाठकोंने गौर किया होगा पानी या अन्य किसी तरल पदार्थसे एक बार भींग जानेपर मक्खीका इधर-उधर चलना-फिरना या उड़ना दूभर हो जाता है। कीड़े-मकोड़ोंकी दशा तो और भी दयनीय है—पानी या दूधके चंगुलमें जहाँ ये फँसे कि इनकी जान गयी। प्रकृतिने कतिपय कीड़े-मकोड़ोंपर कुछ दया अवश्य दिखलायी है—उसने इन्हें सूँढ़ सरीखे लम्बे अंग दिये हैं जिनकी सहायतासे ये दूरसे ही अपनी प्यास बुझानेके लिए पानी खींच लेते हैं।

## पक्षियोंका आकार

पक्षियोंके आकारपर भी भौतिक विज्ञानके वे ही नियम लागू होते हैं जो वायुयानोंके उड़नेके सिद्धान्तपर लागू होते हैं। हवामें उड़ते रह सकनेके लिए न्यूनतम रफ्तार तो वायुयानोंको अवश्य बनाये रखना चाहिये, उनकी लम्बाईके वर्गमूलके अनुसार रफ्तार बढ़ती-घटती है। यदि १६ फुट लम्बा कोई वायुयान कम-से-कम ८० मीलकी रफ्तारसे उड़ सकता है तो दूसरा वायुयान जो ६४ फुट लम्बा है, पहलेकी अपेक्षा कमसे कम दूनी रफ्तारसे उड़नेके लिए बाध्य होगा क्योंकि पहले तथा दूसरे वायुयानकी लम्बाइयोंके वर्गमूलमें ४ और ८ का अनुपात है;



इससे कम रफ्तार होनेपर वायुयान हवामें उड़ न सकेगा, वरन् नीचे गिर जायगा। इस उदाहरणमें दूसरे वायुयानकी लम्बाई पहलेकी चार-गुनी है, और इस हिसाबसे उसकी चौड़ाई और मोटाई भी पहलेकी चारगुनी है—अर्थात् उसका वजन पहलेकी अपेक्षा ६४ गुना हुआ। वायुयान-यन्त्र-विज्ञानके अनुसार दूसरे वायुयानको हवामें उड़ सकनेके लिए पहलेकी अपेक्षा १२८ गुना अधिक शक्ति लगानी पड़ेगी—अर्थात् वायुयान या उड़नेवाले पक्षियोंका वजन बढ़नेपर उन्हें उड़नेके लिए कमसे कम जो शक्ति लगानी चाहिये वह उनके वजनकी वृद्धिके अनुपातसे भी अधिक हिसाबसे बढ़ानी होती है। अतः पक्षियोंके आकारकी अधिकतम सीमा शीघ्र पहुँच जाती है। एक फरिश्तेको जिसके स्नायुओंमें वजनके हिसाबसे शक्ति उत्पन्न करनेकी क्षमता चिड़ियोंके स्नायुओंके बराबर ही हो, अपने उड़ सकनेके लिए इतने अधिक स्नायुओंकी जरूरत महसूस होगी कि उनके लिए स्थान बनानेके लिए उसका वक्षःस्थल आगेको ४ फुटतक निकला होगा, तथा शरीरके वजनको कम करनेके प्रयासमें उसकी टाँगें छोटी—खूँटियोंके आकारकी—रह जायँगी।

### बड़े आकारके प्राणी

किन्तु बड़े आकारके प्राणियोंको सर्वत्र घाटा-ही-घाटा रहता हो सो बात नहीं है। प्रत्येक प्राणी प्रतिक्षण अपने शरीरके ताप इधर-उधर विकीर्ण करता रहता है। विश्राम करते समय हर प्राणीके शरीरकी सतहके प्रत्येक वर्गइंचसे तापकी समान मात्रा विकीर्ण होती है और इस तापको हासिल करनेके लिए उसे भोजनका सहारा लेना पड़ता है—अर्थात् जीवधारियोंके भोजनकी मात्रा उनके शरीरके वजनपर निर्भर नहीं है, बल्कि उनके शरीरके धरातलपर। इसी कारण खुहियाको अपने शरीरका तापक्रम ठीक बनाये रखनेके लिए प्रतिदिन अपने शरीरके वजनके  $\frac{1}{4}$  भागके बराबर भोजन ग्रहण करना पड़ता है। यही कारण है कि नन्हें जानवर रेगिस्तानों या ध्रुवप्रान्तोंके निर्जन प्रदेशमें जीवित

नहीं रह सकते, क्योंकि इनके भोजनकी समस्या वहाँ हल नहीं हो सकती। ध्रुवप्रान्तोंके पक्षी जाड़ेके दिनोंमें उड़कर गरम प्रदेशोंकी ओर चले जाते हैं ताकि उनके खानेकी समस्या आसानीके साथ हल हो जाय।

### आँखका आकार

आँखकी बनावट भी साइज (आकार) के लिहाजसे कम मनोरंजक नहीं है। मनुष्यकी आँखकी काली पुतलियोंसे दृष्टि-पटलतक ५ लाख नन्हें-नन्हें तन्तु जाते हैं। बाह्य वस्तुओंको एक दूसरेसे अलग स्पष्ट देख सकनेके लिए भौतिक विज्ञानके नियमोंके अनुसार इनकी संख्या एक नियत संख्यासे कम नहीं होनी चाहिये। साथ ही १/२०,००० इंचसे अधिक पतला भी उन्हें नहीं होना चाहिये। इसी कारण चुहियाकी आँखें मनुष्यकी आँखोंकी तुलनामें उसी हिसाबसे नहीं घटतीं जिस हिसाबसे उसका शरीर मानव शरीरकी तुलनामें घटता है। फिर भी चुहियाकी आँख मनुष्यकी आँखसे छोटी होती है, इस कारण उसकी आँखके तन्तुओंकी संख्या भी मनुष्यकी आँखके तन्तुओंसे कम होती है, अतः चुहिया ५-६ फुटकी दूरीपर खड़े हुए दो व्यक्तियोंके चेहरेको एक दूसरेसे अलग पहचान नहीं सकती। इसके प्रतिकूल बड़े आकारके जीवोंके लिए यह आवश्यक नहीं कि उनकी आँखका साइज भी हमारी आँखकी तुलनामें उसी अनुपातसे बड़े जिस अनुपातसे उनके शरीरका आकार हमारे शरीरकी अपेक्षा बढ़ता है। इसी कारण ह्वेल या हाथीकी आँखें हमारी आँखोंकी तुलनामें कुछ विशेष अधिक बड़ी नहीं होतीं।

### हवामें कूदनेकी क्षमता

ऊँचे कूदनेकी क्षमताके बारेमें भी जनसाधारणके अन्दर अनेक गलत धारणाएँ मौजूद पायी जाती हैं। उदाहरणके लिए अनेक व्यक्तियोंका खयाल है कि यदि फुनगा इतना बड़ा होता जितना मनुष्य, तो वह हवामें हजारों फुट ऊँचे कूद सकता। वास्तवमें विभिन्न जीवोंकी ऊँचे कूदनेकी क्षमता तथा उनके आकारमें कोई विशेष सम्बन्ध नहीं पाया



जाता । फुनगा लगभग २ फुट तथा मनुष्य ७ फुट ऊँचा कूद सकता है । ऊँचे कूदनेकी क्षमता जीवधारीके शरीरके वजनपर निर्भर करती है । साधारणतः प्रत्येक जीवधारीके शरीरमें उसके आकारका एक निश्चित भाग शक्ति-उत्पादक स्नायुओंका होता है और वजनके हिसाबसे प्रत्येक प्राणीके स्नायुकी शक्ति-उत्पादक क्षमता लगभग एक-सी होती है । फुनगे आदि जीवोंमें तो उनके स्नायुओंकी शक्ति-उत्पादकक्षमता मनुष्यके स्नायुओंकी अपेक्षा कम ही होती है, अन्यथा घासपर फुदकनेवाला टिट्टु हवामें ६ फुट ऊँचा कूद सकता ।

## प्रकृतिकी भयंकर भूलें

अंग्रेजीमें एक लोकोक्ति प्रचलित है कि 'मनुष्यसे भूल हो ही जाती है ।' किन्तु त्रुटियाँ निरे मनुष्यके ही हिस्सेमें नहीं पड़ी हैं । प्रकृति भी भूलोंसे बच नहीं पायी है । यह सही है कि प्रकृतिके गुणगानमें बड़ी-बड़ी पोथियाँ लिखी जा चुकी हैं । भिन्न-भिन्न प्राणियोंकी शरीर-रचनामें प्रकृतिने निस्सन्देह हृद दर्जेकी कार्यकुशलता और दक्षताका परिचय दिया है । फिर भी कई स्थानोंपर प्रकृति भी बुरी तरह चूक गयी है ।

### मे-फ्लाई

उदाहरणके लिए जन्तु जगत्में 'मे-फ्लाई' नामक एक नन्हा पतिंगा पाया जाता है । इसके निर्माणमें प्रकृतिको पूरे तीन वर्ष लगते हैं । तीन सालके लम्बे अरसेके उपरान्त मे-फ्लाईका अण्डा पूर्णरूपसे परिपक्व होकर फूटता है—अण्डेसे बाहर निकलते ही एक दूसरे 'मे-फ्लाई'से यौनसम्बन्ध स्थापित कर यह पतिंगा अपनी अगली पीढ़ीके लिए अण्डे भी दे देता है । जन्म लेनेके चन्द घण्टे के अन्दर ही यह क्रिया समाप्त हो जाती है । यौनलिप्ता पूरी होनेके बाद पतिंगेको जब भूख लगती है तो बेचारा

देखता है कि उसके मुँह और उसके पेटको एक दूसरेसे कोई वास्ता नहीं। पेट अन्यत्र है, मुँहका साराख अन्यत्र जाता है। फलस्वरूप २४ घण्टेके भीतर ही मे-फ्लाई भूखसे तड़प-तड़पकर मर जाता है। जिस जीवके निर्माणमें प्रकृतिने पूरे तीन साल लिये उसके शरीरकी बनावटमें ऐसी भद्दी गलती रह गयी। इतने लम्बे अरसेमें तो मनुष्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियोंका आयोजन कर लेता है या विशालकाय जहाजोंका निर्माण कर लेता है, जिन्हें देखकर स्वयं विश्वकर्मा भी लज्जित हो जायँ। अपनी इस भूलके सुधारके लिए प्रकृतिने उपाय भी ढूँढ़ा तो यह कि जन्म लेते ही वंशरक्षाके निमित्त मे-फ्लाईके अन्दर यौनसम्बन्धी उत्कट इच्छा उत्पन्न कर दी जाय। अवश्य इस उपायसे मे-फ्लाईका वंश तो चलता जा रहा है, किन्तु प्रकृति मे-फ्लाईके मुँह और उसके आमाशयमें सम्बन्ध स्थापित करके अपनी इस हृदयहीनताको हमेशाके लिए मिटा सकती थी।

### कच्चे रङ्गका प्रयोग

प्रकृतिके अनाड़ीपनका एक और नमूना देखिये—पन्द्रह-बीस वर्ष-के अन्दर जर्मनीने रासायनिक नीलके निर्माणका तरीका ढूँढ़ निकाला था। उस सस्ते और बढ़िया रङ्गके आयातने भारतवर्षके नीलके हजारों गोदाम बन्द करा दिये। भारतका बना-बनाया व्यवसाय मिट्टीमें मिल गया। रासायनज्ञ यहीं आकर नहीं रुक गये। अनुसन्धान करके उन्होंने सैकड़ों किस्मके चमकोले लाल, पीले, हरे, सुनहले रङ्ग तैयार किये। ये रङ्ग एकदम पक्के उतरते हैं। थोड़े अरसेमें मनुष्य रङ्ग निर्माण-कलामें पूर्ण दक्ष हो गया। किन्तु प्रकृति अब भी जैसे अन्धेरेमें रास्ता टटोल रही है। चिड़ियोंके पंखमें प्रकृतिने तरह-तरहके रङ्गोंका समावेश किया, किन्तु इनमेंसे कुछ चिड़ियोंके रङ्ग पक्के और स्थायी न तैयार हो पाये। मुर्गावियोंकी जातिकी कुछ चिड़ियोंके पंखका रङ्ग चटकीला लाल होता है, किन्तु कुछ ही समय पश्चात् रङ्गका चटकीलापन उतर जाता है और यह रङ्ग भूरा होकर फिर सफेद पड़ जाता है। जीव-विज्ञानियोंका खयाल है कि प्रकृतिकी विज्ञानशालामें लाल रङ्गपर अभी प्रयोग जारी है।



इनका कहना है कि सम्भवतः कुछ लाख वर्ष पूर्व तमाम पक्षी हलके भूरे रंगके हुआ करते थे। प्रकृतिने फिर उन्हें हरे, आसमानी, काले तथा पीले रंगसे सजाना आरम्भ किया; और अब लाल रंगकी परीक्षा की जा रही है। अफ्रीकाकी एक चिड़िया लाल रंगकी होती है। किन्तु इसका यह लाल रंग इस कद्र कच्चा होता है कि वर्षाके पानीमें भी वह धुल जाता है। पानीकी तेज बौछारमें चिड़ियोंके परका रंग इस तरह धुल जाता है जैसे कच्चा गुलाबी रंग उसके पंखपर पुता रहा हो। अवश्य घण्टे आध घण्टेके अन्दर ही पुनः लाल रंग इस अफ्रीकन चिड़ियाके पंखपर चढ़ आता है।

मनुष्यके बाल भी तो मृत्यु पर्यन्त काले नहीं रह पाते। काला रंग बुढ़ापेमें उड़ जाता है। मनुष्यको प्रकृतिकी भाँति रंग-निर्माणके लिए करोड़ों लाखों वर्ष मिले होते तो निस्सन्देह इस तरहकी खामियोंपर वह कभी विजय प्राप्त कर चुका होता।

### रूढ़िवादिता

रूढ़िवादिता भी प्रकृतिकी एक खास कमजोरी है। परिस्थितियोंके बदलनेपर प्रत्येक इजीनियर अपनी मशीनोंमें समुचित परिवर्तन फौरन कर देता है, किन्तु प्रकृति इस मामलेमें भी एकदम 'लेट लतीफ' है। गाय-बैलोंको ही ले लीजिये। सहस्रों वर्ष पूर्व जब इन्हें जंगलोंमें इधर-उधर भटकना पड़ता था, इन्हें हर समय शत्रुके आक्रमणका भय लगा रहता था। मैदानमें घासकी खोजमें गायें निकलीं, दो-चार ग्रास मुँहमें डाल पाये थे कि सामनेसे शेर आता दिखायी पड़ा, बस जान लेकर भागीं। विपदासे दूर किसी सुरक्षित स्थानमें आकर जल्दी-जल्दीमें दूँसी गयी घासको जुगाली करके फिरसे स्थिर-चित्त होकर खाया, अच्छी तरह चबा-चबाकर। सभ्य युगमें बस्तीमें रहनेवाली गाय-भैंसोंको इस किस्मका अब खतरा नहीं, फिर भी प्रकृतिने उनकी जुगाली करनेवाली पुरानी आदत पूर्ववत् कायम रखी है। इन गरीबोंको चारा खानेमें दुबारा मिहनत भी करनी पड़ती है और समय भी नष्ट होता है।

## दुर्भिक्ष के अवसरपर

दुर्भिक्ष के दिनोंमें भूखकी ज्वालासे विकल होकर मनुष्य पेड़की छाल, घास, जूते और कभी-कभी स्वयं एक दूसरेको भी मारकर खा जाते हैं—किन्तु प्रकृतिकी करतूत एक कदम और भी आगे बढ़ी हुई है। मछल जातिकी श्रेणीमें 'ककम्बर' मछलीकी विशेषता यह है कि जबतक नियमित ढंगपर खानेको इसे मिलता रहता है तबतक तो यह अन्य मछलियोंकी भाँति ही अपना रहन-सहन बनाये रखती है, किन्तु दुर्भिक्ष या अन्य किसी कारणसे जब इस 'ककम्बर' मछलीको कई दिनोंतक भोजन नहीं मिलता तब भूखसे यह परेशान हो जाती है। पेटकी ज्वाला जब असह्य हो उठती है, तब मानो तंग आकर यह अपने समूचे आमाशयको मय अँतड़ियोंके उलटी करके अपने शरीरसे बाहर निकाल देती है कि न आमाशय रहेगा और न भूख महसूस होगी। किन्तु इस अघोर क्रियाके फलस्वरूप वह मछली मर नहीं जाती, वरन् कुछ ही दिनोंके अन्दर आमाशय और अँतड़ियोंके एक नये सेटका शरीरके अन्दर निर्माण अपने-आप हो जाता है।

इस घृणित क्रियाका प्रयोग यह मछली शत्रुके आक्रमणके समय भी करती है। कोई बड़े आकारकी मछली इसे निगलना ही चाहती है कि झट इसने अपनी अँतड़ी आदि निकालकर उसके सामने डाल दी। शत्रु जबतक वमन किये हुए इस पदार्थके साथ उलझता है तबतक अपने बचे हुए शरीरको लेकर यह 'ककम्बर' मछली नौ-दो-ग्यारह हो जाती है। इस विचित्र प्राणीकी रक्षाके लिए क्या प्रकृति इससे बेहतर कोई उपाय नहीं ढूँढ़ सकती थी ?

## साजने-सँवारनेमें भूल

प्रकृतिने विभिन्न जीवोंकी शरीर-रचनामें भी अनेक भयंकर भूलें की हैं। साजने-सँवारनेकी धुनमें जैसे प्रकृतिको इस बातका ध्यान ही नहीं रहा कि इस बनाव-शृंगारसे उस प्राणीको अपनी रोजमर्राकी जिन्दगीमें कोई कष्ट तो नहीं होगा ? निस्सन्देह मोर जब पंख फैलाकर



नाचता है तो हर श्रेणीके दर्शकोंका वह मन मोह लेता है, किन्तु इस भारी बोझको लेकर जब जंगलमें उसे अपने शत्रुकी पहुँचसे बाहर भागना होता है तो वह प्रकृतिको अवश्य ही कोसता होगा कि काश यह बोझ मेरी पीठपर न होता। अपनी दुमपर मांसका भारी लोथड़ा लिए हुए दुम्बा भी इधर-उधर चलने-फिरनेमें कुछ कम दिक्कतें महसूस नहीं करता। बारहसिंघा, बेचारेके सींग अमीरोंके ड्राइंगरूमका सौन्दर्य बढ़ाते हैं, किन्तु स्वयं बारहसिंघोंको इन सींगोंके कारण अनेक कष्टोंका सामना करना पड़ता है। लम्बी गरदनके ऊपर सींगोंके झाड़का बोझ सँभालनेमें बारहसिंघेकी बहुत-सी शक्ति बर्बाद होती है। इस बोझके कारण दौड़नेमें भी उसे बाधा पहुँचती है। प्रायः दो बारहसिंघे एक दूसरेसे जब लड़ते हैं तो उनके सींग इतनी बुरी तरह उलझ जाते हैं कि वे दोनों वेदम होकर वहीं गिर पड़ते हैं और तब बगलसे कोई भेड़िया आकर उन दोनोंका काम आसानीके साथ तमाम कर डालता है। एक बार तो एक बारहसिंघा मक्खियाँ उड़ा रहा था, इतनेमें उसका एक पैर सींगसे जा उलझा। सींगके झमेलेसे पैर छुड़ानेके उद्योगमें उस बेचारेकी गर्दन भी आखिर टूट गयी। प्रकृतिके इस क्रूर मजाककी उपमा अन्यत्र कहीं हँसैपर भी न मिलेगी।

प्रकृतिको अपनी सृष्टिमें सौन्दर्यका पुट देनेकी अगर इतनी अधिक चिन्ता थी तो उसने ऊँट और दरियायी घोड़े सदृश बदसूरत प्राणियोंका निर्माण क्यों किया ?

### अद्भुत प्रणय-क्रिया

प्रणय-क्रियाके भी कुछ अद्भुत उदाहरण इस रहस्यमयी प्रकृतिकी सृष्टिमें आपको देखनेको मिलेंगे। प्रणय-क्रिया समाप्त होते ही मादा मकड़ी नर मकड़ेको मारकर खा डालती है। बिच्छुओंमें भी यही प्रथा देखनेमें आती है। कटल-फिश जातिकी मछलीको दस लम्बी भुजाएँ होती हैं। प्रणयकी इच्छा महसूस करनेपर यह आलसी प्राणी स्वयं मादाकी खोजमें नहीं जाता, वरन् अपनी एक भुजाको शरीरसे अलग

करके उसे ही मादाकी तलाशमें भेज देता है। यह भुजा प्रणय-क्रियाको पूरा करनेमें पूर्ण रूपसे समर्थ होती है—वस वंशको दूबनेसे बचा लिया, इसके आगे इस अद्भुत प्राणीकी कोई ख्वाहिश नहीं। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यह भुजा पुनः उसके पास वापस नहीं आती। अपनी प्रणयिनीको भेंट स्वरूप उसने अपनी भुजा दे डाली।

### खूनके आँसू

गिरगिट जातिके कुछ प्राणियोंके सिरपर साँगकी भाँति नुकीले हिस्से रहते हैं। इन साँगोंको देखकर शत्रुके मनमें भयका संचार हो आना स्वाभाविक है, किन्तु वास्तवमें छद्म साँग केवल देखनेभरको हैं। इनकी सहायतासे ये गिरगिट शत्रुपर आक्रमण नहीं कर सकते। जिस समय शत्रु गिरगिटके ऊपर झपटता है, गिरगिट अपनी आँखोंमें वास्तवमें रक्तके आँसुओंकी एक तीव्र बौछार शत्रुकी आँखोंमें निशाना ताककर मारता है। एक क्षणके लिए शत्रु अन्धा हो जाता है। जबतक यह अपनी आँखोंको साफ करनेमें मशगूल रहता है उतनेमें गिरगिट अपनी जान लेकर दूर भाग जाता है।

## शारीरिक पीड़ाकी नाप-जोख

इंग्लैण्डके एक डाक्टरकी निजी प्रयोगशाला—सामने डाक्टर बैठा हुआ है, बगलमें उसका सेक्रेटरी पेन्सिल लेकर नोट करता जा रहा है। डाक्टरके दाहिने हाथमें एक तेज धारका यन्त्र है; इस यन्त्रकी सहायतासे वह अपनी बायीं भुजाकी त्वचाकी एक पतली तह छीलता है—फिर सेक्रेटरीको बताता है कि उसे किस तरहकी तकलीफ हो रही है। डाक्टर फिर तेज धारके उस यन्त्रसे त्वचाको छीलता है। इस बार त्वचाकी तह पहलेसे जरा मोटी है—सेक्रेटरीको वह बतलाता है



कि अब वह किस तरहकी तकलीफ महसूस कर रहा है। डाक्टर इसी क्रियाको कई बार दुहराता है और हर बार पहलेकी अपेक्षा त्वचाकी अधिक मोटी परत छीलता है।

### गुरुताका अनुसन्धान

अवश्य ही अनुसन्धानका यह कुछ विचित्र ढंग प्रतीत होता है— किन्तु उपर्युक्त घटना है अक्षरशः सत्य। उक्त डाक्टरका नाम डेविड वाटर्सन है। शारीरिक पीड़ाके सम्बन्धमें आपने अनेक महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान किये हैं। पीड़ा-सम्बन्धी अनुसन्धानोंमें सबसे भारी अड़चन इस बातकी होती है कि अनुसन्धान करनेके निमित्त आप किसी मनुष्यको नहीं चुन सकते—देशका कानून इसके लिए आज्ञा नहीं देता। जीव-विज्ञानके अन्य क्षेत्रोंके अनुसन्धानके लिए खरगोश या चूहोंपर प्रयोग किया जाता है; किन्तु पीड़ा सम्बन्धी अनुसन्धानोंके लिए इनपर प्रयोग करना बेकार है—पीड़ाकी गुरुताका ये पता दे नहीं पाते। इसी कारण पीड़ा-सम्बन्धी प्रयोगोंके लिए डाक्टर डेविड वाटर्सनने स्वयं अपनेको चुना। उपर्युक्त अनुसन्धानोंके आधारपर आपने यह बात मालूम की है कि पीड़ाको अनुभव कर सकनेवाली स्नायु-शिराएँ त्वचासे कुछ दूर नीचे स्थित रहती हैं—त्वचाकी ऊपरी सतहपर केवल स्पर्श-ज्ञानकी स्नायु-शिराएँ मौजूद होती हैं।

न्यूयार्कमें भी इस ढंगके अनोखे प्रयोग वहाँके इन्स्टीट्यूट ऑफ पैथालाजीमें किये जा रहे हैं। दो उत्साही अनुसन्धानकोंको यह पता लगाना था कि अतिशय ठण्डके कारण उत्पन्न हुई पीड़ा किन परिस्थितियोंमें अधिक दुखदायी होती है। इस अनुसन्धानके सिलसिलेमें उन्होंने अपने ही ऊपर प्रयोग किये। प्रतिदिन इनमेंसे एक व्यक्ति कमरेमें चारपाईपर लेट जाता और बगलमें रखे वर्षसे ठण्डा किये हुए पानीके बर्तनमें अपनी बाँह डाल देता। ज्यों-ज्यों समय बीतता उसकी पीड़ा बढ़ती जाती और अपनी पीड़ाकी विस्तृत व्याख्या वह अपने सहायकको नोट कराता जाता। अपनी पीड़ाकी गुरुता नापनेके लिए

उन्होंने एक तरहका मापदण्ड-सा बना रखा था। पीड़ा बढ़नेके साथ प्रयोग करनेवाला युवक बोलता 'एक दर्जा, दो दर्जा, तीन, चार...' पीड़ामें विशेष वृद्धि होनेपर वह एक अंक ऊँचा कर देता। दो दर्जेकी पीड़ाका अभिप्राय था कि केवल हाथमें दर्दका अनुभव हो रहा है—चार दर्जेतक पहुँचनेका अर्थ होता कि बाँहमें बगलतक पीड़ा पहुँच चुकी है। ५ दर्जेतक पीड़ा इतनी तेज होती कि वह व्यक्ति छटपटाने लगता। ६ दर्जेपर पीड़ाकी अधिकताके कारण ठण्डकके बावजूद उस व्यक्तिके शरीरसे पसीना आने लगता। आठ दर्जेतक पहुँचते-पहुँचते तो पीड़ा सहनशक्तिसे परे हो जाती। किन्तु इतना कष्ट उठाकर भी महीनोंतक इन दोनों अनुसन्धानकोंने ये प्रयोग जारी रखे और उन्होंने इस पीड़ाका असर रुधिर-प्रवाह, नाडीकी गति, रक्तचाप तथा भुजाकी दशापर कैसा पड़ता है, यह मालूम किया।

### ओषधियोंका असर

उन्होंने ठण्डसे उत्पन्न होनेवाली पीड़ापर ऐसी ओषधियोंका असर देखनेके लिए प्रयोग किये जो साधारणतः दर्दको कम करनेके लिए इस्तेमाल की जाती हैं। इस अनुसन्धानके सिलसिलेमें उन्होंने पता लगाया है कि ऐसी ओषधियाँ जो रुधिर-सेलमें फैलाव उत्पन्न करती हैं ठण्डसे उत्पन्न हुई पीड़ापर किसी तरहका प्रभाव नहीं डालतीं, किन्तु जो पेय ओषधियाँ रुधिर-सेलमें संकुचन उत्पन्न करती हैं वे ठण्डकी पीड़ाकी गुरुता तथा उसकी अवधि दोनोंमें ५० प्रतिशतकी वृद्धि कर देती हैं। फिर उन्होंने यह भी मालूम किया कि वास्तवमें वे स्नायु-शिराएँ कौन-सी हैं जो ठण्डकी पीड़ाका हमें अनुभव कराती हैं।

इस अनुसन्धानके फलस्वरूप डाक्टरोंने ऐसी तरकीबें मालूम कर ली हैं जिनसे वे ठण्डे प्रदेशोंमें विक्षत वायुयानसे गिरे हुए पायलट आदिको अतिशय ठण्डसे बचा सकते हैं तथा उनकी पीड़ा कम कर सकते हैं।

अमेरिकामें ही अन्यत्र एक प्रयोगशालामें एक विशेष ढंगका यन्त्र



बनाया गया है जिसकी सहायतासे शरीरमें पीड़ा उत्पन्नकी जाती है और तब इसका प्रभाव शरीरकी विभिन्न क्रियाओंपर देखा जाता है। यह यन्त्र लोहेके छल्लेका बना है। इस छल्लेमें जगह-जगह स्क्रू लगे हैं—स्क्रूके सिरेपर रबड़की गदियाँ लगी हुई हैं। छल्लेको सिरपर फिट करके स्क्रू कसे जाते हैं। रबड़की गदियाँ सिरको कसकर दबाती हैं—मानो सिर शिकंजेमें कसा जा रहा हो। स्क्रू ज्यों-ज्यों कसा जाता है, खोपड़ीकी पीड़ा बढ़ती जाती है। डाक्टर उल्फने इस यन्त्रकी सहायतासे ठीक-ठीक मालूम किया है कि पीड़ाके बढ़नेका हृदयकी गतिपर क्या प्रभाव पड़ता है तथा कब यह पीड़ा गर्दनकी स्नायुओंतक पहुँचती है।

### पीड़ाकी प्रवेश-सीमा

पीड़ा महसूस करनेकी प्रवेश-सीमापर भी अनेक तरहके अनुसन्धान किये गये हैं। इस ढंगके एक प्रयोगमें एक व्यक्तिको लकड़ीके पदोंके एक ओर खड़ाकर देते हैं। पदोंपर बने एक छिद्रपर वह अपना माथा टिका देता है। पदोंकी दूसरी ओरसे एक विद्युत् लैम्पसे उस छिद्रपर एक मिनटतक रोशनी फेंकते हैं। धीरे-धीरे लैम्पमें विजलीकी करेण्ट बढ़ाकर उसकी रोशनी तेज करते जाते हैं और हर बार छिद्रद्वारा उस व्यक्तिके माथेपर लैम्पकी रोशनी फेंकी जाती है। रोशनी बढ़ जानेपर उसकी गर्मी भी बढ़ने लगती है। ज्यों ही उस व्यक्तिको गर्मीसे पीड़ाका अनुभव होना शुरू होता है, वह अनुसन्धानकको इसकी सूचना देता है और लैम्पमें भेजी जानेवाली करेण्टकी शक्ति दर्ज कर ली जाती है। विभिन्न व्यक्तियोंके लिए यह पीड़ा महसूस करनेकी प्रवेश-सीमा भी भिन्न पायी गयी है। इस यन्त्रकी सहायतासे मार्फीन, अलकोहल, एस्पीरिन तथा पीड़ा दबानेवाली अन्य वस्तुओंकी जाँच इस दृष्टिकोणसे की गयी है कि ये हमारी पीड़ा अनुभव करनेकी प्रवेश-सीमाको कहाँतक ऊँची चढ़ाती हैं। डाक्टर उल्फका कहना है कि मार्फीन पीड़ा महसूस करनेकी प्रवेश-सीमाको दूना ऊँचा चढ़ाती है, अलकोहल डेढ़ गुना और एस्पीरिन एक तिहाई ऊँचा चढ़ाती है। पाठकोंको ज्ञात होगा कि सर दर्दमें एस्पीरिन

खाकर हम सर दर्द दूर नहीं करते बल्कि उसको अनुभव करनेकी शक्तिको मन्द बना लेते हैं। वे इस नतीजेपर भी पहुँचे हैं कि एक नियत मात्रासे अधिक परिमाणमें इनका सेवन करनेसे कोई लाभ नहीं होता।

पीड़ाकी इस प्रकार नाप-जोख करके डाक्टरोंने नयी-नयी ओषधियाँ निकाली हैं तथा उनकी उपयुक्त मात्रा निश्चित की है। इन प्रयोगोंके पहले पीड़ाकी लघुता या गुरुताके लिए रोगीकी बातोंपर ही विश्वास करना पड़ता था—और डाक्टरको किसी रोगकी सही दशाका अन्दाज लगानेके लिए पीड़ाकी लघुता और गुरुतापर प्रायः निर्भर होना पड़ता था; किन्तु रोगी यदि तुनु कमिजाज हुआ तो वह तनिक-सी पीड़ाको राईसे पर्वत बना देता और डाक्टरको धोखा हो जानेकी सम्भावना रहती थी कि रोग बिगड़ता जा रहा है। किन्तु अब पीड़ाकी नाप-जोख डाक्टर स्वयं कर सकता है।

### रोगोंका तापमान-सूचक

चिकित्सा-विज्ञान पीड़ाकी अनुभूतिको विशेष महत्त्व देता है। विशेषज्ञोंका कहना है कि प्रकृतिने पीड़ाको हमारे शरीरके रोगोंका तापमान-सूचक बनाया है—पीड़ा मानो खतरेकी घण्टी है। पीड़ाके महत्त्वका अन्दाज लगानेके लिए कल्पना कीजिये कि आपकी पीड़ा अनुभव करनेकी चेतना-शक्ति एकदम लुप्त हो गयी है—ऐसी दशामें आपकी क्या हालत होगी ?

अभी हालमें अमेरिकन सेनामें डाक्टरने एक ऐसे सैनिककी परीक्षा की है जिसे दर्दका अनुभव होता ही नहीं। इस सैनिककी विचित्र हालत है—न तो कोई उसको गलेमें खराश महसूस होती है; न कभी सीनेमें दर्द होता है। मच्छरके काटनेपर खुजलीतक नहीं होती। साधारण व्यक्तियोंकी तुलनामें कहीं अधिक शीत और गर्मी सह सकता है। अवश्य ही आप ऐसे व्यक्तिसे ईर्ष्या करेंगे कि कितना भाग्यशाली यह है—दर्द और पीड़ाकी दुनियासे परे ! किन्तु डाक्टरोंने इस व्यक्तिके जीवनकी घटनाओंकी जाँच की तो वे इस नतीजेपर पहुँचे कि वास्तवमें



इस व्यक्तिकी हालत दयनीय है। एक बार चाकूसे इस व्यक्तिकी ऊँगली कट गयी किन्तु उसे ऊँगली कटनेका हाल केवल तब मालूम हुआ जब फर्शपर लहूकी बूँदें टपकने लगीं। कुल्हाड़ीसे एकवार उसके पैरका अँगूठा कट गया, किन्तु वह कुल्हाड़ी चलाता ही रहा क्योंकि पीड़ा महसूस करनेवाली सन्देश-वाहक स्नायु-शिराएँ उसके मस्तिष्कको इस दुर्घटनाकी सूचना न दे पायी थीं। निस्सन्देह ऐसे व्यक्तिको कोई भी काम, जिसमें खतरेकी सम्भावना हो सौंपा नहीं जा सकता। रसोईघरमें उबलते हुए पानीसे वह अपने हाथ जला डालेगा, किन्तु उसे इसका पता न चल सकेगा। सम्भवतः कारखानोंमें वह दुर्घटनाओंका शिकार हो सकता है क्योंकि पीड़ारूपी सन्देश-वाहक उसे खतरेसे आगाह नहीं कर सकता।

### संकेत-वाहक शिराएँ

डॉक्टरोंने शरीरकी विभिन्न स्नायु-शिराओंका सही चित्र तैयार किया है जो टेलीफोनके तारोंके बण्डलकी तरह दीखता है। नन्हीं-नन्हीं शिराएँ मोटी शिराओंमें जाकर मिलती हैं और फिर ये शिराएँ रीढ़मेंसे होकर मस्तिष्कतक पहुँचती हैं जो टेलीफोनके एक्सचेंज आफिसका काम अज्ञात देती हैं। इन स्नायु शिराओंमेंसे वास्तवमें विद्युत्-संकेत गुजरते हैं। प्रयोगशालामें विद्युत्-संकेतके दौड़नेकी गति भी नापी गयी है। कैथोड-रे-आसिलोग्राफकी सहायतासे यह मालूम किया गया है कि विभिन्न आकारकी स्नायु-शिराओंमेंसे विद्युत्-संकेत धीरे-धीरे जाते हैं, किन्तु पतली शिराओंमें इनकी गति तेज होती है। मोटी शिराओंमें इनकी रफ्तार लगभग ढाई गज प्रति सेकण्ड होती है, किन्तु पतली शिराओंमें ये संकेत एक्सप्रेस रेलगाड़ीकी गतिसे दौड़ लगाते हैं। जब आपके पैरका अँगूठा किसी व्यक्तिके जूतोंके नीचे आ जानेपर दब जाता है तो आपको सबसे पहले एक तीव्र पीड़ा अँगूठेपर महसूस होती है, फिर क्षणभरमें सारे अँगूठे और पैरमें पीड़ा अनुभव होती है। पहली पीड़ा पतली शिराओं द्वारा तीव्र गतिसे आपके मस्तिष्कमें पहुँची, बादमें मोटी शिराओं द्वारा

पीड़ाका द्वितीय संकेत धीमी गतिसे चलकर आपके मस्तिष्कमें पहुँचा ।

इन स्नायु-शिराओंकी विस्तृत जानकारी हासिल करनेके उपरान्त सर्जनोंने पीड़ा दूर करनेके निमित्त स्नायु-शिराओंपर नशतर लगानेकी पद्धति जारी की है । यदि पीड़ा ऐसे स्थानपर हो रही है जहाँसे मस्तिष्क-को एक अकेली स्नायुशिरा पीड़ाका संकेत पहुँचाती है, तो इस स्नायु शिराको ही सर्जन काट डालता है । फौरन ही दर्द बन्द हो जाता है । कभी-कभी रीढ़के अन्दर स्नायु-वण्डलमें से उस विशेष स्नायु-शिराको काट देते हैं जिसमेंसे होकर पीड़ाका संकेत गमन करता है ।

किन्तु जहाँतक सम्भव है, डॉक्टर पीड़ा दूर करनेके लिए नशतरका प्रयोग नहीं करता । विभिन्न ओषधियोंका वह इस्तेमाल करता है—कुछ लेपके लिए काममें लायी जाती हैं तो कुछ पीनेके लिए इस्तेमाल की जाती हैं । इस श्रेणीकी एक ओषधि 'नोवोकेन' सुईद्वारा विशिष्ट स्नायुमें प्रवेश करायी जाती है । ब्रिटिश सेनामें आहत सैनिकोंकी पीड़ा दूर करनेके निमित्त 'नोवोकेन'का प्रयोग एक बड़े पैमानेपर किया जा रहा है । स्नायुओंमें इसे प्रवेश कराते ही तत्काल पीड़ाकी अनुभूति लुप्त हो जाती है । ओषधिका प्रभाव दूर हो जानेपर पीड़ा पुनः वापस नहीं लौटती । आश्चर्य नहीं कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानकी ये नूतनतम खोजें भविष्यमें हमारी जिन्दगीसे शारीरिक पीड़ाको सदैवके लिए मिटा सकें ।

## विद्युत्-तरंगोंके चमत्कार

विजलीका प्रयोग हमारे दैनिक जीवनमें बढ़ता जा रहा है, अतः विद्युत्के सम्बन्धमें नित्य ही अनुसन्धानका काम जोरोंपर हो रहा है । मनुष्यने तार-टेलीफोन ईजाद किये, फिर इससे भी सन्तुष्ट न होकर उसने बिना तारके शून्यमें बोलनेकी कला हासिल की । विद्युत्-तरंगोंको



अपने वशमें करके आज वह सात समुन्दर पार रेडियो सेट द्वारा अपनी आवाज पहुँचाता है। यही नहीं, रेडियो-तरंगोंकी ही वदौलत उसने अब दिव्यदृष्टि भी प्राप्त कर ली है—लैकड़ों कोसकी दूरीपर बैठा हुआ वह दूरकी घटनाओंको भी ठीक उसी क्षण जब कि वे हो रही हों, टेलीविजन द्वारा देख सकता है।

रेडियो-तरंगोंके रूपमें वैज्ञानिकको मानो अलादीनका चिराग मिल गया है। रेडियो-तरंगोंकी अपरिमित शक्तिको वशमें करके आजका मनुष्य उससे अनेक तरहके काम कराना चाहता है। इस महत्वाकांक्षायकी पूर्तिमें उसे पर्याप्त सफलता भी मिल चुकी है। रेडियो-तरंगोंके साथ वैज्ञानिक प्रयोगशालाकी दीवारोंके अन्दर एकाग्रचित्तसे तरह-तरहके प्रयोग कर रहा है। रेडियो-तरंगोंके बारेमें वह पूरी जानकारी हासिल करना चाहता है, ताकि इस जानकारीसे फायदा उठाकर वह उन्हें पूर्णतया अपने वशमें कर सके—और तभी वह इस स्थितिमें होगा कि रेडियो-तरंगोंसे पूरा-पूरा लाभ उठा सके।

बहुत थोड़े ही कालके अनुसन्धानने इस क्षेत्रमें हमारी जानकारी खूब बढ़ा दी है। वैज्ञानिक हमें बताता है कि वास्तवमें प्रकाश-तरंगें, उष्णताकी लहरें और रेडियो-तरंगें तथा एक्स-रे सब एक ही जातिकी चीजें हैं। ये सभी तरंगें विद्युत् चुम्बकीय शक्तिके भिन्न-भिन्न रूप हैं, केवल उनकी लहरोंकी लम्बाईमें अन्तर है। रेडियो-वेतारकी तरंगोंकी लहर-लम्बाई ज्यादा होती है, इसके बाद उष्णताकी किरणें आती हैं, फिर साधारण प्रकाशकी तरंगें, अल्ट्रावायलेट-रश्मियाँ और एक्स-रेकी तरंगें। एक्स-रे तरंगोंकी लहर-लम्बाई बहुत ही कम होती है। इन तरंगोंकी लहर-लम्बाई जितनी कम होती जाती है, उतनी ही ज्यादा इनकी शक्ति भी बढ़ती जाती है। तरंगोंके अन्य गुण भी लहर-लम्बाईके साथ बदलते जाते हैं।

अल्ट्रावायलेट-रश्मियाँ (पराकासनी किरणें) तथा उष्णताकी तरंगें साधारण प्रकाशकी तरंगोंसे लहर-लम्बाईमें तनिक ही भिन्न हैं, किन्तु

पीड़ाका द्वितीय संकेत धीमी गतिसे चलकर आपके मस्तिष्कमें पहुँचा ।

इन स्नायु-शिराओंकी विस्तृत जानकारी हासिल करनेके उपरान्त सर्जनोंने पीड़ा दूर करनेके निमित्त स्नायु-शिराओंपर नशतर लगानेकी पद्धति जारी की है । यदि पीड़ा ऐसे स्थानपर हो रही है जहाँसे मस्तिष्क-को एक अकेली स्नायुशिरा पीड़ाका संकेत पहुँचाती है, तो इस स्नायु शिराको ही सर्जन काट डालता है । फौरन ही दर्द बन्द हो जाता है । कभी-कभी रीढ़के अन्दर स्नायु-वण्डलमें से उस विशेष स्नायु-शिराको काट देते हैं जिसमेंसे होकर पीड़ाका संकेत गमन करता है ।

किन्तु जहाँतक सम्भव है, डॉक्टर पीड़ा दूर करनेके लिए नशतरका प्रयोग नहीं करता । विभिन्न ओषधियोंका वह इस्तेमाल करता है—कुछ लेपके लिए काममें लायी जाती हैं तो कुछ पीनेके लिए इस्तेमाल की जाती हैं । इस श्रेणीकी एक ओषधि 'नोवोकेन' सुईद्वारा विशिष्ट स्नायुमें प्रवेश करायी जाती है । ब्रिटिश सेनामें आहत सैनिकोंकी पीड़ा दूर करनेके निमित्त 'नोवोकेन'का प्रयोग एक बड़े पैमानेपर किया जा रहा है । स्नायुओंमें इसे प्रवेश कराते ही तत्काल पीड़ाकी अनुभूति लुप्त हो जाती है । ओषधिका प्रभाव दूर हो जानेपर पीड़ा पुनः वापस नहीं लौटती । आश्चर्य नहीं कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानकी ये नूतनतम खोजें भविष्यमें हमारी जिन्दगीसे शारीरिक पीड़ाको सदैवके लिए मिटा सकें ।

## विद्युत्-तरंगोंके चमत्कार

विजलीका प्रयोग हमारे दैनिक जीवनमें बढ़ता जा रहा है, अतः विद्युत्के सम्बन्धमें नित्य ही अनुसन्धानका काम जोरोंपर हो रहा है । मनुष्यने तार-टेलीफोन ईजाद किये, फिर इससे भी सन्तुष्ट न होकर उसने बिना तारके शून्यमें बोलनेकी कला हासिल की । विद्युत्-तरंगोंको



अपने वशमें करके आज वह सात समुन्दर पार रेडियो सेट द्वारा अपनी आवाज पहुँचाता है। यही नहीं, रेडियो-तरंगोंकी ही बदौलत उसने अब दिव्यदृष्टि भी प्राप्त कर ली है—सैकड़ों कोसकी दूरीपर बैठा हुआ वह दूरकी घटनाओंको भी ठीक उसी क्षण जब कि वे हो रही हों, टेलीविजन द्वारा देख सकता है।

रेडियो-तरंगोंके रूपमें वैज्ञानिकको मानो अलादीनका चिराग मिल गया है। रेडियो-तरंगोंकी अपरिमित शक्तिको वशमें करके आजका मनुष्य उससे अनेक तरहके काम कराना चाहता है। इस महत्वाकांक्षायुक्त पूर्तिमें उसे पर्याप्त सफलता भी मिल चुकी है। रेडियो-तरंगोंके साथ वैज्ञानिक प्रयोगशालाकी दीवारोंके अन्दर एकाग्रचित्तसे तरह-तरहके प्रयोग कर रहा है। रेडियो-तरंगोंके बारेमें वह पूरी जानकारी हासिल करना चाहता है, ताकि इस जानकारीसे फायदा उठाकर वह उन्हें पूर्णतया अपने वशमें कर सके—और तभी वह इस स्थितिमें होगा कि रेडियो-तरंगोंसे पूरा-पूरा लाभ उठा सके।

बहुत थोड़े ही कालके अनुसन्धानने इस क्षेत्रमें हमारी जानकारी खूब बढ़ा दी है। वैज्ञानिक हमें बताता है कि वास्तवमें प्रकाश-तरंगें, उष्णताकी लहरें और रेडियो-तरंगें तथा एक्स-रे सब एक ही जातिकी चीजें हैं। ये सभी तरंगें विद्युत् चुम्बकीय शक्तिके भिन्न-भिन्न रूप हैं, केवल उनकी लहरोंकी लम्बाईमें अन्तर है। रेडियो-वेतारकी तरंगोंकी लहर-लम्बाई ज्यादा होती है, इसके बाद उष्णताकी किरणें आती हैं, फिर साधारण प्रकाशकी तरंगें, अल्ट्रावायलेट-रेडिमियाँ और एक्स-रेकी तरंगें। एक्स-रे तरंगोंकी लहर-लम्बाई बहुत ही कम होती है। इन तरंगोंकी लहर-लम्बाई जितनी कम होती जाती है, उतनी ही ज्यादा इनकी शक्ति भी बढ़ती जाती है। तरंगोंके अन्य गुण भी लहर-लम्बाईके साथ बदलते जाते हैं।

अल्ट्रावायलेट-रेडिमियाँ (पराकासनी किरणें) तथा उष्णताकी तरंगें साधारण प्रकाशकी तरंगोंसे लहर-लम्बाईमें तनिक ही भिन्न हैं, किन्तु

इस थोड़ेसे अन्तरके कारण गुणमें काफी अन्तर आ गया है। आलोक-रश्मियोंसे आपका दृष्टिपटल प्रभावित होता है, किन्तु उष्णताकी तरंगों और अल्ट्रावायलेट रश्मियोंका अनुभव आपकी आँखें नहीं कर सकतीं। हाँ, आपके शरीरकी त्वचापर इन रश्मियोंका प्रभाव अवश्य पड़ता है। लाल रंगके प्रकाशसे तनिक और गाढ़ा लाल 'इन्फ्रारेड-रे' है, इसे आप अपनी आँखोंसे नहीं देख सकते, किन्तु आपका कैमरा इन रश्मियोंको वखूवी ग्रहण कर लेता है। नतीजा यह होता है कि एकदम अन्धेरेमें जब कि आपको कुछ भी नहीं दिखायी देता हो, इन्फ्रारेड-रेकी सहायतासे कैमरे द्वारा फोटो ली जा सकती है। इन रश्मियोंमें यह भी गुण मौजूद रहता है, कि कुहरेको ये भेद सकती हैं। अतः कुहरेसे ढके हुए पहाड़ी प्रान्तकी फोटो आप यदि इन्फ्रारेड-रेकी मददसे लें, तो एकदम साफ फोटो उभड़ती है, मानो आपने धूपमें फोटो ली हो।

रेडियोवाल्फके सुप्रसिद्ध आविष्कर्ता डाक्टर फास्टका कहना है कि 'निकट भविष्यमें प्रत्येक घरमें दो ऐन्द्रजालिक स्वास्थ्यप्रद कोठरियोंके बन सकनेकी सम्भावना प्रतीत होती है—ऐसी कोठरियाँ जिनमें १०-१५ मिनट प्रतिदिन बितानेसे मनुष्य अपना स्वास्थ्य निर्दोष बनाये रख सकेंगे। इन स्वास्थ्यप्रद कोठरियोंके प्रभावसे डाक्टरोंकी प्रायः आवश्यकता ही न रहेगी। ऐसी कोठरीमें दीवारोंमें छिपे तारोंसे अति तीव्र विद्युत्-तरंगें निकलेंगी। इनका प्रभाव कोठरीमें बैठे हुए लोगोंके लिए स्वास्थ्यप्रद, शक्तिवर्द्धक और सुखकर होगा।

'मध्य जाड़ेमें मंसूरी और नैनीतालमें भी लोग दरवाजे और खिड़कियाँ खोलकर बैठ सकेंगे और वह भी केवल धोती-कुरता पहनकर, क्योंकि इन अति तीव्र विद्युत्-तरंगोंसे मनुष्यको आनन्ददायी गर्मी मिल करेगी। इन तरंगोंके प्रभावसे कोठरीमें भी पौधे उग और फल-फूल सकेंगे। अन्धेरा होनेके बाद मनुष्य नियानके समान किसी गैससे जलती हुई बत्ती उठाकर जहाँ चाहे वहाँ ले जा सकेगा, तारकी आवश्यकता न रहेगी। ऐसी बत्तीको मनुष्य सुविधानुसार मेजपर या ताकपर



रख सकेगा और वृत्ती बराबर जलती और अपने सुन्दर प्रकाशसे घरकी शोभा बढ़ाती रहेगी ।'

यही नहीं, रेडियो विद्या-विशारदोंका तो दावा है कि शीघ्र ही वे इतनी शक्तिशाली रेडियो-तरंगें बना सकेंगे जो मोटरके इंजिन, हवाई जहाज तथा अन्य किसी भी मशीनको बेकार बना देंगी । निस्सन्देह इस तरहकी तरंगें युद्धस्थलके लिए महत्वपूर्ण साबित होंगी । रोममें अभी कुछ साल पहले स्वर्गीय मार्कोनीने, जो रेडियोका जन्मदाता कहा जाता है, रेडियोकी विशेष ढंगकी तरंगें तैयार की थीं । प्रयोगशालासे खिड़कीके रास्ते ये तरंगें बाहर सड़क पर भेजी जा रही थीं । मोटर ज्यों ही खिड़कीके सामने पहुँची, तरंगोंके कारण मोटरका इंजिन एकदम बेकार हो गया ।

रेडियो-तरंगोंकी उपयोगिताके सम्बन्धमें वैज्ञानिकोंने बड़ी-बड़ी आशाएँ लगा रखी हैं । कुछ लोगोंका खयाल है कि वह दिन भी दूर नहीं है जब रेडियो-तरंगोंकी मददसे सुगन्ध और स्वाद भी ब्राडकास्ट किया जा सकेगा । आप ट्रान्समीटरके सामने लखनऊका सफेदा आम रखेंगे और लन्दनमें रेडियो-रिसीवरके सामने बैठा हुआ आपका मित्र उसका स्वाद लेता रहेगा ।

तीव्र रेडियोकी तलाश भी सरगर्मोंके साथ की जा रही है । ऐसी तीव्रतर रेडियो-तरंगें उत्पन्न करनेके लिए अनुसन्धान किये जा रहे हैं जो मनुष्य तथा अन्य जीवधारियोंके लिए घातक सिद्ध हों । जिस दिन वैज्ञानिक इन तरंगोंको प्रयोगशालामें तैयार कर सका, मनुष्यके हाथमें एक जबर्दस्त शक्ति आ जायगी । कौन कह सकता है कि डायनामाइट, विपैली गैस और विस्फोटक पदार्थोंकी तरह वह इनका भी दुरुपयोग न करेगा ?

किन्तु हताश होनेकी जरूरत नहीं है; टेलीविजन तरंगोंका प्रयोग मानव-जातिके कल्याणके लिए एक बहुत ही बड़े पैमानेपर किया जा रहा है । टेलीविजन तरंगोंने चिकित्सा-शास्त्रमें एक सर्वथा नयी प्रणालीका

प्रादुर्भाव किया है। यद्यपि टेलीविजन चिकित्सा सर्वरोग-निवारक नहीं कही जा सकती, फिर भी निकट-भविष्यमें ही रोगोंपर विजय प्राप्त करनेमें हमारे लिए एक अद्वितीय अस्त्र सिद्ध होगी।

विभिन्न तरीकोंसे इन विद्युत्-तरंगोंका प्रयोग शरीरकी चिकित्साके लिए किया जाता है। शरीरका अंग-विशेष, जिसकी चिकित्सा करनी होती है, विद्युत्-धाराओंके सीधे रास्तेमें रख दिया जाता है। दोनों विद्युत्-पट, जिनके बीचमें शरीरका वह अंग रखा जाता है, एक दूसरेसे १०० वोल्टके क्रमपर रहते हैं। कभी-कभी वैकुअम ट्यूबद्वारा भी विद्युत्-तरंगें शरीरमें प्रविष्ट करायी जाती हैं। वैकुअम ट्यूबसे विद्युत्-तरंगें ब्रश डिसचार्जद्वारा शरीरमें प्रवेश करती हैं—ट्यूबसे नन्हीं-नन्हीं चिनगारियाँ शरीरमें प्रवेश करती हुई दिखायी देती हैं। विद्युत्-चिकित्सामें छल्लेनुमा बिजलीके तार (सालिनायड) का भी प्रयोग किया जाता है। विशालकाय छल्ले (सालिनायड) के बीचो-बीच रोगी लिटा दिया जाता है। जिस समय सालिनायडमें विद्युत्-धाराका प्रभाव होने लगता है, रोगीके शरीरपर विद्युत्-चुम्बकीय असर होता है। इस प्रकार रोगीका पूरा शरीर सालिनायडकी शक्तिसे प्रभावित होता है। सालिनायड पद्धतिकी चिकित्साका प्रभाव रक्त-प्रवाहपर, और खासकर रक्तचापपर पड़ता है। ऐसा खयाल किया जाता है कि इस उपचारसे शरीरके स्नायुओंपर भी शक्तिप्रद प्रभाव पड़ता है। ये विद्युत्-तरंगें हमारे रोगोंको किस तरह दूर करती हैं? इस प्रश्नका सही-सही उत्तर तो नहीं दिया जा सकता, इतना अवश्य मालूम है कि इन विद्युत्-तरंगोंके प्रवाहसे शरीरके अंगविशेषमें गर्मी पैदा होती है, और इस कारण उस अंगमें रक्तका संचालन तेज हो जाता है। अतः रक्त-संचालनके बढ़ जानेसे उस अंगमें यदि पीड़ा रही, तो वह जल्द दूर हो जाती है।

तीव्रतर विद्युत्-तरंगें कीटाणु सम्बन्धी रोगोंकी चिकित्सामें भी विशेष उपयोगी साबित हुई हैं। राजयक्ष्मा, दमा आदि रोग इस नवीन



चिकित्सा-प्रणाली द्वारा आसानीसे दूर किये जा सकते हैं। चर्मरोग, शोथ, हड्डियोंके रोग, कलेजे और गुर्देके रोग भी इस चिकित्सा-पद्धतिसे दूर किये जा चुके हैं।

तीव्र विद्युत्-तरंगोंकी चिकित्सा-प्रणाली पिछले दस वर्षोंसे आजमायी जा रही है। इस दरम्यान इन तरंगोंकी मददसे मस्तिष्क-विकारके अनेक रोगी भी अच्छे किये जा चुके हैं।

बिगड़े हुए घावोंमें जिनमें पीप भर गयी हो तथा इस प्रकारके अन्य रोगोंमें यह चिकित्सा-प्रणाली रामबाणका काम करती है। कीटाणुओंका नाश करनेमें भी विद्युत्-तरंगें अद्वितीय हैं।

विद्युत्-तरंगोंका परिचय विज्ञान-संसारको ५० वर्ष पहले लगा था। इतने थोड़े कालमें मनुष्यने इन्हें अपने वशमें करके आश्चर्यजनक करतब कर दिखाये हैं, और अभी कहा नहीं जा सकता कि क्षितिजके उस पार क्या छिपा हुआ है।

## चमत्कारी चिकित्सा-विज्ञान

कुछ दिनों पहले रोगोंके बारेमें लोगोंमें तरह-तरहकी गलत-फहमियाँ पायी जाती थीं। कुछ तो पूर्वजन्मोंके कर्मफलको रोगोंके लिए जिम्मेवार ठहराते तो कुछ उन्हें ईश्वरका प्रकोप बताते। इसलिए पुराने जमानेमें चिकित्साका काम भी साधु-महात्माओं और ज्योतिषियोंके हाथमें था। बस इन लोगोंने किसीको भभूत दे दी तो किसीको सोमवार और मंगलवारका व्रत रखनेको कहा। भूत-प्रेत और चुड़ैलको भगानेके लिए तन्त्र वगैरहकी शरण तमाम रोगियोंको लेनी पड़ती थी।

रोगोंका वैज्ञानिक ढंगपर निदान करनेकी कोशिश यूनान देशवालोंने सबसे पहले की थी। अतः आधुनिक चिकित्सा-शास्त्रका जन्मदाता

कहलानेका हक यूनानको ही प्राप्त है। ढाई हजार वर्ष पहले प्रसिद्ध ग्रीक फिलासफर हिपोक्रेटीज रोगकी चिकित्साके लिए वैज्ञानिक तरीके इस्तेमाल करता था। जब वह किसी ऐसे रोगको देखता जिसके बारेमें वह कुछ नहीं जानता था तो वह तत्कालीन दार्शनिकोंकी तरह यह कहकर सन्तोष नहीं कर लेता था कि इस नये रोगके पीछे अवश्य ही कोई प्रेतात्मा काम कर रही है, बल्कि वह रोगकी विस्तारपूर्वक जाँच करता, उसके सम्बन्धकी एक-एक अदनी बात नोट करता और रोगका सही निदान करनेकी कोशिश करता। रोगीकी यदि मृत्यु हो जाती तो वह यह समझकर चुप नहीं बैठ जाता कि रोगीके भाग्यमें मरना ही लिखा था वरन् वह इस बातकी तलाश करता कि रोगीकी चिकित्सामें कोई गलती तो नहीं की गयी।

हिपोक्रेटीजकी निरीक्षण-शक्ति इतनी जबरदस्त थी कि उन दिनों उसने जिन रोगोंका अध्ययन किया और उनके बारेमें जो बातें उसने नोट कीं वे आज दिन नये यंत्रोंकी मददसे अध्ययन करनेपर एकदम सही उतरती हैं। यही कारण है कि हिपोक्रेटीज आधुनिक चिकित्सा-शास्त्रका पिता कहलाता है। इसके बाद विज्ञानने जब काफी उन्नति कर ली और तरह-तरहके यंत्र तैयार हो गये तो चिकित्सा-शास्त्रको भी उन्नति करनेका समुचित अवसर मिला।

सन् १६७८ में लीवेनहाकने पहले-पहल खुर्दबीनकी मददसे रोगके पिस्सुओं और कीटाणुओंका पता लगाया। उसने अनुसन्धानके लिए दो खास रास्ते अख्तियार किये—एक तो यह कि भिन्न-भिन्न कीटाणुओंकी उत्पत्ति कैसे होती है, किन हालतोंमें ये ज्यादा पनपते हैं और उन्हें किस तरह नष्ट किया जा सकता है और दूसरा यह कि इन कीटाणुओं और पिस्सुओंका भिन्न-भिन्न रोगोंसे क्या सम्बन्ध है। इसके बाद लुई पाश्चोर और लिस्टर आदि अनेक डाक्टरोंने इन सवालोंको हल करनेके लिए बरसों अनुसन्धान किये और यह बात भलीभाँति साबित कर दी गयी कि तमाम छूतसे फैलनेवाले रोग कीटाणुओं द्वारा फैलते हैं।



प्रयोगशालाओंके अन्दर इन कीटाणुओंके बारेमें नयी जानकारी हासिल करनेके लिए आज दिन भी प्रयोग जारी हैं ।

फलस्वरूप थोड़े ही दिनोंमें प्लेग, हैजा, मीयादी ज्वरके कीड़ोंको नष्ट करनेके लिए दवाएँ तैयार होने लगीं । कुत्ते और गीदड़ जैसे पागल जानवरोंके जहरसे बचनेके लिए पहले कोई दवा न थी । लेकिन पागल कुत्तेके लारकी परीक्षा करके उसमें पाये जानेवाले कीटाणुओंका असर नष्ट करनेके लिए डा० लूई पाश्चोरने दवा तैयार की । आज सभी देशोंमें पाश्चोर इन्स्टिट्यूट खुले हुए हैं जहाँपर पागल जानवरोंके काटे हुआँका इलाज इस नयी पद्धतिसे होता है । इन कीटाणुओंके बारेमें जानकारी हासिल करनेके लिए आधुनिक ढंगपर बनी हुईं खुर्दबीनोंसे वास्तवमें बड़ी मदद मिली है । कई खुर्दबीनें तो इतनी अधिक शक्तिशाली हैं कि ये नन्हीं-नन्हीं चीजोंको १५०० गुना बड़ा करके दिखाती हैं ।

आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानने विपको भी अमृत बना दिया है । डाक्टरोंने साँपके जहरसे अमूल्य औषध तैयार की है । अमेरिकामें जगह-जगह प्रयोगशालाएँ खुली हुईं हैं जहाँ नियमित रूपसे जहरीले साँपोंका जहर दुहा जाता है । इस जहरसे तरह-तरहके रोगोंके लिए बेजोड़ दवाएँ तैयार की जाती हैं । बम्बईमें भी इस प्रकारकी प्रयोगशाला हाफिकन इन्स्टिट्यूट प्रशंसनीय काम कर रही है । नासूर (केन्सर) जैसे खतरनाक रोगके इलाजमें भी साँपका जहर फायदेमन्द साबित हुआ है । हीमोफाइलिया नामक रोग भी बड़ा भयानक होता है । इस रोगमें जरा-सी चोट लगनेपर जोरोंके साथ खूनकी धारा बहने लगती है । रक्त-प्रवाहका रोकना मुश्किल हो जाता है । ऐसे रोगीको नाखून काटने-तकमें हिचक होती है कि कहीं खून न निकलना शुरू हो जाय । लेकिन इस रोगमें सर्प-विष रामबाण साबित हुआ, क्योंकि सर्पविषमें खूनको गाढ़ा बनाकर जमा देनेकी शक्ति होती है—रक्त जमकर गाढ़ा हो जाता है और उसका बहना एकदम रुक जाता है ।

साँपके काटे हुआँके इलाजके लिए भी साँपके ही जहरसे सीरम

विज्ञान के चमत्कार  
तैयार किये जा रहे हैं। उपदंश और गठियाके दर्दकी शान्तिके लिए भी साँपके जहरका प्रयोग होने लगा है। गठियाके रोगियोंका इलाज सिद्ध और वर्रके जहरकी मददसे भी किया जा रहा है।

रोगोंके कारण ढूँढनेके दौरानमें विटैमिनका भी पता चला। विटैमिनने चिकित्सा-विज्ञानके इतिहासमें एक नये अध्यायका आरम्भ किया है। अनेक बीमारियाँ जैसे दाँतोंमें पायरियाका हो जाना, हड्डियोंका कमजोर हो जाना और चमड़ेकी खराबी विटैमिनकी कमीके कारण ही पैदा होती है। पिछले पचीस वर्षोंमें विटैमिनके बारेमें सैकड़ों अनुसन्धान हुए, और अब यह बात अच्छी तरह साबित हो चुकी है कि विटैमिन एक खास किस्मका रासायनिक पदार्थ होता है। यह कोई मनगढ़न्त चीज नहीं है। चुनांचे विज्ञानशालाओं में अब विटैमिन कृत्रिम ढंगसे भी तैयार किये जा रहे हैं। हर प्रकारके विशुद्ध विटैमिन छोटी-छोटी गोलियोंके रूपमें मिलने लगे हैं, और इस तरह मनुष्य-जाति अनेक रोगोंसे निहायत आसानीके साथ झुटकारा पा सकती है। सस्ते खाद्य पदार्थोंमें कृत्रिम विटैमिन डालकर उन्हें जन-साधारणके हाथ कम दामपर बेचा जा सकता है और आम जनताके स्वास्थ्यकी उन्नति आसानीसे की जा सकती है।

दवाएँ तैयार करनेके तरीकोंमें आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। धातु-पदार्थोंकी भस्म बनानेमें जहाँ सप्ताह और महीने लग जाते थे, और तब भी कभी-कभी भस्म निर्दोष नहीं उतरती थी, वहाँ अब प्रयोगशालामें चन्द मिनटोंके अन्दर इनके एकदम बारीक जरे तैयार कर लिये जाते हैं।

एक्स-किरण और रेडियमके रूपमें भी चिकित्साशास्त्रको बहुमूल्य चीजें मिली हैं। एक्स-रेके आविष्कारकी चर्चा हम पृष्ठ ४-५ पर कर चुके हैं। हर तरहके असाध्य चर्मरोगोंमें और कैंसर-जैसी भयानक बीमारियोंके लिए ये किरणें नितान्त उपयोगी प्रमाणित हुई हैं। साधारण हैसियतके लोग भी इन नियामतोंसे पूरा फायदा उठा सकते हैं।



पराकासनी (अल्ट्रावायलेट) किरणोंका इस्तेमाल भी चर्मरोगोंके इलाजके लिए किया जा रहा है। फोड़े-फुन्सियोंके इलाजमें अल्ट्रावायलेट किरणों लाभप्रद साबित हो रही हैं। डाक्टर इलीफुकका खयाल है कि प्रत्येक रोग और प्रत्येक जातिके कीटाणुओंको नष्ट करनेके लिए एक विशेष लम्बवर्तकी अल्ट्रावायलेट किरणोंका प्रयोग करना आवश्यक होता है। इस क्षेत्रमें अच्छी तरह अनुसन्धान कर लेनेके बाद शायद यह भी सम्भव हो सकेगा कि हर प्रकारके संक्रामक रोगोंका नाश केवल अल्ट्रावायलेट किरणोंके प्रयोगसे ही किया जा सकेगा।

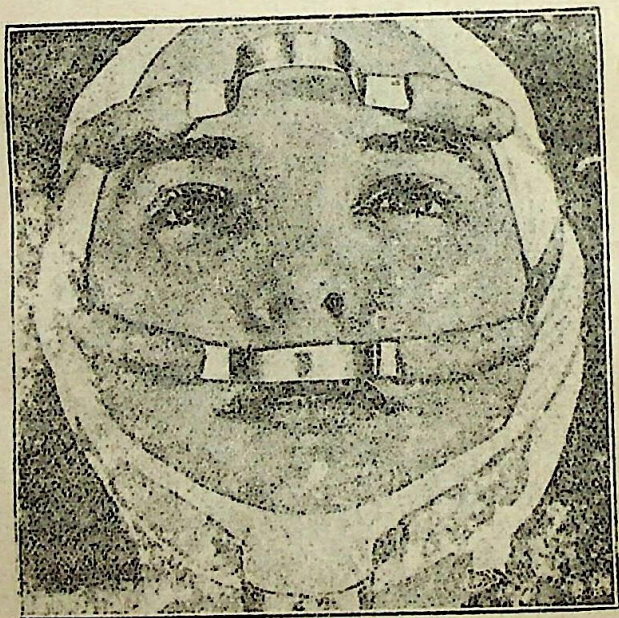
चिकित्साके लिए रेडियो-तरंगोंकी भी मदद ली जा रही है। पृष्ठ १८६ पर हम ऐसी कोठरियोंका जिक्र कर चुके हैं जिनमें दस-पन्द्रह मिनट हर रोज बितानेसे आदमी अपना स्वास्थ्य दुरुस्त बनाये रख सकेगा। इसी तरह टेलीविजन-तरंगोंका इस्तेमाल भी मनुष्यके स्वास्थ्य-लाभके लिए एक विस्तृत पैमानेपर किया जा रहा है। (पृष्ठ १८८)

अभी हाल तक लोग समझते थे कि मनुष्यका मस्तिष्क हमारी समझसे परे है किन्तु वैज्ञानिकोंने अब यह साबित कर दिखाया कि शरीरकी भाँति मनुष्यके मस्तिष्कका भी क्रमशः विकास हुआ है। मनोवैज्ञानिकोंने मस्तिष्कका भली-भाँति अध्ययन किया।

फलस्वरूप मस्तिष्कके रोगोंके बारेमें अपनी जानकारीके आधारपर मनोवैज्ञानिक आपकी बुद्धिकी सही-सही जाँचकर सकता है, जिससे उक्त रोगोंकी चिकित्सामें पर्याप्त सहायता मिल सकती है। इस विषय-की चर्चा हम पृष्ठ १४५से १४७ तक कर चुके हैं।

मृगी रोग और हिस्टीरियाकी जाँच करनेमें इन विद्युत्-तरंगोंसे विशेष सहायता मिली है। डाक्टर बताते हैं कि मस्तिष्ककी तरंगोंकी मददसे यह मालूम हो सकता है कि मस्तिष्कके किस भागमें मृगी रोग सम्बन्धी विद्युत्-तूफान आरम्भ होता है। मस्तिष्कके इस खराब हिस्सेको सम्भवतः डाक्टर आपरेशन करके बाहर निकाल देगा और वह आदमी मृगी रोगसे हमेशा छुटकारा पा जायगा।

क्लोरोफार्म जैसी औषधोंकी सहायतासे आधुनिक चीरफाड़ने भी आश्चर्यजनक करतब कर दिखाये हैं। इस बेहोशीकी दवाकी ईजादसे मानव-समाजका जितना कल्याण हुआ है शायद संसारके सबसे बड़े फिलासफरकी लिखी किताबोंसे भी उतना नहीं हुआ। साधारण फोड़ेकी चीरफाड़की बात जाने दीजिये, वह तो डाक्टरोंके बायें हाथका खेल है, अब तो सर्जरीका प्रयोग आपके शरीरकी काट-छाँटके लिए भी होने लगा है। इसकी बदौलत यूरोपकी कितनी ही कुरूप नियाँ



चेहरा सुडौल बनाया जा रहा है

आज सौन्दर्य-प्रतियोगिताओंमें भाग ले रही हैं। जिनकी नाक चिपटी थी उन्होंने शरीरके अन्य अङ्गोंसे चमड़ा कटवाकर उसे सुडौल करा लिया, तो किसीने अपने होंठ दुरुस्त कराये। प्रयोगशालामें काम करते



समय एक विद्यार्थीका चेहरा तेजावसे बुरी तरह जल गया था, सर्जनने उसके वक्षस्थलसे आवश्यकतानुसार मांस काटकर उस विद्यार्थीके चेहरे-पर लगाया और उसे फिर पहले जैसा बना दिया। कुछ ही हफ्तोंमें उसका चेहरा ठीक पहले जैसा हो गया, और जलनेका कोई चिह्न उसपर बाकी न रहा।

जिस अङ्गमें नश्वर लगाना होता है, उसपर दवाका लेप करके उसे सुन्न बना देते हैं और आपरेशन शुरू कर देते हैं। क्लोरोफार्म सुँघानेका भी झंझट नहीं, रोगी आरामसे पुस्तक या समाचारपत्र पढ़ा करता है और उधर डाक्टर नश्वर लगाना आरम्भ कर देता है। प्लास्टिक सर्जरीके लिए ऐसे यन्त्र बनाये गये हैं जिनकी सहायतासे इन्चके हजारवें भागकी मुटाईकी त्वचा शरीरके विभिन्न भागोंसे उतारी जा सकती है।

अमेरिकामें करीब ५० डाक्टर इस तरहकी चीरफाड़ द्वारा कुरूप आदमियोंको रूपवान बनानेका काम कर रहे हैं। सैकड़ों व्यक्तियोंको इन डाक्टरोंने रूपदान दिया है।

शरीरके अङ्गोंको सुन्न करनेके लिए अब विशेष प्रकारके इन्जेक्शनका भी प्रयोग किया जाता है। पीठकी रीढ़के भिन्न-भिन्न हिस्सोंसे नसें शरीरके भिन्न-भिन्न अङ्गों तक जाती हैं। अतः सर्जन उपयुक्त स्थानपर रीढ़में सुई लगा देता है और वह अंग जिसमें आपरेशन करना होता है अपने आप सुन्न पड़ जाता है।

आधुनिक चीरफाड़ तो एक नये युगमें प्रवेश कर रहा है। आजका सर्जन दूसरा ब्रह्मा बनने जा रहा है। प्रयोगशालामें बैठा हुआ सर्जन शरीरके किसी भी खराब पुर्जेको बदलकर उसकी जगह नया और स्वस्थ पुर्जा लगा सकनेका दावा रखता है। इस तरह वह मौतपर पूरे तौरसे नहीं तो आंशिक रूपमें जरूर हावी होनेकी उम्मीद रखता है। इस क्षेत्रमें रोज ही नये-नये प्रयोग किये जा रहे हैं।

अमेरिकाके एक सर्जनने एक मरते हुए व्यक्तिकी आँख निकालकर एक जन्मके अन्धेकी आँखके कोटरोंमें लगा दिया। अन्धा व्यक्ति देखने

लग गया और अब तो न्यूयार्कके एक अस्पतालमें आँखोंके बैंकका भी आयोजन किया गया है। आँखके कोटरका पारदर्शक भाग 'कार्निया' इस बैंकमें ६ दिनों तक सुरक्षित रखी जा सकती है। एयर-टाइट बक्समें रासायनिक द्रवके अन्दर 'कार्निया' रखी जाती है। स्वयं बक्स भी रेफ्रि-जरेटरके अन्दर रखा जाता है ताकि 'रासायनिक द्रव' ठण्डा बना रहे। अनेक व्यक्तियोंकी दृष्टिशक्ति आँखकी कार्निyामें चोट लगने, उसके जल जाने अथवा फोड़ेके कारण जाती रहती है। सर्जन लोग इनकी आँखकी खराब 'कार्निया'को आपरेशन द्वारा बाहर निकाल देते हैं तथा स्वस्थ आँखोंकी 'कार्निया' वहाँ फिट कर देते हैं। इस प्रकार उनकी आँखोंकी देखनेकी शक्ति पुनः लौट आती है। बचपनमें एक व्यक्तिकी आँखोंमें स्टोवके फटनेसे जख्म आ गया अतः उसकी दृष्टिशक्ति दोनों आँखोंसे जाती रही। पूरे २२ वर्ष उपरान्त इस नयी विधिके आपरेशन द्वारा उसने पुनः अपनी खोयी हुई दृष्टिशक्ति हासिल की। अमेरिकामें पिछले वर्ष ५०० व्यक्तियोंकी आँखोंमें स्वस्थ कार्निया फिट करके उन्हें दृष्टिदान डाक्टरोंने दिया।

आँखोंके बैंकके लिए प्रायः मृत्युके उपरान्त चार घण्टेके अन्दर-अन्दर शवसे आँख निकालकर कार्नियाको बैंकमें सुरक्षित रख लेते हैं। अवश्य आँख निकालनेसे पूर्व मृत व्यक्तिके निकटतम सम्बन्धीसे अनुमति प्राप्त करनी होती है। मृत अवस्थामें उत्पन्न हुए बच्चोंकी आँखें भी माता-पिताकी अनुमतिसे इस कामके लिए निकाल ली जाती हैं। भारतमें भी आँखोंकी इस नवीन चिकित्सा-प्रणालीको अपनाया गया है।

मनोविज्ञानकी मददसे अब तो सर्जन भी यह उम्मीद करता है कि निकट भविष्यमें वह आपके मस्तिष्कमें नशतर लगाकर आपकी फिक्र और चिन्ताको दूर कर सकेगा, डाह और ईर्ष्याकी भावनाओंको हमेशाके लिए आपरेशन करके दूर निकाल देगा।

लड़ाईके मैदानमें घायल सिपाही अक्सर बहुत ज्यादा खूनके वह जानेके कारण मृत्युके शिकार हो जाया करते थे। लेकिन अब सर्जन इन



घायल आदमियोंके शरीरमें अन्य स्वस्थ व्यक्तियोंके शरीरका रक्त प्रवेश कराकर उनकी प्राणरक्षा कर सकता है। भारत तथा अन्य सभ्य देशोंमें स्वस्थ व्यक्तियोंके रक्तको तहखानेके अन्दर सुरक्षित तरीकोंसे एकत्रित किया जाता है ताकि जरूरत पड़नेपर रुधिर ढूँढ़नेमें दिक्कतका सामना न करना पड़े। इस क्षेत्रमें रूसी डाक्टरोंका अनुभव सबसे आगे बढ़ा हुआ है। उनका कहना है कि मृत्युके बाद मुर्दा-शरीरसे ६ घण्टे बादतक रुधिर निकाला जा सकता है, इस अरसेमें उसका खून बिगड़ता नहीं।

सेनासे सम्बद्ध चिकित्सकोंने युद्धस्थलके आहत व्यक्तियोंके शरीरांगोंकी क्षति पूरी करनेमें आशातीत सफलता प्राप्त की है। इस कार्यमें इंजीनियर, डाक्टर, कलाकार तथा मूर्तिकार सबने सहयोग दिया है। टूटी हुई भुजाके स्थानपर इस्पातकी भुजा लगायी जाती है जिसमें स्प्रिंग, तार आदि इस तरह फिट किये गये रहते हैं कि असली बाहोंकी तरह उसे झुंझ-उधर इच्छानुसार मोड़ा जा सकता है। आहत व्यक्ति औरोंको मौका नहीं देता कि वे भाँप सकें कि उसकी बाहें कृत्रिम हैं। इन्हीं कृत्रिम बाहों की सहायतासे वह तरह-तरह के खेल खेल सकता है, लिख सकता है, सिगरेट पी सकता है तथा मोटर भी चला सकता है। नये ढंगकी कृत्रिम टाँगोंकी मददसे ये सैनिक आसानीके साथ चल-फिर सकते हैं, पार्टियोंमें नृत्य भी कर सकते हैं। प्लास्टिकके बने हुए कृत्रिम कान, आँख और हाथको देखकर जल्दी पता नहीं चलता कि ये नकली हैं।

शरीरके वे अंग जो चोट लगनेके कारण शक्तिहीन हो जाते हैं, विशेष उपायों द्वारा पुनः शक्ति प्राप्त करनेपर बाध्य किये जाते हैं। उदाहरणके लिए यदि पैरकी उँगलियाँ कमजोर पड़ गयीं हैं तो उस व्यक्तिको फर्श-पर पड़ी हुई पत्थरकी गोलियोंको पैरकी उँगलियोंसे उठानेके लिए प्रोत्साहित किया जाता है। टाँगोंमें पुनः शक्ति वापस लानेके लिए रोगीको कृत्रिम साइकिल चलाना होता है। हाथकी उँगलियोंमें शक्ति लानेके लिए उसे टाइपराइटरके की-बोर्डपर अभ्यास कराया जाता है। सारांश यह कि युद्ध-चिकित्सक आहत व्यक्तियोंके केवल प्राण बचानेका ही उद्योग

नहीं करते, बल्कि उन्हें एक बार फिर पूर्ण मनुष्य बनानेका प्रयत्न करते हैं ताकि युद्धोत्तर कालमें वे समाजके लिए भारस्वरूप बनकर न रहें ।

पेरिसके डाक्टर लिण्डवर्गने शीशे और इस्तातकी मददसे एक नकली हृदय बनाया है जिसकी मददसे मुर्गियोंके शरीरसे निकाले हुए जिगर लगभग तीन सप्ताह तक जिन्दा रखे जा सके थे । इन अंगोंका सम्बन्ध उस नकली हृदयसे कर दिया गया था और यह यन्त्र पूरे २१ दिनों तक इन अंगोंमें रक्त और पोषक रस प्राकृतिक ढंगपर पहुँचता रहा । रूस-के वैज्ञानिकोंने तो आदमीके गुर्देको शरीरसे अलग निकालकर उसे कृत्रिम ढंगसे कई दिनों तक जीवित रखा है । यही नहीं, बल्कि एक रोगीके शरीरमेंसे, जिसका गुर्दा खराब हो गया था, खराब गुर्देको निकालकर कृत्रिम ढंगपर जिन्दा रखा गया, स्वस्थ गुर्दा फिट भी कर दिया गया । बहुत मुमकिन है, कुछ ही दिनों बाद आपको अस्पतालोंके अन्दर दवाकी बोतलोंकी बगलमें शरीरके भिन्न-भिन्न अंग कृत्रिम ढंगसे जिन्दा रखे हुए मिलेंगे । आपके शरीरका कोई अंग खराब हुआ और आप सर्जनके पास पहुँचे । उसने आलमारीमेंसे आपकी नापका एक अंग निकाला और आपरेशन करके उसे आपके शरीरमें फिट कर दिया । वस आप पूर्ववत् भले-चंगे हो गये ।

जीव-विज्ञानियोंने प्रजनन-क्रियाकी समस्या हल करनेकी भी कोशिश की है । अनेक डाक्टरोंका खयाल है कि मनचाही सन्तान उत्पन्न करना असम्भव नहीं है । उनका कहना है कि निकट भविष्यमें बुद्धि भी वसी-यतके रूपमें सन्तानको दी जा सकेगी । गर्भावस्थामें किसी खास दवाको माँके पेटके अन्दर पहुँचा देनेसे हम अपनी भावी सन्तानको एक महान गणितज्ञ तथा महाकवि या वैज्ञानिक बना सकेंगे । समाजको जिस प्रकारके व्यक्तियोंकी जरूरत होगी उसी तरहकी सन्तान उत्पन्न करनेका हुक्म वह नागरिकोंको दे सकेगा । इस तरह पूरा समाज एक अच्छे ढंगपर चलेगा । उसके अन्दर किसी प्रकारकी गड़बड़ी उत्पन्न न हो सकेगी ।

फिर यौवनको बनाये रखनेकी भी तरकीबें डाक्टर लोग ढूँढ़ रहे हैं ।



यूरोपमें ग्लैण्ड आपरेशन करके कितने ही कमजोर व्यक्तियोंको स्वास्थ्य प्रदान किया गया है। ग्लैण्ड आपरेशनके विशेषज्ञ डाक्टर वीरोनोफका कहना है कि जिस प्रकार मेढ़े आदि जानवरोंमें बुढ़े मेढ़ेकी ग्रन्थियोंको निकालकर उस जगह जवान मेढ़ेकी ग्रन्थियाँ लगाकर उसे पुनः यौवन प्रदान किया जा सकता है, ठीक उसी प्रकार वृद्ध मनुष्योंकी ग्रन्थियोंको निकालकर उनकी जगह स्वस्थ और जवान वन्दरोंकी ग्रन्थियाँ यदि लगा दी जायँ तो उन वृद्ध व्यक्तियोंमें यौवनके आसार पुनः प्रगट हो सकते हैं। इस सम्बन्धमें यूरोपमें निरन्तर प्रयोग हो रहे हैं, और आशा की जाती है कि निकट भविष्यमें इस क्षेत्रमें भी डाक्टर पूर्ण सफलता प्राप्त कर लेंगे।

## रक्तदान चिकित्सा

आधुनिक शस्त्र-चिकित्सामें रक्तदानको महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। गत जर्मन महायुद्धमें रक्तदान चिकित्साके सहस्रों प्रयोग किये गये थे, और तभीसे रक्तदान चिकित्सालय यूरोपके अनेक देशोंमें खुल गये।

रक्तदान चिकित्सा एकदम नयी बात नहीं है—कई सौ वर्ष पूर्व रोमके प्रधान पोप एक लम्बी बीमारीके दौरानमें एक दिन इतने कमजोर और निष्प्राणसे हो गये कि उनके परिचारकगण घबरा उठे—वे ठीक रूपसे निश्चय करनेमें असमर्थ थे कि पोप जीवित हैं या मर गये। इतनेमें एक दूर देशके डाक्टरने रोगीकी दशा देखकर यह आश्वासन दिया कि यदि उसे किसी स्वस्थ तथा दृष्ट-पुष्ट युवकका रक्त मिल सके तो वह पोपको मृत्युके पंजेसे छुड़ा लेगा। तत्काल ही तीन नवयुवकोंने रक्तदानके लिए अपने आपको पेश किया—इस अनाड़ी डाक्टरने उनके शरीरसे इतना अधिक रक्त निकाल लिया कि वे बेचारे तीनों नवयुवक

अकाल ही मृत्युकी भेंट हुए। वृद्ध पोप भी इस रक्तदानसे लाभ न उठा सके, शीघ्र ही उन्होंने भी स्वर्गलोककी यात्रा की।

### रक्तप्रवाहके नियम

फिर भी रक्तदान द्वारा स्वास्थ्य-लाभ करनेकी यही तरकीब मालूम करनेके लिए यूरोपके विभिन्न देशोंमें प्रयोग जारी रहे। सत्रहवीं शताब्दीके पूर्व इस सम्बन्धमें कोई उल्लेखनीय सफलता प्राप्त न हो सकी। सत्रहवीं शताब्दीमें विलियम हार्वीने शरीरकी रचना तथा रक्त-प्रवाहके नियमोंका विस्तृत अध्ययन किया। विलियम हार्वीको इंग्लैण्डके ब्रादशाह चार्ल्स प्रथमका आश्रय प्राप्त था, अतः अनुसन्धानके लिए विलियम हार्वीको राज्यकी ओरसे सभी सुविधाएँ मिलीं। विलियम हार्वीने सर्वप्रथम यह जानकारी हासिल की कि प्रतिदिन हमारा हृदय २५०० गैलन रक्त पम्प करके हमारे शरीरके प्रत्येक छोरमें भेजता है। ७० वर्षके जीवनमें प्रत्येक व्यक्तिका हृदय ३ अरब बार रक्तको पम्प करके शरीरके भिन्न-भिन्न अंगोंमें भेजता है।

अवस्था तथा जीवधारीके आकारके साथ हृदयकी धड़कन-गति भी बदलती है। जीवधारी जितना छोटा होगा उसके हृदयकी धड़कन-गति भी उतनी ही तेज होगी। गौरैयाके हृदयकी धड़कन प्रति मिनट ८०० बार होती है, चूहेकी ६०० बार, खरगोशकी १५० बार और घोड़ेकी केवल ४० बार। मनुष्य-योनिमें नवजात शिशुके हृदयकी धड़कन प्रति मिनट १३५ होती है, एक वर्षकी आयुपर पहुँचते-पहुँचते १११, छठें सालमें ९६ और १६ वर्षकी अवस्थामें ८० प्रति मिनट रह जाती है। ५० वर्षकी अवस्थाके बाद हृदयकी गति केवल ६० प्रति मिनट रह जाती है। मानव-शरीरकी रक्त-प्रवाहकी नलियोंको यदि सटाकर रखा जाय तो उनकी कुल लम्बाई साढ़े तीन लाख मील पहुँचेगी। मानव शरीरमें औसत रूपसे वजनका ५ प्रतिशत रक्तका अंश रहता है। डेढ़ मन वजनवाले औसत व्यक्तिके शरीरमें कुल तीन सेर रक्त होता है। आध डिग्री सेण्टीग्रेड तापक्रमपर रक्त जमकर ठोस रूप धारण कर



लेता है और ६० डिग्री सेण्टीग्रेड तापक्रमपर रक्त दूषित हो जाता है ।

### एक भारी मुश्किल

रक्तदानकी चिकित्सामें शुरूके दिनोंमें सफलता पर्याप्त मात्रा में मिली किन्तु प्रायः ऐसा भी होता कि खूब हृष्ट-पुष्ट व्यक्तिके शरीरसे लिया गया रक्त रोगीके शरीरमें प्रविष्ट कराते ही रोगी बेचारेकी दशा एकदम बिगड़ जाती और देखते-देखते वह कालका शिकार बन जाता । डाक्टर लोग हैरान थे कि आखिर माजरा क्या है ? उसी व्यक्तिके रुधिरसे कुछ लोगोंको तो पुनर्जीवन प्राप्त हुआ किन्तु कुछ लोगोंके लिए वही रुधिर भयानक विष साबित हुआ ।

इसी उधेड़बुनमें डाक्टर लोग परेशान थे कि जर्मनी, चेकोस्लो-वाकिया और अमेरिकाके कुछ प्रयत्नशील डाक्टरोंने इस सम्बन्धमें लम्बे काल तक अनुसन्धान करनेपर यह निष्कर्ष निकाला कि मानव-प्राणीके रुधिरको हम चार श्रेणियोंमें विभाजित कर सकते हैं । लगभग ४० प्रतिशत व्यक्तियोंका रुधिर प्रथम श्रेणीका होता है । प्रथम श्रेणीका रुधिर किसी भी श्रेणीके रुधिरके साथ बिना किसी भेद-भावके मिल जाता है । किन्तु द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ श्रेणीके रुधिर श्रेणी विशेषके रुधिरके साथ ही मिल पाते हैं । यदि गलत श्रेणीके रुधिर आपसमें मिलाये जाते हैं तो फौरन ही सम्मिलित रुधिरके थक्के बन जाते हैं, यहाँतक कि रुधिरका द्रव रूप ही नष्ट हो जाता है—ठोस रुधिर शरीरकी रक्तवाहिनी नलियोंमें प्रवाहित हो नहीं पाता और रोगीको अनायास ही अपनी जिन्दगीसे हाथ धोना पड़ता है ।

इस नयी खोजने रक्तदान चिकित्साको सर्वथा निर्दोष तथा निरापद बना दिया । शीघ्र ही सभी प्रगतिशील देशोंने इस नूतन चिकित्सा-प्रणालीको अपनाकर सहस्रों व्यक्तियोंको कालके मुँहमेंसे बचाया ।

जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं, प्रत्येक व्यक्तिके शरीरमें लगभग तीन सेर रुधिर होता है । दुर्घटनामें या आपरेशनमें यदि रोगीके शरीरसे डेढ़ सेरसे अधिक रुधिर निकल जाय, तो रोगी आक्सीजनकी कमीके

कारण मर जायगा, क्योंकि रुधिरके रक्तवर्णके कोषोंमें आक्सीजन घुली होती है, आक्सीजनकी मात्रा कम होनेपर कोई व्यक्ति जीवित नहीं रह सकता। अतः ऐसे अवसरपर रोगीकी रक्षा करनेके लिए उसके शरीरमें शुद्ध रक्त पहुँचाना नितान्त आवश्यक होता है। अवश्य ही रोगीके शरीरमें रुधिर प्रविष्ट करानेके पहले इस बातकी जाँच भलीभाँति कर लेनी चाहिये कि जिस श्रेणीका रुधिर रोगीके शरीरमें प्रविष्ट कराया जा रहा है वह उसके रुधिरके साथ मेल खाता है या नहीं।

इस दृष्टिकोणसे रुधिरकी जाँच करनेमें पाँच मिनटसे अधिक नहीं लगता। रक्तदान करनेवाले व्यक्तिकी उँगलीसे दो-तीन बूँद रुधिर लेकर एक विशेष यन्त्रमें डालते हैं और तीन-चार मिनटके अन्दर मालूम हो जाता है कि उस व्यक्तिका रुधिर रोगीके लिए कल्याणप्रद साबित होगा या हानिकर। गत यूरोपीय महायुद्धमें अमेरिकाके डाक्टरोंने हजारों सैनिकोंकी जिन्दगी रक्तदानकी मददसे बचायी।

### रूसमें

रूसने इन क्षेत्रोंमें विशेष उन्नति की है। बहुत दिनों पहले १८३२ में डाक्टर वुल्फने एक जच्चाकी जान रक्तदानकी सहायतासे बचायी थी। डाक्टर वुल्फके बाद प्रोफेसर खोटविटस्की तथा अन्य कई रूसी सर्जनोंने इस क्षेत्रमें महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान किये, किन्तु जार-त्रस्त रूसमें इस नूतन और नायाब चिकित्सा-प्रणालीका केवल मुट्ठीभर धनिक लोग ही फायदा उठा सकते थे। इक्के-दुक्के विशेषज्ञ रक्तदान चिकित्साके लिए मनमानी रकम वसूल करते थे। किन्तु सन् १९१७ की सफल क्रान्तिके उपरान्त जब उसकी शासन-सत्ता श्रमिक जनताके हाथोंमें आयी तो विज्ञान, चिकित्साशास्त्र, शिक्षा-प्रबन्ध आदि सभी आवश्यक साधन जनता-जनार्दनकी सेवामें अर्पण कर दिये गये। जगह-जगह उत्तम श्रेणीके अस्पताल बन गये जिनमें साधारण जनता बिना किसी प्रकारकी फीस अदा किये ही डाक्टरी चिकित्सा प्राप्त कर सकती है। रक्तदान-चिकित्सा भी कुछ ही दिनोंके अन्दर सोवियट रूसमें एक



वृहत् पैमानेपर इस्तेमाल होने लग गयी ।

साधारण अस्पतालोंके अतिरिक्त लगभग १५०० विशेष रक्तदान-चिकित्सालय रूसके भिन्न-भिन्न जिलोंमें बने हुए हैं । इन सबमें नियमित रूपसे रक्तदान चिकित्साका प्रयोग जनसाधारणके लिए होता है । सन् १९३९ के आँकड़ोंके देखनेसे पता चलता है कि सन् १९३९ में सोवियट रूसके अन्दर १ लाख ४० हजार २ सौ ९० व्यक्तियोंके शरीरमें रुधिर प्रविष्ट कराया गया था । संसारके अन्य किसी देशमें रक्तदान चिकित्साका प्रयोग इतने बड़े पैमानेपर नहीं हो रहा है । इसका मुख्य कारण यह है कि अमेरिका, इंग्लैण्ड आदि देशोंमें रुधिरके लिए रोगीको महँगे दाम चुकाने पड़ते हैं । अतः केवल धनी व्यक्ति ही इस नूतन चिकित्सा-प्रणालीसे लाभ उठा सकते हैं । अमेरिकामें तो रक्तदान करनेवाले व्यक्तियोंका एक यूनियन ही स्थापित हो गया है । इस यूनियनके प्रत्येक सदस्यके रुधिरकी जाँच पहलेसे ही कर ली जाती है । यूनियनके रजिस्टरमें दर्ज कर लिया जाता है कि अमुक व्यक्तिके शरीरका रुधिर प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ श्रेणीका है । वस, जहाँ कहीं रक्त-प्रवेश करानेकी जरूरत हुई सही किस्मके रक्तवाले व्यक्तिको आपरेशन-रूममें भेज देते हैं । अपने शरीरसे एक नियत मात्रामें रक्त निकलवाकर उसी हिसाबसे मूल्य लेकर वह वापस चला आता है ।

### बोतलोंमें सुरक्षित रुधिर

सोवियट रूसमें यह चिकित्सा-प्रणाली इतनी आगे बढ़ चुकी है कि अब रक्तदान करनेवालेको रोगीके निकट जानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती । प्रयोगशालाओं तथा बड़े-बड़े अस्पतालोंमें स्वस्थ व्यक्तियोंके शरीरका रुधिर शीशेकी बोतलमें इकट्ठा करके रखते हैं । इन बोतलोंमें सोडियम साइट्रेट नामके एक रासायनिक पदार्थका घोल रख छोड़ते हैं—यह घोल रुधिरका थक्का नहीं बँधने देता । चूँकि गर्मीके कारण रुधिर शीघ्र ही दूषित हो जाता है, इसलिए इन बोतलोंको रेफ्रिजरेटरमें रखते हैं ताकि रुधिरका तापक्रम एक नियत तापक्रमसे ऊँचा न उठने पाये ।

टेलीफोनकी घण्टी बजी कि अस्पतालके तहखानेसे आवश्यकतानुसार मात्रामें रुधिर बोतलोंमें भरकर एम्बुलेन्स मोटरगाड़ीपर रखकर भेज देते हैं। बिना किसी झंझटके अन्य दवाओंकी भाँति इस जाँच किये हुए रुधिरको डाक्टर रोगीके शरीरमें विशेष ढंगकी पिचकारी द्वारा प्रविष्ट करा देता है। रोगी या डाक्टरको खबर भी नहीं होने पाती कि किस व्यक्तिके शरीरसे निकाला हुआ रुधिर उसके शरीरमें प्रविष्ट कराया गया है। रेफ्रिजरेटरमें रखा हुआ रुधिर बीस दिनों तक खराब नहीं होता।

अक्सर दुर्घटना-स्थलपर आहत व्यक्तियोंके शरीरसे इतना अधिक रक्त निकल जाता है कि उसे मौतके मुँहसे बचा सकना असम्भव हो जाता है। अब दुर्घटना-स्थलपर ही रक्तदानके लिए रुधिर भेज दिया जाता है। समुद्र-यात्रामें जरूरत पड़नेपर रूसके वायुयान भी रेडियो द्वारा खबर पाकर अस्पतालके स्टोर रूमसे रुधिर लेकर जहाजपर पहुँचा देते हैं। कभी-कभी अर्जेंट (अत्यन्त जरूरी) बीमारोंके लिए भी वायुयानों द्वारा ही रक्त भेजा जाता है। उस स्थानपर यदि वायुयानके उतरनेके लिए एयरोड्रोम नहीं मिला तो पैराशूट द्वारा ही रुधिरकी बोतलको उस स्थानपर सावधानीके साथ गिरा देते हैं।

### रक्तदानके लिए उत्सुक

युद्धकालमें आहत हुए सैनिकोंकी एक बड़ी संख्याको रक्तदान-चिकित्सा द्वारा मृत्युके पंजेसे छुड़ाया जा सकता है। अभी पिछले फिनलैण्ड-रूस युद्धमें ६० हजार रूसी नवयुवकोंने युद्धकालकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए अपना रक्त मुफ्त देनेके लिए स्वयंसेवकों की सूचीमें अपना नाम लिखाया था। अमेरिकाकी तरह रूसमें ऐसे पुण्य-अनुष्ठानके लिए लोग अपना रक्त बेचते नहीं हैं। रूसका प्रत्येक व्यक्ति अपनेको राष्ट्रका एक जिमेदार अंग मानता है। वह समझता है कि राष्ट्रके हितमें उसका निजका हित निहित है। अतएव राष्ट्रसेवाको वह अपना आवश्यक कर्तव्य मानता है—इसी भावनासे प्रेरित होकर रूसके सहस्रों युवक अपने स्वस्थ शरीरसे रक्तदान करनेके लिए सदैव



तैयार रहते हैं। मास्कोमें क्रिश्चिस्सकी नामके एक व्यक्तिने तो सौसे भी अधिक बार अपने शरीरसे रक्त इस पुण्य कामके लिए दिया है। वेल्किनाव एक व्यायाम-शिक्षकने ९ सालके दर्मियान ११४ रोगियोंको अपना रक्त दिया है। एक नर्सने ७६ बार अपना रुधिर देकर रोगियोंकी जान बचाई है। इस चिकित्सा-प्रणालीमें दो गिलासतक रुधिरकी आवश्यकता पड़ती है। रक्तदान देनेवाले व्यक्तिको अपने रुधिरकी इस कमीको पूरा करनेमें लगभग आठ दिन लग जाते हैं—किन्तु इस क्रियाके फलस्वरूप उसके स्वास्थ्यपर किसी प्रकारका धक्का नहीं पहुँचता। यदि उसी व्यक्तिके शरीरसे दुबारा रक्त लेना हुआ तो पिछले रक्तदानके छः महीने बाद ही ऐसा किया जा सकता है—सो भी डाक्टरों की परीक्षाके बाद।

रक्तदान चिकित्साका बड़े पैमानेपर सर्वप्रथम प्रयोग स्पेनके गृह-युद्धमें किया गया था। प्रोफेसर हाल्डेनने एक स्थानपर लिखा है कि मैंने स्पेनके गृहयुद्धमें देखा कि एक कामरेडने अपने शरीरसे सेरभर रुधिर रक्त-प्रवेश चिकित्साके लिए निकलवाया और फिर तत्काल ही साइकिलपर सवार होकर चलता बना।

स्पेनके गृहयुद्धकी ही एक घटनाका वर्णन करते हुए प्रोफेसर हाल्डेन लिखते हैं—‘कैम्प अस्पतालमें लोग एक कामरेडको ले आये जिसकी बायीं भुजा बमके विस्फोटसे क्षतविक्षत हो गयी थी। न तो वह बोल सकता था और न हाथ-पाँव ही हिला-डुला सकता था—उसकी दूसरी भुजाकी शिराओंमें रक्त वाकी न बचा था। डाक्टरने दाहिनी भुजाकी त्वचा काटकर उसकी एक नसमें रक्त प्रवेश करानेवाली सुई चुभोई। हाथमें रुधिरकी बोतल लिए हुए मैं लगभग २० मिनट तक खड़ा रहा—धीरे-धीरे रुधिर सुईके सहारे उस कामरेडके शरीरमें प्रवेश कर रहा था। नये रुधिरके प्रवेश करनेपर उस व्यक्तिके चेहरेका रंग बदला और साथ ही उसकी चेतना-शक्ति भी लौटी। उसकी दाहिनी भुजाके सूराखपर जब टाँका लगाया जा रहा था, उसने जरा-सा उफ

किया। कमजोरी इतनी अधिक थी कि वह अभी भी बोलनेमें असमर्थ था, किन्तु जब हम चलने लगे तो उसने दाहिनी भुजा मोड़कर हमारा साम्यवादी ढंगसे अभिवादन किया।'

रक्त-प्रवेश चिकित्साका इस्तेमाल विशेष हालतोंमें भी किया गया है। उदाहरणके लिए किसी बड़े आपरेशनके पूर्व यदि कमजोर व्यक्तिके शरीरमें रक्त प्रविष्ट करा दिया जाय तो इस बातकी आशंका नहीं रह जाती कि आपरेशनका असर उस व्यक्तिपर बुरा पड़ेगा। कार्बन-मानोआक्साइड गैस (बन्द कमरेमें पत्थरके कोयले जलनेसे उत्पन्न होनेवाली जहरीली गैस) श्वासके अन्दर चली जाती है तो इसके जहरसे रुधिरके रक्तवर्णके कोष नष्ट हो जाते हैं। फलस्वरूप रुधिरकी आक्सीजन ले जानेकी क्षमता मारी जाती है और वह व्यक्ति शीघ्र ही मौतका शिकार बन जाता है। ऐसी हालतमें उस व्यक्तिके शरीरसे दूषित रक्त बाहर निकालकर शुद्धरक्त उसके शरीरमें प्रविष्ट करा देनेसे उसकी जान बच सकती है।

रक्त-प्रवेश चिकित्साकी सफलतासे प्रोत्साहित होकर डाक्टरोंने इस क्षेत्रमें और भी अनुसन्धान किये हैं। रक्त वास्तवमें एक हलके पीले रंगका द्रव होता है जिसमें नन्हें-नन्हें क्षुद्रतम आकारके सहस्रों लालकण तैरा करते हैं। नलिकाओंमें रखकर यदि रुधिरको तेजीके साथ घुमाया जाय तो ये लालकण पीले द्रवसे पृथक् हो जाते हैं, जिस तरह दूधसे मक्खन अलग किया जाता है। इस पीले द्रवको 'प्लाज्मा' का नाम दिया गया है। चिकित्साके लिए डाक्टरोंने प्लाज्माका इस्तेमाल करना भी शुरू किया है। अत्यधिक रक्तप्रवाह हो जानेके कारण अशक्त हुए व्यक्तिके शरीरमें रुधिरके बजाय यदि प्लाज्मा प्रविष्ट करा दिया जाय तो भी उसे यथेष्ट लाभ पहुँचता है। प्लाज्माको सुखाकर पाउडर भी तैयार कर लिया गया है। पाउडरके रूपमें प्लाज्मा आसानीके साथ एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजा जा सकता है। लन्दनमें जिन दिनों जर्मन वायुयान हजारोंकी संख्यामें आकर प्रतिदिन बम बरसाते थे, वहाँके



आहत नागरिकोंकी चिकित्साके लिए अमेरिकासे द्रव तथा पाउडरके रूपमें ढेर-सा प्लाज्मा लन्दन भेजा गया था ।

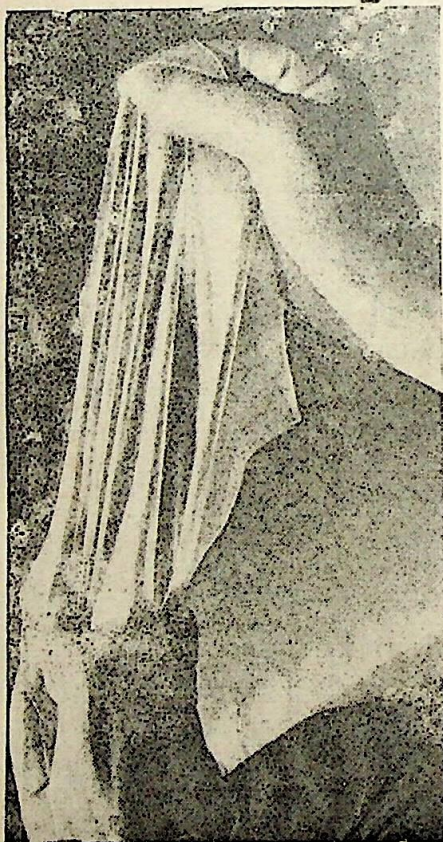
इन डाक्टरोंने प्लाज्माका विश्लेषण करके उसके अन्दरसे फाईब्रिन नामक पदार्थ अलग किया है । यह स्वच्छ श्वेत चूर्णके रूपमें तैयार किया जा सकता है । रुधिरके थक्का बाँधनेका गुण फाईब्रिनके कारण ही होता है । घोलनेपर फाईब्रिन झिल्लीकी तरह बन जाती है । शल्य-चिकित्सामें मुख्यतः मस्तिष्कके घावको ढँकनेके लिए फाईब्रिनकी झिल्ली काममें आती है । कुछ दिनों उपरान्त यह झिल्ली अपने आप शरीरके मांस और त्वचा में जड़ हो जाती है । बारीक शिराओंकी चीर-फाड़में रक्त-प्रवाह रोकनेके लिए भी फाईब्रिनका प्रयोग किया जाता है । शिराओंके नन्हें-नन्हें छिद्रों-मेंसे जब रक्त बहने लगता है तो उसे पट्टी आदिसे बाँधकर रोक नहीं सकते । फाईब्रिनकी झिल्ली लगा देनेपर ये छिद्र अपने आप बन्द हो जाते हैं और रक्तका बाहर निकलना रुक जाता है ।

### मृत शरीरसे रक्त

रूसमें रक्तदान चिकित्साके दृष्टिकोणसे ऐसे रक्तकी भी परीक्षा की गयी है जो दुर्घटनामें मरे हुए व्यक्तियोंके शरीरसे प्राप्त किया गया है । मृत्यु होनेके छः घण्टेके भीतर मृत शरीरसे जो रुधिर प्राप्त किया जाता है वह वैज्ञानिक दृष्टिसे सर्वथा निर्दोष होता है । यह रक्त ठीक वैसा ही होता है जैसा मृत्यु होनेके पहलेका रक्त । साथ ही इस प्रकार प्राप्त किये गये रुधिरके सम्बन्धमें सुविधा यह होती है कि चार-पाँच गिलास रुधिर एक ही व्यक्तिके मृत शरीरसे खींचा जा सकता है । अवश्य दुर्घटनामें मरे हुए व्यक्तिके शरीरमें यदि मलेरिया, उपदंश या इसी तरहकी अन्य कोई बीमारी हुई हो तो उसके शरीरका रक्त कदापि रक्तदानके लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता ।

### बकरेका रुधिर

कुछ डाक्टरोंने तो रक्तदान चिकित्साके लिए बकरे आदिके रक्तकी भी परीक्षा की है । उनका कहना है कि बकरेका रक्त कमजोर और



यह अर्द्धपारदर्शक झिल्ली रुधिरके फाईब्रिनसे तैयार की गयी है। मस्तिष्कके चीर-फाड़में फाईब्रिनकी झिल्लीका इस्तेमाल आधुनिक सर्जन लोग एक बड़े पैमानेपर कर रहे हैं।



क्षिथिल अंगवाले रोगियोंके शरीरमें प्रविष्ट करानेसे उनके अन्दर स्फूर्ति पैदा हो जाती है, किन्तु इस तरहके अनुसन्धान अभी इक्के-दुक्के डाक्टरोंने ही किये हैं। दो-चार वर्षके उपरान्त ही इस सम्बन्धमें निश्चित रूपसे कुछ कहा जा सकेगा।

## पेनिसिलिन

औषधि-विज्ञानके इतिहासमें सम्भवतः 'पेनिसिलिन'का आविष्कार एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण घटना है। समस्त कीटाणुनाशक औषधियोंमें पेनिसिलिनका स्थान सर्वोपरि है। बीसियों प्राणनाशक व्याधियोंके कीटाणुओंको यह निश्चित रूपसे तथा कमसे कम समयमें विनष्ट कर सकता है। अन्य कीटाणुनाशक औषधियोंके इस्तेमालके उपरान्त रोगीपर उसके कुछ हानिकारक प्रभाव रह जाते हैं किन्तु पेनिसिलिन इस दोषसे सर्वथा मुक्त है।

पेनिसिलिनके आविष्कारकी कहानी स्वयं बड़ी रोचक है। लगभग २४ वर्ष पूर्व सन् १९२९ में सेण्ट मेरी अस्पताल लन्दनके प्रोफेसर एलेक्जेंडर फ्लेमिंग 'कार्वकल'के तथा रुधिरको विपाक्त बनानेवाले कीटाणुओंका अध्ययन कर रहे थे। टेस्टट्यूबके अन्दर इन्हीं कीटाणुओंको उत्पन्न करनेका प्रयोग ये कर रहे थे। इस सिलसिलेमें थोड़ी-थोड़ी देरके उपरान्त प्रोफेसर फ्लेमिंग टेस्टट्यूबको खोलकर अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा कीटाणुओंका निरीक्षण करते थे। हवामें पाये जानेवाले फफूँद उत्पन्न करनेवाले कुछ कीटाणु भीतर पहुँच गये। फलस्वरूप एक दिन आपने देखा कि एक टेस्टट्यूबके अन्दर मखमली फफूँद-सी लग गयी थी। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा ध्यानसे परीक्षा करनेपर उन्होंने पाया कि फफूँदके चारों ओरके कीटाणु तेजीके साथ विनष्ट होते जा रहे थे।

उन्होंने सोचा कि अवश्य ही इस फफूँदमें कुछ ऐसे तत्व मौजूद हैं जो इन कीटाणुओंके लिए विशेष रूपसे घातक साबित होते हैं। इसी पदार्थको पेनिसिलिनका नाम दिया गया। तदुपरान्त प्रोफेसर फ्लेमिंग-ने इस फफूँदका थोड़ा-सा भाग तारके पतले टुकड़ेकी सहायतासे बाहर निकाला और उसे एक दूसरे टेस्ट-ट्यूबमें विशुद्ध अवस्थामें बढ़ानेके लिए रख दिया। फिर प्रयोगों द्वारा उन्होंने यह दिखलाया कि जिस द्रवमें यह फफूँद पैदा हुई, उसीके अन्दर 'पेनिसिलिन' का निर्माण हुआ, और फफूँदका कीटाणुनाशक गुण इसी पेनिसिलिनके कारण है।

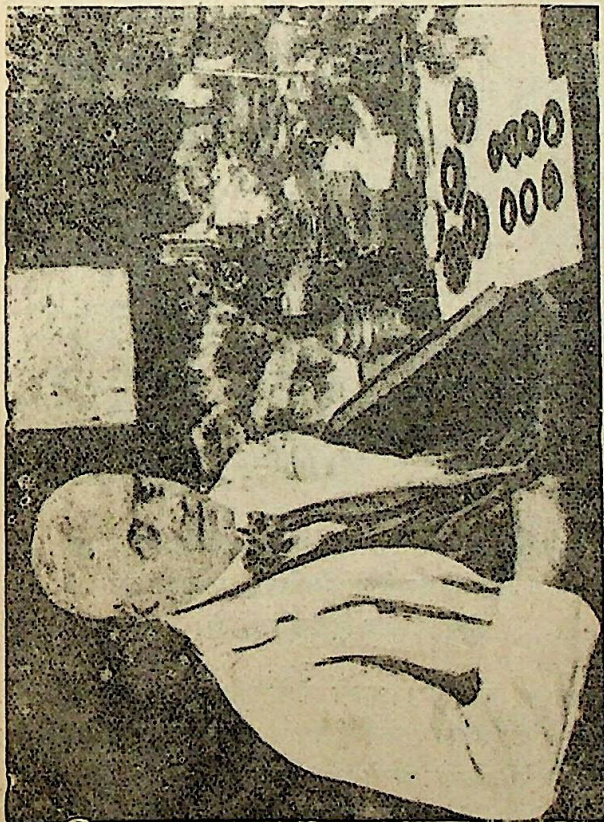
किन्तु उन दिनों पेनिसिलिन विशुद्ध अवस्थामें तैयार नहीं की जा सकी थी और न वह गाढ़े रूपमें लभ्य हो सकी थी। इसीलिए पूरे दस वर्षतक इस रामबाण औषधिका पूरा फायदा हम उठा न सके। बादमें आक्सफोर्डके प्रोफेसर फ्लोरेने पेनिसिलिनको गाढ़ा बनानेकी विधि मालूम की और तभी प्रयोगों द्वारा उन्होंने प्रमाणित किया कि गाढ़ी अवस्थामें पेनिसिलिनका इस्तेमाल रोग-कीटाणुओंका नाश करता है, साथ ही रोगीपर यह किसी प्रकारका हानिकारक प्रभाव नहीं डालना। गत युद्ध-के दौरानमें पेनिसिलिनका सर्वप्रथम प्रयोग शरीरांगोंके घावको कीटाणु-रहित करके उन्हें स्वस्थ करनेके निमित्त हुआ था।

तदुपरान्त आक्सफोर्डके प्रोफेसर फ्लोरेने चूहोंके शरीरमें पेनिसिलिनको द्रवके रूपमें प्रविष्ट कराकर उसके कीटाणुनाशक गुणको साबित किया। सुई द्वारा प्रोफेसर फ्लोरेने पेनिसिलिनके इन्जेक्शनकी विधि निकाली। सन् १९४१में इस सिलसिलेमें प्रोफेसर फ्लोरेने दस ऐसे मनुष्योंको चुना जिनके रोग 'सल्फो-नामाइड' द्वारा भी दूर न हो सके थे। पेनिसिलिनके इस्तेमालसे इन सभी व्यक्तियोंको पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ हुआ। प्रोफेसर फ्लोरे अब पेनिसिलिन निर्माणके लिए परामर्श देनेके लिए अमेरिका आमन्त्रित किये गये। शीघ्र ही अमेरिकामें एक बड़े पैमानेपर पेनिसिलिन तैयार करनेके लिए फैक्टरियाँ खुल गयीं और सन् १९४३में सर्वत्र मित्रराष्ट्रोंकी सेनामें आहत तथा बीमार सैनिकोंके



औपधोपचारके लिए पेनिसिलिनका प्रयोग प्रचुरतासे होने लगा ।

अधिक मात्रामें पेनिसिलिन तैयार करनेके लिए काफी झंझटोंका सामना करना पड़ता है और देर भी लगती है । चीनीके शर्बतपर फफूँद

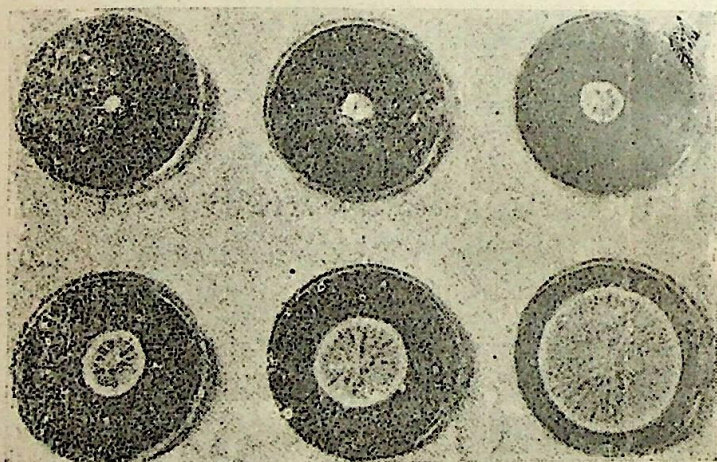


पेनिसिलिनके आविष्कर्ता प्रो० एलेक्जेंडर फ्लेमिंग अपनी  
लन्दन-स्थित प्रयोगशालामें

धीरे-धीरे हफ्तोंतक उगाया जाता है । इसके लिए खास ढंगके काँचके बर्तन (फ्लास्क) का प्रयोग किया जाता है । फ्लास्कके मुँहपर रुई रख देते हैं ताकि फफूँद उत्पन्न करनेवाले कीटाणु अन्दर जाकर फफूँदका



निर्माण कर सकें। लगभग १५ दिनोंतक फफूँद बढ़ते रहते हैं। इस प्रकार नमदेकी तरह एक मोटी तह फफूँदकी शर्बतकी सतहपर जम जाती है। इस स्टेजपर नीचे तहमें पेनिसिलिन समाविष्ट हो जाती है। तदुपरान्त इस द्रवसे पेनिसिलिन शुद्ध अवस्थामें प्राप्त की जाती है। फिर



प्रोफेसर फ्लेमिंग द्वारा तैयार की गयी पेनिसिलिनका नमूना;  
इन ६ चित्रोंमें क्रमसे पेनिसिलिनके फफूँदकी दस  
दिनोंकी बाढ़ दिखाई गयी है।

इसे गाढ़ा बनाया जाता है। द्रवसे पेनिसिलिन प्राप्त करने तथा उसे गाढ़ा बनानेके लिए शीघ्रता और सावधानीकी आवश्यकता पड़ती है। अन्यथा द्रवमेंसे पेनिसिलिन अपने आप विनष्ट हो जाता है।

पेनिसिलिनके गुणोंके सम्बन्धमें किये गये नूतनतम अनुसन्धानोंसे पता चला है कि गर्दनतोड़ ज्वर, कार्बकल, न्यूमोनिया, विषाक्त गैसके प्रभाव, उपदंश तथा विषाक्त चोटके लिए पेनिसिलिन रामबाण औषधि साबित होती है। किन्तु मोतीझरा ज्वर, पेचिश तथा मलेरियाके



कीटाणुओंपर पेनिसिलिनका प्रभाव नहीं पड़ता ।

साधारणतः पेनिसिलिन घोलके रूपमें शरीरके अन्दर इन्जेक्शन द्वारा प्रविष्ट कराया जाता है । इन्जेक्शन या तो रक्तवाहिनी शिराओंमें डाला जाता है या उसे जंघोंके पिछले भागकी माँस-पेशियोंमें डाला जाता है । एक बार पेनिसिलिन प्रविष्ट करा देनेपर लगभग तीन घण्टे-तक वह शरीरमें रहता है, फिर मूत्रके रास्ते वह बाहर निकल जाता है । अतः पेनिसिलिन द्वारा उपचार करनेमें पेनिसिलिनकी प्रचुर मात्राकी आवश्यकता पड़ती है, बार-बार पेनिसिलिनका इन्जेक्शन देना पड़ता है । एक बारके इन्जेक्शनके लिए १५००० यूनिट (प्रो० फ्लोरेने पेनिसिलिनकी मात्रा नापनेके लिए यह यूनिट निश्चित की थी) पेनिसिलिनकी जरूरत होती है ।

विपाक्त हुई चोट (सेप्टिक) पर मलहमके साथ पेनिसिलिन मिलाकर लगाते हैं । किन्तु गहरी चोटमें मलहमका पेनिसिलिन भीतरतक नहीं पहुँच पाता । अतः ऐसी दशामें इन्जेक्शनकी ही शरण लेनी पड़ती है । मुँहके रास्ते पेनिसिलिन खानेके लिए साधारणतः नहीं दिया जाता, क्योंकि मुँहके अन्दर तथा पेटमें पाये जानेवाले अम्लतत्त्वके संसर्गमें आनेपर तुरन्त ही पेनिसिलिन नष्ट हो जाती है ।

गर्दनतोड़ ज्वरमें पेनिसिलिनका इन्जेक्शन सीधे रीढ़के अन्दर दिया जाता है । इस दशामें रक्तवाहिनी शिराओंमें इन्जेक्शन देनेसे विशेष लाभ नहीं होता, क्योंकि रूधिरमंसे रीढ़के अन्दर पेनिसिलिन आसानीसे नहीं पहुँच पाती ।

पेनिसिलिनकी चिकित्सामें इस बातका विशेष ध्यान रखना पड़ता है कि हर बार शरीरके अन्दर औषधिकी पूरी मात्रा पहुँचे, क्योंकि कुछ बीमारियोंके कीटाणु पेनिसिलिनकी अपर्याप्त मात्राके संसर्गमें आनेपर एक प्रकारकी सुरक्षित अवस्था अख्तियार कर लेते हैं और तब पेनिसिलिनका इनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

हड्डी टूटनेपर अथवा शरीरांगोंके विक्षत हो जानेपर भी पेनिसिलिनका

इस्तेमाल विशेष उपयोगी साबित होता है ।

पेनिसिलिन साधारणतः खरकी कार्क लगी छोटी-छोटी शीशियोंमें आती है । प्रत्येक शीशीमें १ लाख यूनिट पेनिसिलिन मौजूद रहती है । इसमें शुद्ध परिस्रवित पानी मिलाकर या नमकका घोल मिलाकर इन्जेक्शनके लिए इस्तेमाल करते हैं । रेफ्रिजरेटरके अन्दर बर्फके ताप-क्रमपर ही इसे रखा जाता है अन्यथा इसकी शक्ति क्षीण हो जाती है । पाउडरके रूपमें भी पेनिसिलिन फर्म द्वारा तैयार की जाती है । इस पाउडरमें नमकके घोलको मिलाकर इन्जेक्शनके लिए तैयार कर लेते हैं ।

पेनिसिलिनका रासायनिक विश्लेषण इस उद्देश्यसे किया जा रहा है कि उसे रसायनशालामें कमसे कम समयमें कृत्रिम साधनों द्वारा तैयार किया जा सके । अचूक औषधि होनेके नाते पेनिसिलिनकी माँग बहुत ज्यादा है किन्तु अमेरिकन फर्म पर्याप्त मात्रामें पेनिसिलिन तैयारकर सकनेमें असमर्थ है । हमारे देशमें भी सायन्टिफिक-रिसर्च-इन्स्टीट्यूटमें प्रचुर मात्रामें पेनिसिलिन तैयार करनेके निमित्त प्रयत्न किये जा रहे हैं । जिस दिन वैज्ञानिक कृत्रिम ढंगपर पेनिसिलिन तैयारकर पायेगा, उस दिनसे गर्दन-तोड़ ज्वर, न्यूमोनिया, कार्बकल सरीखे घातक रोगोंसे मानव-जातिको सदाके लिए छुटकारा मिल जायगा ।

## डी. डी. टी.

इस द्वितीय महायुद्धके दौरानमें, रोग उत्पन्न करनेवाले "कीड़े-मकोड़ोंके विनाशके लिए डी. डी. टी. का प्रयोग पहली बार सन् १९४२ में हुआ । वैसे तो डी. डी. टी. का निर्माण सबसे पहले सन् १८७४ में जर्मनीकी ही प्रयोगशालामें हुआ था, किन्तु जर्मन वैज्ञानिक डी. डी. टी. के रासायनिक गुणोंकी जाँच करके ही चुप रह गये । उन्हें



पता नहीं चला कि यह रोग-कीटाणुओंको भी नष्ट कर सकता है। पूरे ६६ वर्ष उपरान्त सन् १९४० में वैज्ञानिकोंको स्विट्जरलैण्डमें आलूकी फसलको हानिकारक कीड़ोंसे बचानेके उद्योगोंमें डी. डी. टी. के कृमिनाशक गुणोंका पता चला। तुरन्त ही इस नवीन जानकारीका फायदा मित्रराष्ट्रोंने उठाया। फलस्वरूप सैनिक-शिबिरोंमें मक्खियों, मच्छरों और शरीरपर पलनेवाले क्षुद्रजीव—चीलर, जूँ आदिको नष्ट करनेके लिए एक बड़े पैमानेपर इसका प्रयोग सन् १९४२ से आरम्भ हुआ। मलेरिया, टायफाइड, विसूचिका और निद्रारोग आदिको रोकनेके लिए अफ्रीका तथा सुदूरपूर्वमें डी. डी. टी. का इस्तेमाल खूब प्रचुरताके साथ किया गया।

इस सिलसिलेमें एक दिलचस्प घटनाका उल्लेख कर देना अनुपयुक्त न होगा। इटलीके नेपुल्स नगरमें टाइफस ज्वर जोरोंमें था। प्रति दिन लगभग ३०० व्यक्ति कालके ग्रास बन रहे थे। अमेरिकन सेनाओंके साथ वैज्ञानिकोंकी टोली डी. डी. टी. के पाउडरके डिब्बोंको लेकर वहाँ गयी और इन लोगोंने वहाँ जाकर नेपुल्स नगरके ३ लाख निवासियोंके वस्त्रोंको डी. डी. टी. पाउडरसे शुद्ध किया; आस्तीनोंमें, कालरमें सब जगह डी. डी. टी. पाउडर छिड़का। पाउडरके सम्पर्कमें आनेपर टाइफसके कीड़े नष्ट हो गये और दस दिनोंके अन्दर नगर इस भयानक शापसे मुक्त हो गया।

फिर अगस्त सन् १९४४ में पैसिफिक द्वीपोंमें जब अमेरिकन सेनाएँ जापानपर आक्रमण करनेके लिए उतरीं तो वायुयानोंपरसे डी. डी. टी. के पाउडर छिड़के गये ताकि रोग उत्पन्न करनेवाले कीड़े नष्ट हो जायँ। मच्छर डी. डी. टी. पाउडर द्वारा इतनी अच्छी प्रकारसे नष्ट कर दिये गये कि सैनिकोंमेंसे विरले ही एकाध लोगोंपर मलेरियाका आक्रमण हो पाया। बर्मामें भी डी. डी. टी. का इस्तेमाल एक बड़े पैमानेपर हुआ था। अन्यथा मलेरिया-ग्रस्त जंगलोंमें अमेरिकन और ब्रिटिश सेनाओंका टिक सकना सम्भव न था।

डी. डी. टी. एक रासायनिक द्रव है। इसका घातक प्रभाव कीड़ोंपर

धीरे-धीरे किन्तु अनिवार्य रूपसे होता है। थोड़ी मात्रा में भी यह पदार्थ अपनी घातक शक्ति एक लम्बी अवधितक बनाये रखता है। अमेरिकन वैज्ञानिकोंने ओलैण्डो प्रयोगशाला में डी. डी. टी. की शक्तिकी जाँच करनेके निमित्त ४७ व्यक्तियोंको वेतनपर नियुक्त कर रखा था। यह देखनेके लिए कि चीलरोंपर डी. डी. टी. का घातक प्रभाव किस प्रकारका होता है, इन वैज्ञानिकोंने इन्हींमेंसे एक व्यक्तिको चुना। उसकी कमीजकी आस्तीनमें गिने हुए चीलर डाले गये और फिर डी. डी. टी. का पाँच प्रतिशत घोल उस आस्तीनमें छिड़क दिया गया। दूसरे दिन सभी चीलर मरे हुए बाहर निकाले गये। फिर नये स्वस्थ चीलर आस्तीनमें डाले गये, वे भी एक दिनके बाद मरे हुए पाये गये। यह क्रम पूरे ४७ दिनतक चलता रहा। एक बार डी. डी. टी. इस्तेमाल कर देनेपर कमीजको ४७ दिनोंतक चीलरोंके प्रभावसे बचाया जा सकता है।

डी. डी. टी. का घातक असर कीड़ोंपर तत्काल ही नहीं पड़ता; यह बात हमें भूलनी नहीं चाहिये। मान लीजिये कि कमरेमें डी. डी. टी. का घोल छिड़क दिया गया है। अब यदि उसमें आप बैठे हैं तो मच्छर कमरेमें घुसकर डी. डी. टी. के सम्पर्कमें जाकर विपाक्त हो जायगा अवश्य। किन्तु आठ घण्टेतक उसमें यह शक्ति मौजूद रहेगी कि वह आपके रुधिरमें मलेरियाके कीटाणु प्रविष्ट कर सके। प्रयोगोंके सिलसिलेमें यह भलीभाँति साबित हो चुका है कि कीड़े जब डी. डी. टी. के कणोंपर बैठते हैं तो उनके पैरकी त्वचामें डी. डी. टी. का विष प्रविष्ट होकर स्नायुओंपर आक्रमण करता है, शीघ्र ही कीड़ेके स्नायुकेन्द्रको लकवा-सा मार जाता है और कीड़ा मर जाता है। इसीलिए डी. डी. टी. कीड़ोंके अण्डोंको नष्ट करनेमें असमर्थ रहता है किन्तु इसकी घातक शक्ति इतने कालतक बनी रहती है कि इसकी मौजूदगीसे अण्डोंके फूटनेपर जब कीड़े बाहर निकलते हैं तो वे अपने आप नष्ट हो जाते हैं।

विशुद्ध डी. डी. टी. श्वेतरंगके चमकदार कणोंकी शक्लका होता है। यह पानीमें घुलनशील नहीं होता अतः इसे स्वच्छ गन्धरहित



मिट्टीके तेलमें घोलकर इस्तेमाल करते हैं। पाउडरके रूपमें इसका इस्तेमाल मक्खियोंके मारनेके लिए किया जाता है। मिट्टीके तेलके घोलके रूपमें यह खटमल और चीलरोंके मारनेके काममें आता है तथा मच्छरोंके मारनेके लिए गड्डोंके पानीपर छिड़का जाता है। उष्ण कटिबन्धके देशोंसे वायुयान जब अमेरिका या इंग्लैण्ड पहुँचते हैं तो रास्तेमें ही डी. डी. टी. के घोल भरे हुए बमको वायुयानके अन्दर विस्फोट कराकर उष्ण कटिबन्धवाले कीड़ोंको वायुयानमें नष्ट कर डालते हैं।

डी. डी. टी. यदि सही तरीकोंपर इस्तेमाल किया जाय तो मनुष्य तथा अन्य स्तनपायी जीवधारियोंपर इसका बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु असावधानीके कारण यदि ऐसे पदार्थ खा लिये जायँ जिनपर डी. डी. टी. के कण पड़े हुए हों तो मृत्यु भी हो सकती है। अतः कुत्ते और बिल्लीके शरीरके बालकी जूँओंको मारनेके लिए डी. डी. टी. पाउडरका प्रयोग करना खतरसे खाली नहीं है, क्योंकि ये जानवर प्रायः अपने शरीरांगोंको जबानसे चाटते रहते हैं और ऐसा करनेमें इस बातकी सम्भावना हो सकती है कि डी. डी. टी. का विष उनके पेटके अन्दर पहुँचकर उनकी मृत्युका कारण बन जाय।

बाहर खेतमें पौधोंको हानिकारक कीड़ोंके प्रभावसे बचानेके लिए डी. डी. टी. पाउडर या घोलका इस्तेमाल किया जा सकता है, किन्तु ऐसा करना पूर्णतया निरापद नहीं है क्योंकि डी. डी. टी. अनेक लाभप्रद कीड़े-मकोड़ोंको भी नष्ट कर सकता है जो कृषि अथवा बागवानीके लिए नितान्त आवश्यक हैं। इस ढंगसे बिना सोचे-विचारे डी. डी. टी. का प्रयोग यदि किया गया तो सम्भवतः चिड़ियोंपर भी इसका घातक प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि चिड़ियोंको खानेके लिए कीड़े-मकोड़े न मिल सकेंगे, अथवा विषाक्त कीड़े-मकोड़े खाकर चिड़ियाँ स्वयं ही मौतका शिकार बन सकती हैं। अतः अमेरिकन वैज्ञानिकोंने इस सम्बन्धमें विज्ञप्ति निकाली है कि डी. डी. टी. का इस्तेमाल केवल घरोंके अन्दर करना चाहिये।

## विज्ञानके लोकोपदेश वनस्पति-संसार

पेड़-पौधोंकी दुनिया भी कम अचरजसे भरी हुई नहीं है। प्राणि-जगत्की तरह वनस्पति-संसारमें भी छोटे-बड़े, हर प्रकारके सदस्य पाये जाते हैं और ऐसा होना स्वाभाविक भी है, क्योंकि वनस्पति-विज्ञान हमें बताता है कि आजसे बहुत दिनों—लाखों-करोड़ों वर्ष—पहले इस निर्जीव संसारके वक्षस्थलपर समुद्रके किनारे एक अत्यन्त ही नन्हें बबूलेके रूपमें संसारकी सर्वप्रथम चेतनाशील वस्तुका आविर्भाव हुआ। तदुपरान्त प्रकृतिकी विज्ञानशालामें पड़कर इस चेतनाशील बबूलेके दो टुकड़े हो गये—एकके विकासने प्राणिजगत्को जन्म दिया और दूसरेके विकासने वनस्पतिजगत्को। फलस्वरूप जिस प्रकार अकेले बबूलेसे हजारों-सैकड़ों प्रकारके जीव पैदा हो गये, ठीक उसी प्रकार वनस्पतिजगत्में भी उस आदिम चेतनाशील बबूलेसे क्रमशः समयकी प्रगतिके साथ लाखों-करोड़ों किसके नये-नये पेड़-पौधोंकी भी सृष्टि हुई। उदाहरणके लिए, अकेले फूल लगनेवाले पौधोंकी कुल ढाई लाख भिन्न-भिन्न जातियाँ मिलती हैं।

यही कारण है कि पशुजगत् और वृक्षजगत् दोनोंमें बहुत अंशोंमें समानता पायी जाती है—चेतनता दोनोंमें है। ध्यानसे देखनेपर इस कथनकी सत्यता मालूम हो सकती है। प्राणिजगत्के मुख्य कार्य वृक्षोंमें भी देख पड़ते हैं। श्वास लेना, खाद्य-पदार्थको पचाना और निरन्तर वृद्धि तथा सन्तानोत्पादनकी क्रियाएँ आपको प्रत्येक वृक्ष और पौधेमें मिलेंगी। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि चेतनता गुण भी सभी पेड़-पौधोंमें पाया जाता है—अवश्य ही कम और अधिक मात्रामें। लज्जावती पौधेकी चैतन्यशीलतामें किसे सन्देह हो सकता है? उँगलियों-से लज्जावतीकी पत्तियोंको छू दीजिये, बस फौरन ही पत्तियाँ सिकुड़कर मुरझा-सी जाती हैं। कुछ देर उपरान्त मानो यह समझकर कि अवसरकी बला टल गयी होगी, वे पत्तियाँ धीरे-धीरे फिर खुल जाती हैं और उनकी



नसें पूर्ववत् तन जाती हैं ।

चैतन्यशीलताका गुण केवल लजावतीके ही पौधेमें मौजूद नहीं है, वरन् अन्य पौधोंमें भी पाया जाता है । स्वर्गीय आचार्य जगदीशचन्द्र वसुने इस अद्भुत सत्यको संसारके सामने प्रत्यक्ष रूपमें सर्वप्रथम रखा था । अपने विद्युत्-यन्त्रोंकी मददसे आपने यह साबित कर दिखाया कि पेड़-पौधोंमें भी अन्य जीवधारियोंकी भाँति मज्जा और तन्तु रहते हैं, जिनकी वजहसे उनमें शीतसे संकुचन, नशीली चीजोंसे नशा तथा जहरीले पदार्थोंसे उनकी मृत्यु भी हो जाती है । पौधोंके हृदयमें भी धड़कन होती है । सुई चुभानेपर पौधे भी पीड़ाका अनुभव करते हैं—ऐसे अवसरपर पौधे रोते भी हैं । सर जगदीशचन्द्र वसुके अद्भुत विद्युत्-यन्त्रोंकी मददसे ये सभी बातें अंकित की जा सकती हैं ।

चर और अचरका भी भेद समस्त वनस्पति और प्राणिजगत्पर नहीं लागू होता; क्योंकि कितने ही जीवधारी ऐसे हैं जो एकदम निश्चल एक ही स्थानपर जीवनपर्यन्त पड़े रहते हैं और इसके प्रतिकूल कितने ऐसे नन्हें उद्भिज भी होते हैं जो जलमें निरन्तर तैरते रहते हैं—ये केवल खुर्दवीनकी सहायतासे ही देखे जा सकते हैं ।

जहाँतक भोजनका सम्बन्ध है, अनेक पेड़-पौधे तो खूँखार जानवरोंसे भी बाजी मार ले गये हैं । अपने जीवन-निर्वाहके लिए ये पौधे मांसाहार-पर अवलम्बित रहते हैं । प्रायः जीवधारी पेड़-पौधों और घासपर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं । मांसाहारी पौधोंने मानों अपने इन दुश्मनोंसे पुरातन चैरका बदला लेनेके लिए ही मांसको अपना भोजन बनाया है ।

इन मांसाहारी पौधोंके पास न तो पैने दाँत हैं, न मुँह ही, जिसकी मददसे वे अपने शिकारको निगल सकते । फिर भी प्रकृतिने इन्हें विचित्र साधन प्रदान किये हैं, जिनकी सहायतासे ये नन्हें-नन्हें कीड़े-मकोड़ोंको अपने नागपाशमें फँसा लेते हैं ।

आयुकी दृष्टिसे भी पौधोंकी दुनिया कम आश्चर्यजनक नहीं है । कैलीफोर्नियामें कुछ वृक्ष दो हजार वर्षसे भी अधिक आयुके अभी मौजूद

हैं। कदमें तीन सौ फुटसे भी ऊँचे पहुँचते हैं। कैलिफोर्नियाके सबसे विशाल वृक्षका तना ३५ फुट मोटा है। जड़के पास तनेमें सुरंग जैसा रास्ता काटकर मोटरकी सड़क बनायी गयी है। इसके प्रतिकूल नन्हें-नन्हें पौधोंका कद डेढ़ दो इंचतक मुश्किलसे पहुँचता है। फूल लगनेवाले पौधोंमें सबसे छोटा पौधा १।२५ इंच ऊँचा होता है—पानीके ऊपर तालाबमें हरे रंगका यह नन्हा-सा बिन्दु तैरा करता है।

डाक्टर मूलरने आस्ट्रेलियाके एक विशालकाय वृक्षकी ऊँचाई ५५८ फुट आँकी थी। कलकत्तेके बोटैनिकल गार्डनके अन्दरके वटवृक्षका तना १३ फुट मोटा है और लगभग ३ हजार तने उसकी शाखाओंसे नीचेकी ओर लटकते हैं। इस वृक्षकी अवस्था १०० वर्षसे भी ज्यादा है।

इंग्लैण्डका सबसे ऊँचा वृक्ष वेल्शपुलमें है। इसकी ऊँचाई १७८ फुट है—नेपालकी तराईमें सागौनके पेड़ भी लगभग इसी ऊँचाईको पहुँचते हैं। इंग्लैण्डमें अंगूरकी एक लता सन् १८३१ में लगायी गयी थी। ५० वर्षके भीतर फैलकर इसने ४६५१ वर्गगज जगह घेर ली। ढाई सेर वजनके अंगूरके गुच्छे इस लतामें प्रायः लगे हुए पाये गये हैं।

गयामें बोधिवृक्षकी पूजा सहस्रों वर्षसे होती आ रही है। कहा जाता है कि २४५ वर्ष ईसासे पूर्व गयाके बोधिवृक्षकी एक शाखा लंकामें अनुराधपुर स्थानपर लाकर लगायी गयी थी। यह वृक्ष लंकामें अबतक मौजूद है।

बगीचा लगानेकी प्रथा भी प्राचीनकालसे चली आ रही है। सबसे पहला बोटैनिकल गार्डन सिसलीके बादशाह पालेरमोने सन् १३२० ई०में लगवाया था। पेरिसमें १७ वीं शताब्दीमें बढ़िया किस्मके बगीचे लगाये जाते थे। शाही घरानेके लोग अपनी पोशाकमें लगानेके लिए यहींसे फूल मँगाते थे।

भारतमें श्रीनगर (कश्मीर) का शालीमार गार्डन भी विशेष उल्लेखनीय है। कलकत्तेके बोटैनिकल गार्डनकी सैर करने प्रति रविवारको लगभग दस हजार दर्शक जाया करते हैं।



तैरते हुए बगीचे भी तख्तोंके बेड़ेपर अकसर लगाये जाते हैं। मैक्सिको सिटीमें तीन सौ फुट चौड़े लकड़ीके बेड़ेपर मिट्टी और खाद बिछाकर एक तैरता हुआ बगीचा तैयार किया गया है।

ऐसा जान पड़ता है मानों एक नियत सामाजिक विधान पौधोंकी दुनियाके अन्दर भी काम कर रहा हो। हर एक पौधा अपनी अगली सन्तानके लिए खाद्यपदार्थके रूपमें धन-संचय कर लेता है, ठीक उसी तरह जैसे मनुष्योंमें अपनी सन्तानके लिए धन-संचय करनेकी तीव्र लालसा पायी जाती है। एक भी फूल लगनेवाला पौधा ऐसा नहीं है जो बीजके रूपमें खाद्य-सामग्री अपनी सन्तानके लिए एकत्र न करता हो। किन्तु भिन्न-भिन्न किस्मके पौधोंमें यहपैत्रिक सम्पत्ति भी भिन्न-भिन्न मात्रामें पायी जाती है। कुछ तो पूँजीपतियोंकी सन्तानकी तरह ढेरों सम्पत्तिके उत्तराधिकारी होते हैं—जैसे नारियल—तो कुछ गरीब बच्चोंकी तरह बहुत कम सम्पत्ति अपने पितासे पाते हैं। पीपल-राईकी गिनती इन गरीब श्रेणीके पौधोंमें होती है, क्योंकि इनके बीजमें बहुत कम खाद्य सामग्री संचित रहती हैं। बादाम, मटर, सेम आदिके बीजमें प्रचुर मात्रामें खाद्य सामग्री संचित रहती है।

कुछ पौधे, जैसे आलू, शकरकन्द आदि अपनी सम्पत्तिको जमीनमें गाड़कर रखते हैं। यह गढ़ी हुई खाद्य सामग्री अगली फसलके लिए सुरक्षित रहती है। कुछ पौधे स्वयं अपने ही बुरे दिनोंके लिए जमीनके अन्दर सम्पत्ति गाड़कर रखते हैं। गाजर, शलजम और चुकन्दर अपना पौष्टिक पदार्थ जमीनके अन्दर जड़के रूपमें छिपाये रहते हैं ताकि गर्मीकी ऋतुमें जब पत्तियाँ झुलस जाती हैं, तो जमीनके अन्दर इस संचित पौष्टिक पदार्थको आँच न पहुँचे। वर्षाके दिनोंमें ये ही पौधे पुनः अपनी गढ़ी हुई सम्पत्तिका उपभोग करके हरे-भरे बन जाते हैं।

वनस्पति-संसारके बारेमें अनेक नयी बातें अनुसन्धान और रिसर्च द्वारा मालूम की गयी हैं। फलस्वरूप वैज्ञानिकोंने इच्छानुसार नये-नये किस्मके पेड़-पौधे तैयार किये हैं।

भिन्नगुणवाले पौधोंका एक-दूसरेके साथ संयोग कराकर एक तीसरे प्रकारका पौधा तैयार किया जा सकता है। पिछली शताब्दीमें इस वैज्ञानिक तथ्यका पता सबसे पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक मेण्डिलने लगाया था। मेण्डिल एक गिरिजाघरका पादरी था। बागवानीका उसे बहुत शौक था, भिन्न-भिन्न रंगके फूलवाले मटरके पौधोंका एक-दूसरेके साथ संयोग कराकर उसने नयी किस्मके मटरके अनेक पौधे उत्पन्न किये।

अपने प्रयोगोंके आधारपर उसने यह साबित किया कि पौधोंमें सन्तानके अन्दर पिता-माताके गुण एक खास नियमके अनुसार अवतरित होते हैं। उदाहरणके लिए, लम्बे कदकी पीले बीजवाली मटर और ठिंगने कदकी हरे रंगवाली मटरके संयोगसे जो मटर तैयार होगी वह औसत कद और पीले हरे रंगके बीचके रंगकी न होगी, वरन् उसका कद लम्बा और बीजका रंग पीला होगा। किन्तु इसके बाद अगली फसलमें चार किस्मके पौधे उत्पन्न होंगे।—

१—पीले बीज और लम्बे कदवाले;

२—हरे बीज और ठिंगने कदवाले;

३—पीले बीज और ठिंगने कदवाले; और

४—हरे बीज और लम्बे कदवाले।

अब इस प्रयोगमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि नं० ३ और नं० ४—ये दो नये पौधे दो भिन्नगुणवाले पौधोंके संयोगसे पैदा किये गये हैं।

इस नये वैज्ञानिक तथ्यने जीव तथा वनस्पति-विज्ञान-वेत्ताओंके लिए एक सर्वथा नवीन क्षेत्र अनुसन्धानके लिए प्रदान किया। रूसमें विस्तृत पैमानेपर इस प्रकारके प्रयोग किये जा रहे हैं। किसी पौधेकी बढ़िया नस्ल पैदा करनेके पहले उस पौधेकी तमाम किस्में इकट्ठी की जाती हैं, ताकि यह देखा जा सके कि कितने प्रकारके गुण इनमें मौजूद हैं। फिर भी जिन गुणोंको वैज्ञानिक परिवर्द्धित करना चाहता है, उन्हीं गुणवाले पौधोंको वह चुन लेता है और उन्हींके संयोगसे एकके बाद



दूसरी फसल तैयार करके ऐसे पौधे उगा लेता है जिनमें वे ही विशेष गुण प्रकट होते हैं, जिन्हें उसने परिवर्द्धित करना चाहा था। पाँच हजार भिन्न-भिन्न प्रकारके गेहूँ रूसकी प्रयोगशालाके फार्ममें उगाये जाते हैं ताकि रिसर्च-स्कालर जिस किसके पौधेसे चाहें, प्रयोग कर सकें।

रूसके वैज्ञानिकोंने गेहूँके ऐसे पौधे तैयार किये हैं जो पालेको बखूबी सह सकते हैं और उनमें कीड़े नहीं लगते। इस प्रयोगशालामें ऐसे आलू पैदा किये गये हैं जो कड़ीसे कड़ी सर्दों भी सह सकते हैं। ये ही आलूके पौधे रूसके उत्तरी भाग—आर्कटिक प्रान्त—में प्रचुर मात्रामें उगाये जा रहे हैं। आज दिन पूरे आठ हजार भिन्न-भिन्न किसके आलूके पौधे संसारके भिन्न-भिन्न देशोंमें पाये जाते हैं।

## कृषिमें नवीन युगका आविर्भाव

जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें विज्ञानकी एक गहरी छाप आपको देखनेको मिलेगी। यही वजह है कि पेड़-पौधोंकी दुनिया भी विज्ञानके प्रभावसे अछूती नहीं बची। इस क्षेत्रमें भी वैज्ञानिकोंने कमाल कर दिखाया है। कृषि-विज्ञानके आचार्य सर्वथा नवीन प्रकारकी वनस्पतियाँ उत्पन्न कर रहे हैं। इन नये फूलोंके रंग और शङ्ख-सूरत पहलेके फूलोंसे कहीं बढ़-चढ़कर है।

इसके साथ ही वैज्ञानिक इस बातका भी प्रयत्न कर रहा है कि ठण्डे देशके पौधे गरम मुल्कोंमें और गरम देशोंके पौधे ठण्डे प्रान्तोंमें उगाये जा सकें। सोवियट रूस इस दिशामें सब देशोंसे आगे बढ़ा हुआ है। उत्तर रूसके बर्फीले प्रान्तोंमें मूली और पालकके सागकी खेती हो रही है, नये-नये उपनिवेश बसाये जा रहे हैं, नये-नये खेतीके फार्म खोले जा रहे हैं। जहाँ कुछ दिनों पहले वीरान था, आज वहाँ हर तरहकी

चहल-पहल नजर आती है ।

किन्तु वैज्ञानिककी नस-नसमें तो अन्वेषण भरा पड़ा है । वह सन्तुष्ट होकर बैठ रहनेवाला नहीं है । फल तथा शाक-भाजी, बिना मिट्टी और धूपके, प्रयोगशालाके भीतर ही केवल रासायनिक द्रव्योंकी मददसे उत्पन्न की जाने लगी है । जर्मनीके वैज्ञानिकोंने इस सम्बन्धमें बड़े ही चमत्कारपूर्ण आविष्कार किये हैं । वे विशालकाय हौजोंमें गरम पानी डाल देते हैं, फिर उपयुक्त रासायनिक पदार्थ उसमें घोलकर टमाटर या आलूके बीज डाल देते हैं । इस विधिसे उगाये गये टमाटरके पौधे प्रायः इतने ऊँचे हैं कि टमाटर तोड़नेके लिए सीढ़ी लगानेकी जरूरत होती है । प्रति एकड़ इस कृत्रिम खेतमें २१७ टन (१ टन = २७। मन) टमाटरके फल उत्पन्न होते हैं । स्मरण रहे कि बढ़ियासे बढ़िया खाद डालनेपर भी साधारण खेतमें प्रति एकड़ ५ टनसे अधिक टमाटर उत्पन्न नहीं होते । अमेरिकामें कृत्रिम ढंगपर हौजोंमें प्रति एकड़ २५०० बुशल आलू उत्पन्न किये जा रहे हैं, जब कि साधारण खेतोंमें केवल ११५ बुशल आलू उत्पन्न किया जा सकता है । तम्बाकूके पौधे हौजके अन्दर उगाये जानेपर २२ फुटकी ऊँचाईतक पहुँचते हैं । कृत्रिम प्रणालीसे उगाये गये तम्बाकूके पत्ते भी बढ़िया किस्मके उतरते हैं ।

चुकन्दर, गाजर, मूली आदि भी इस नवीन प्रणाली द्वारा उगायी गयी हैं और इनकी उपज भी खूब हुई है । पपीते, मटर और रसभरीके उगानेके लिए भी निरन्तर प्रयोग किये जा रहे हैं । चूँकि इन चीजोंकी खपत भी बाजारमें पर्याप्त मात्रामें होती है, अतः व्यापारियोंने इस नवीन प्रणालीको तुरन्त अपनाया । अमेरिकामें जगह-जगह छोटे पैमानेपर प्रयोगशालाएँ खुल रही हैं । वहाँ बाजारमें भोजनके लिए तरह-तरहके फल और तरकारियाँ मनोकी मिकदारमें रासायनिक तरीकोंसे उत्पन्न की जाने लगी हैं ।

खेतीकी इस नवीन पद्धतिकी ईजादका श्रेय कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटीके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर गेरिकको मिला है । पूरे सात वर्षतक



अन्वेषणके सिलसिलेमें वे प्रयोगोंमें लगे रहे और तब इस अथक परिश्रमका फल उन्हें मिला। सीमेन्टके बने हुए विशालकाय हौजमें आवश्यक रासायनिक पदार्थ डाल दिये जाते हैं, फिर इस हौजमें पानी डाल दिया जाता है। इस पानीका तापक्रम एक खास दर्जेपर बनाये रखना होता है। हौजको तारकी एक जालीसे ढँक देते हैं और इस जालीपर पुआलकी एक पतली तह बिछा दी जाती है। इसी पुआलमें टमाटर या रसभरीके बीज डाल देते हैं। बीजसे जब अँखुए निकल आते हैं तब उनकी बारीक जड़ें नीचेकी ओर बढ़कर पानीमें पहुँच जाती हैं और अपने लिए खाद्य पदार्थ उस पानीमें घुले हुए रासायनिक द्रव्योंसे चूसने लगती हैं। अब पौधे खूब स्वस्थ और नीरोग अवस्थामें बढ़ने लगते हैं।

इस रासायनिक खेतीमें बड़ी सावधानीकी जरूरत होती है। पानीके अन्दर रासायनिक पदार्थों की मात्रा एक निश्चित सीमासे अधिक या कम कभी नहीं होनी चाहिये, इसलिए पाँधा ज्यों-ज्यों बढ़ता है, रासायनिक पदार्थ भी पानीमें ठीक मात्राके अनुसार घोलते रहना पड़ता है। इस मामलेमें थोड़ी भी असावधानी पौधेके लिए घातक सिद्ध हो सकती है। लगभग दस भिन्न-भिन्न रासायनिक मसाले भिन्न-भिन्न अनुपातमें घोले जाते हैं। इनकी मिकदार पौधेकी किस्म, जलवायु और मौसमपर निर्भर होती है। इस हौजमें थोड़ा-सा हलका गन्धकका तेजाब भी डालते हैं। इन रासायनिक पदार्थोंके नाम तथा उनके अनुपात साधारण जनताको नहीं मालूम हैं। डाक्टर गेरिक तथा उनके साथियोंने इन्हें गुप्त रखा है।

डा० गेरिकने स्वयं टमाटरका एक कृत्रिम बगीचा पानीके हौजमें लगा रखा है। पुआलकी जगह लकड़ीका बुरादा वह इस्तेमालमें ला रहे हैं। कहते हैं, इस बगीचेसे उन्हें खूब मुनाफा हो रहा है। बड़े पैमानेपर इस ढंगसे खेती करनेमें साधारण रीतिकी अपेक्षा खर्च ज्यादा नहीं पड़ता। अभी पिछले साल कैलीफोर्नियामें कृत्रिम ढंगपर उपजाये गये टमाटर और आलू मामूली खेतसे उत्पन्न हुए टमाटर-आलूकी अपेक्षा

सस्ते दामोंमें बिके ।

वैज्ञानिकोंका खयाल है कि इस नवीन पद्धतिसे अभी फलों और तरकारियोंकी ही खेती की जा सकती है । अन्य पौधोंके उगानेका प्रयत्न भी प्रयोगशालाओंमें किया जा रहा है । सम्भव है, शीघ्र ही गेहूँ, चना, अरहर आदि भी हम पानीके हौजमें उगा सकें और तब संसारके अनेक भाग, जहाँकी जमीन इस काबिल नहीं है कि वहाँपर अनाज उग सके; इस कृत्रिम ढंगकी शरण लेंगे । पहाड़ी प्रान्तोंमें, रेगिस्तानोंमें और रेल, जहाजोंमें भी छोटे-बड़े हौज लगे रहेंगे, जब जी चाहा ताजे फल तोड़ लिये । डिब्बेमें वन्द टमाटर और सेबके मुरब्बेपर अब समुद्रके यात्रियोंको आश्रित न रहना पड़ेगा ।

दैवी आपदाओंसे भी वैज्ञानिक अब घबराता नहीं । ऐसी हालतमें वह अब हाथपर हाथ धरे चुप बैठा नहीं रहता । कैलीफोर्नियाके एक प्रमुख वैज्ञानिकने हालमें एक मशीन तैयार की है जो नीबू, नारंगी और अन्य छोटे-छोटे पौधोंकी पालेसे रक्षा करती है । बगीचेके बीचमें तेलके इंजिनसे यह मशीन परिचालित की जाती है । लम्बे-लम्बे पाइप इस इंजिनमेंसे निकलकर समूचे बगीचेमें पेड़ोंके नीचे फैले रहते हैं । वृक्षोंकी कतारके बीच मोटा पाइप जमीनपर बिछाया रहता है और इस पाइपसे पतली नलियाँ प्रत्येक वृक्षतक पहुँचती हैं । पेड़ोंके नीचे इन पाइपोंमें सुराख बना दिये गये हैं । जिस वक्त इंजिन चालू होता है, गरम हवाके झोंके वेगके साथ इन सुराखोंसे निकलते हैं जो वृक्षकी डालियोंमेंसे होकर ऊपरतक पहुँचते हैं । इस विधिसे इन वृक्षोंको खूब गरम हवा पहुँचायी जा सकती है । पाइपसे निकली हुई हवाका तापक्रम ४०० डिग्री फ़ारन-हाइटतक साधारणतया पहुँचता है । प्रति मिनट लगभग ७००० घन फुट हवा बगीचेमें पहुँचायी जा सकती है । जिस समय सर्दी अधिक पड़ने लगती है और पाला पड़नेकी सम्भावना होती है, यह इंजिन चालू कर दिया जाता है और गरम हवाकी फुहारें पेड़की टहनियोंमेंसे होकर निकलने लगती हैं । इस तरह पालेसे बगीचेकी रक्षा करनेमें लोग समर्थ



होते हैं। बराबर १० घण्टेतक इंजिन चलानेमें करीब आठ रुपया खर्च पड़ता है। इस पद्धतिसे वृक्षोंकी पालेसे रक्षा करनेमें खर्च कम होनेके कारण ऐसी आशा की जाती है कि शीघ्र ही अमेरिकाके सभी बगीचोंमें इस तरहके पाइप लग जायँगे।

फल और पौधोंके सम्बन्धमें तरह-तरहके नये आविष्कार नित्य ही होते जा रहे हैं। फलोंके गुणकी महत्ता सम्य संसार पहचानने लगा है। हमारे भोजनमें फलोंका इस्तेमाल इसलिए बढ़ रहा है। प्रयोगशालाओंमें फलोंको महीनों, वर्षोंतक ताजा बनाये रखनेकी तरकीब ढूँढ़ी जा रही है। स्वयं हमारे ही देशमें मीठे आम हजारों लाखोंकी संख्यामें सड़-गल जाते हैं। यदि हम इन्हें किसी तरकीबसे सुरक्षित रख सकते तो राष्ट्रकी सम्पत्ति बचती और साथ-ही-साथ जाड़ेके दिनोंमें भी ये आम हमें खाने-को मिलते।

दक्षिण अफ्रीकाके फल-विशेषज्ञ डा० जे ने १५ वर्षतक लगातार इस समस्याको हल करनेके लिए तरह-तरहके प्रयोग किये हैं। उन्होंने एक ऐसा रासायनिक मिश्रण तैयार किया है जिसकी भापसे फल बरसों-तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं। एक छटाँक मिश्रण ५ टन फलोंके लिए काफी होगा। इस तरह ११ महीनोंतक फलोंको सुरक्षित बनाये रखनेमें प्रति टन १२ आने पैसेका खर्च है। मामूली बन्द कमरमें ये फल टोकरीयोंमें रखे जायँगे और उसी कमरेमें उक्त रासायनिक पदार्थ भी एक छोटेसे ट्यूबमें रख दिया जायगा।

इस विचित्र आविष्कारमें यह भी गुण है कि टण्डूके बर्फीले प्रान्तोंसे लेकर राजपुतानेकी तपती भूमिमें सब जगह यह एक-सा कारगर है। टेम्परेचर (तापमान) का असर इसपर बिल्कुल नहीं पड़ता। इस बातकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं कि आधुनिक प्रणालीके अनुसार बर्फकी गाड़ीमें फल रखे जायँ।

डा० जे का कहना है कि इस नयी रीतिमें कुछ अधिक झंझट नहीं है—एक छोटा बच्चा भी इस यन्त्रका परिचालन कर सकता है। इसमें

किसी तरहका खतरा नहीं। केवल फल ही नहीं, वरन् अण्डे भी आठ-नौ महीनेतक ताजे रखे जा सकते हैं। टमाटर, अंगूर, सेब, नासपाती वगैरह सभी फल सालभरतक नहीं बिगड़ते। शीघ्र ही थर्मस बोतलकी तरह हमारे घरोंमें इस रासायनिक पदार्थके डब्बे प्रयोगमें आने लगेंगे। अचार और मुरब्बेके रूपमें फलोंको संचित करनेकी कोई बात भी न सोचेगा। हर मौसममें हर तरहके फल खानेको मिलेंगे—एकदम ताजे, मानो डालसे तोड़कर फौरन लाये गये हों।

## मांसाहारी पौधे

हममेंसे अधिकांश लोग यह बात भूल जाते हैं, और शायद बहुतसे लोग यह जानते भी नहीं कि सारा प्राणिजगत् अपने भरपपोषणके लिए वनस्पतियोंपर आश्रित है, क्योंकि वनस्पतियोंमें ही वह शक्ति मौजूद है जिसकी मददसे वे फास्फोरस, चूना, ताँबा और लोहा जैसी चीजोंको ऐसे खाद्य-पदार्थोंके रूपमें परिवर्तित करती हैं जिन्हें जीवधारी खाकर अपने शरीरमें जज्ब कर सकते हैं। नन्हें-नन्हें पौधे, जो खुर्दबीनसे भी कठिनतासे देखे जा सकते हैं, उसी आकारके जीवजन्तुओंके लिए खाद्य-सामग्रीका काम देते हैं।

यह सही है कि शेर, चींते आदि हिंसक जीवोंका जीवन-निर्वाह मांसाहारपर होता है, किन्तु ये भी अपनी शक्तिके लिए वनस्पतियोंपर ही निर्भर हैं, क्योंकि जिन जीवोंका ये शिकार करते हैं वे स्वयं वनस्पतियोंपर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। तरकारीके खेतमें आप पत्तोंपर अनेक तरहके कीड़े-मकोड़ोंको डंठलों तथा फलों और पत्तोंको खाते हुए पायेंगे। लम्बी घासको चौपाये खाते हैं और ऊँचे पेड़-पौधोंपर हाथी, ऊँट जैसे जानवर अपनी जिन्दगी बसर करते हैं। पेड़-पौधोंके



सहारे सारा प्राणिजगत् टिका हुआ है ।

किन्तु साधारण नियमके प्रतिकूल कुछ पौधोंने प्राणिजत्पर ही आक्रमण करना आरम्भ कर दिया है । जिन्दा शिकारको फँसाकर ये उसका प्राण हर लेते हैं और फिर उसका मांस भक्षण करते हैं । इन मांसाहारी पौधों और अन्य वनस्पतियोंमें प्रकट रूपसे कोई विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता । मांस-भक्षणके लिए इन पौधोंके पास मुँह या पैने दाँत नहीं हैं और न मजबूत पंजे ही । किन्तु प्रकृतिके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है । प्रकृतिके करिश्मोंको देखकर वैज्ञानिकोंको नित्य ही आश्चर्यचकित होना पड़ता है ।

शीतोष्ण कटिबन्धमें तालाबोंके किनारे तथा दलदलोंमें सनड्यू नामके पौधे पाये जाते हैं । ये मांसाहारी पौधोंकी जातिके होते हैं । सनड्यूके पत्तेको यदि आप खुर्दवीनसे गौरके साथ देखें तो आप पायेंगे कि पत्तेकी सतहपर तमाम जगह लम्बे-लम्बे बाल-सदृश रेशे ऊपरकी ओर निकले हुए हैं । प्रत्येक रेशेके सिरेपर लसदार पदार्थकी बूँदें नजर आती हैं; ये बूँदें ओसकी बूँदोंकी तरह चमकती हैं । देखनेपर ऐसा लगता है मानो पत्तोंमें किसीने बहुत-सी आलपीने गड़ा दी हों—हाशियेपरके रेशे विशेष लम्बे होते हैं । एक पत्तेपर लगभग २०० से ऊपर रेशे रहते हैं । वास्तवमें ये रेशे उस मांसाहारी पौधोंके सैकड़ों हाथ हैं जिनकी सहायतासे ये पौधे अपने शिकारको पकड़ते हैं । ये पत्ते मक्खियाँ तथा छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़ोंको पकड़नेके लिए चूहेदानीका काम करते हैं ।

मक्खियाँ या अन्य कीड़े-मकोड़े उस चमकते हुए लसदार पदार्थको शहद समझकर रेशोंपर आकर बैठते हैं—बैठते ही उनके अंगमें यह लसीला पदार्थ चिपक जाता है । वह मकोड़ा जितना ज्यादा छटपटाता है, उतनी अधिक उसके शरीरमें यह चीज लिपटती जाती है । इसी वीच ये रेशे एक-एक करके उस बेचारे शिकारको चारों ओरसे घेर लेते हैं और फिर उसे अच्छी तरह जकड़ देते हैं । बेबस शिकार इस कैदमें

घुट-घुटकर मर जाता है। सनड्यूका शिकार फँसानेका तरीका बहुत कुछ मकड़ेके जालकी तरह है। मकड़ा अपने शिकारको चीते-शेरकी तरह चीरता-फाड़ता नहीं। इसी तरह सनड्यू भी अपने शिकारका अंग-भंग नहीं करता किन्तु शिकारको अपने काममें लानेके तरीके इन दोनोंके आपसमें भिन्न हैं। मकड़ा जालमें फँसी हुई मक्खीको धीरे-धीरे चूसता है, मक्खीके मृत शरीरके खाद्य-पदार्थ मकड़ेके पेटके अन्दर जाकर हजम हो जाते हैं, किन्तु मांसाहारी पौधा अपने शिकारको बाहर ही पचा डालता है और इस तरह उसके पौष्टिक तत्त्वको पत्तोंकी नसों द्वारा वह ज्वब कर लेता है।

शिकार जब रेशोंके जालमें फँसता है, तो थोड़ी देर बाद रेशोंमेंसे तेजाबकी तरह एक द्रव-पदार्थ बाहर निकलता है, जालमें फँसी हुई मक्खीके शरीरके नरम अंगोंको यह द्रव-पदार्थ गला डालता है। फिर यह गला हुआ पदार्थ उस पौधेमें ज्वब हो जाता है, पौधेका भरण-पोषण इसी गले हुए पदार्थके आधारपर होता है। मक्खीके शरीरका वह भाग जो पचने योग्य नहीं होता—जैसे आँखें, पैर, पंख और शरीरकी ठठरी—उसी जालमें कुछ दिनोंतक पड़ा रहता है, फिर रेशोंका बन्धन ढीला होनेपर हवाके झोंकेसे वह उड़कर बाहर जा गिरता है।

ऐसा जान पड़ता है मानों मांसाहारी पौधोंके अन्दर चैतन्यशीलता और ज्ञान भी मौजूद है। इसके रेशे केवल ऐसी चीजोंको अपने जालमें पकड़ते हैं जिनमें मांसका अंश विद्यमान हो। नन्हें कीड़े-मकोड़े या मांसका टुकड़ा अथवा अंडेको यदि पत्तेपर डाला जाय तो रेशे स्वयं उसे घेरकर अपने जालके अन्दर बन्द कर लेते हैं। किन्तु तिनके, पानीकी बूँदें या धातुओंके नन्हें टुकड़े, कागज या इस प्रकारकी चीजोंको पत्तेपर डालनेसे रेशोंमें किसी प्रकारकी हरकत नहीं होती। पौधा इस बातको जानता है कि यह चीज उसके कामकी नहीं, अतः उसके पीछे अपनी शक्ति बरबाद न करनी चाहिये।

रेशेका यह जाल जबर्दस्त नागपाश है। ये रेशे इतमीनानके साथ



एक-एक करके अपने शिकारको जकड़ लेते हैं। रेशेके सिरपर लगा हुआ लसदार पदार्थ मक्खीको मजबूतीके साथ पकड़ लेता है। इस नागपाशके बन्धनसे शिकार किसी प्रकार भाग नहीं सकता। पत्तेपर मक्खीके बैठनेके कई मिनट उपरान्त रेशोंमें हरकत पैदा होती है, धीरे-धीरे वे शिकारके चारों तरफ लिपट जाते हैं। शिकारको जकड़नेके लिए केवल वे ही रेशे काम आते हैं जो उसके निकट होते हैं, शेष रेशे ज्योंके त्यों बिना किसी हरकतके खड़े रहते हैं। पत्तेपर यदि इधर-उधर दो जगहोंपर कच्चे मांसका टुकड़ा रख दिया जाय, तो इन २०० रेशोंमें आधे एक टुकड़ेको जकड़ देंगे और आधे दूसरे टुकड़ेको।

पौधे जब शिकारकी खाद्य-सामग्रीको अच्छी तरह जज्व कर चुकते हैं तब ये रेशे शिकारकी हड्डी-पसलीको छोड़कर पुनः खड़े हो जाते हैं और लगभग दो दिनतक इन रेशोंमेंसे लसदार पदार्थ बाहर नहीं निकलता क्योंकि इन दिनों पौधेका पेट भरा रहता है, खुराककी उसे आवश्यकता नहीं रहती।

किन्तु इन पौधोंको दो-तीन दिन उपरान्त जब फिर भूख लगती है तो ये रेशे लसदार पदार्थका प्रवाह पूर्ववत् जारी कर देते हैं और नये शिकारकी ताकमें लग जाते हैं—जैसे कम्पेपर चिड़ियाको फँसाना हो। मक्खियाँ, चींटियाँ, तितलियाँ सभी इस नागपाशके बन्धनमें फँसकर अपनी जान गँवाती हैं। इन्हीं लम्बे रेशोंकी सहायतासे पौधा शिकारके मृत शरीरसे अपने लिए उपयुक्त खाद्य-सामग्रीको चूसता है।

रेशेकी चैतन्यशीलता बड़ी प्रबल होती है। यदि मनुष्यके सिरके बालका ८।१००० इञ्च लम्बा टुकड़ा सनड्यूके पत्तेपर डाल दिया जाय, तो भी उसके रेशोंमें हरकत होगी और उनके नागपाशमें यह जकड़ जायगा। बालके इस नन्हेंसे टुकड़ेका वजन जौके दानेका हजारवाँ भाग होता है। हमारे शरीरके तमाम अंगोंमें हमारी जिह्वा सबसे अधिक चैतन्यशील है, किन्तु यदि आपकी जबानपर इतना छोटा बालका टुकड़ा रख दिया जाय तो आपको पता भी नहीं चलेगा कि बालका टुकड़ा

आपकी जवानपर मौजूद है ।

ये मांसाहारी पौधे कुछ खादलोलुपतावश होकर मांस-भक्षण नहीं करते, इनका एकमात्र आहार ही मांसयुक्त पदार्थ है । यदि ये मांस भक्षण न करें तो भूखों मर जायँ । विकासवादके प्रवर्तक सुप्रसिद्ध जीववैज्ञानिक स्वर्गीय डार्विनने इस सम्बन्धमें अनेक प्रयोग भी किये थे । उसने लोहेकी जालीके भीतर इन पौधोंको बन्द कर दिया और उन्हें दो भागोंमें बाँट दिया । कुछ पौधोंको तो पानी, हवा और मिट्टीके अतिरिक्त अन्य कोई भोजन न मिला और बाकीको डार्विनने मांसके टुकड़े खानेके लिए दिये । प्रयोग समाप्त होनेपर देखा गया कि जिन पौधोंको मांसका टुकड़ा मिला था वे ज्यादा हरे-भरे और स्वस्थ थे तथा जिन्हें केवल हवा, पानी और मिट्टीपर बसर करना पड़ा था वे सुस्त, पीले और मुर्दार पड़ गये थे ।

सनढ्यूकी जड़ें कमजोर और पतली होती हैं, क्योंकि इन जड़ोंकी सहायतासे अन्य पौधोंकी भाँति वे मिट्टीके अन्दरसे अपने लिए खाद्य-पदार्थ नहीं खींचते । ये जड़ें मिट्टीके अन्दरसे केवल नमीको खींचती हैं । शेष खाद्य पदार्थ पत्तोंके रेशेके जरिये मांससे मिलता रहता है । सनढ्यूके अतिरिक्त दल-दलवाले स्थानोंमें अन्य प्रकारके भी मांसाहारी पौधे मिलते हैं । शिकारको फँसानेके तरीके भी इनके भिन्न-भिन्न हुआ करते हैं । बटर-वर्ट पौधेकी पत्तियाँ पीले रंगकी होती हैं । इसका किनारा थालीकी बारीकी तरह मुड़ा होता है । इस पत्तेकी सतहपर भीतरसे खमीर जैसे गुणवाला एक तरल लसदार पदार्थ निकला करता है । इस लसदार पदार्थमें फँसकर नन्हा-सा शिकार पत्तेपर चिपक जाता है । फिर उसी लसदार रससे घुलकर पत्तेकी नसों द्वारा उसका मांस पौधेके अन्दर जज्ब हो जाता है । इस पत्तेको यदि दूधमें डाल दिया जाय तो दूध फौरन दही बन जायगा ।

एक तीसरे प्रकारका पौधा ब्लैडर-वर्ट तो अपना शिकार पकड़नेके लिए एक अनोखी तरकीब इस्तेमाल करता है । लम्बी-लम्बी नुकीली



पत्तियोंके बीच इस पौधेकी टहनियोंमें सैकड़ों थैले लगे रहते हैं। थैलेके द्वारपर इस तरहके दरवाजे लगे रहते हैं जो केवल भीतरकी ओर खुल सकते हैं। वैसे तो यह थैला एकदम चिपका रहता है और साधारणतः देखनेपर यह नहीं जान पड़ता कि थैलेमें दरवाजा भी है, किन्तु जब कोई नन्हा-सा कीड़ा-मकोड़ा इस थैलेके प्रवेश-द्वारपर रेंगता हुआ पहुँच जाता है, तो पौधेकी नसें यकायक जागरूक हो जाती हैं। दरवाजा एकदम खुल जाता है और थैला भी फूल उठता है और वह प्रवेश-द्वारके रास्तेसे बाहरकी चीजोंको पकड़ लेता है। ज्यों ही बेचारा शिकार थैलेके अन्दर पहुँचा कि थैलेका प्रवेश-द्वार बन्द हो जाता है। चूँकि दरवाजा बाहरको खुल नहीं सकता, अतः शिकार उस थैलेके भीतर मृत्युपर्यन्त बन्दी बन जाता है।

ब्लैडर-वर्टकी एक बड़ी जातिका पौधा उष्ण कटिबन्ध प्रदेशमें भी पाया जाता है। इस पौधेके थैले प्रायः १८ इञ्च लम्बे होते हैं और इसके प्रवेश-द्वारपर लसदार पदार्थ इतना चिकना होता है कि कीड़े-मकोड़े फिसलकर बरबस थैलेके अन्दर आ गिरते हैं। थैलेके अन्दर भी यह तरल पदार्थ बहुत अधिक मात्रामें मौजूद रहता है। ये कीड़े-मकोड़े इस द्रव पदार्थमें डूबकर मर जाते हैं। किसी-किसी थैलेमें तो इतनी काफी मिकदारमें यह द्रव पदार्थ पाया गया है कि बटेर जैसी छोटी चिड़िया भी उसमें डूब जाय। प्रकृतिके करिश्मोंका कहीं अन्त नहीं !

## विटैमिन क्या है ?

आजकल सर्वत्र विटैमिन (पोषकतत्त्व) की चर्चा सुनाई दे रही है। डाक्टर भी विटैमिनके ही राग अलापते हैं। यदि आप दुबले-पतले हैं तो विटैमिनकी कमीसे और यदि आप बहुत ज्यादा मोटे हैं तो विटैमिनके

ही अभावसे । गरज यह कि आपकी हर बीमारीका मूल कारण किसी न किसी विटैमिनकी कमी ही बतायी जाती है । लेकिन सच तो यह है कि विटैमिनके बारेमें आधुनिक चिकित्साशास्त्रकी जानकारी बहुत ही थोड़ी है । अतः साधारण जनताको भी विटैमिनके बारेमें सही जानकारी हासिल नहीं है । जनताके दिमागमें विटैमिन सम्बन्धी अनेक गलत धारणाएँ समायी हुई हैं । यहाँ हम विटैमिन सम्बन्धी नूतनतम अन्वेषणोंका जिक्र करेंगे ।

आधुनिक जगत्के लिए निस्सन्देह विटैमिन एक नयी चीज है । लगभग ४० वर्ष हुए एक अँग्रेज रसायनशास्त्री सर हापकिन्सने सर्व-प्रथम इस पदार्थका पता लगाया था । विटैमिन खाद्य पदार्थोंका सार-तत्त्व है और जीवधारियोंके पालन-पोषणमें इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है । यदि खाद्य-पदार्थोंसे विटैमिनका अंश निकाल दिया जाय तो इनपर निर्भर रहनेवाले जीवधारी शीघ्र ही दुर्बल होकर मृत्युके शिकार बन जाते हैं और तरह-तरहकी बीमारियाँ भी उन्हें घेर लेती हैं ।

विटैमिनका इतिहास भी कम मनोरंजक नहीं है । कुछ दिनों पहले जब इंजिनसे चलनेवाले तेज जहाज नहीं बन पाये थे, नाविक प्रायः महीनों समुद्रयात्रामें बिता देते थे । अतः महीनेभरके लिए वे अपनी खाद्य-सामग्री अपने जहाजपर लाद लेते थे, किन्तु हरे फल, शाक, इत्यादि वे अपने साथ नहीं ले जाते थे, क्योंकि ये दो-तीन दिनसे ज्यादा समयतक सुरक्षित नहीं रखे जा सकते थे । इन लम्बी यात्राओंमें यात्रीगण प्रायः स्कर्वी नामक बीमारीसे पीड़ित हो जाते—इस बीमारीमें शरीरके अवयवोंसे अनायास ही रुधिर निकला करता है । मसूढ़ेमें तनिक-सी चोट लगी तो सेरों खून बाहर निकल आता है ।

इस बीमारीका जब अध्ययन किया गया तो पाया गया कि नीबू तथा अन्य ताजे फल खिलानेसे यह बीमारी शीघ्र दूर हो जाती है । स्वयं इस रोगके शिकार नाविक ही जब किसी बन्दरगाहपर दो-चार रोजके लिए टिक जाते तो हरे फल और शाक मिलनेपर उनकी यह



द्विचित्र बीमारी अपने आप दूर हो जाती। स्वभावतः डाक्टर लोग इस निष्कर्षपर पहुँचे कि हरे फलों और शाक्योंमें अवश्य ही कुछ विशेष पोषक-पदार्थ होते हैं जो अन्य खाद्य-पदार्थोंमें नहीं पाये जाते। इन्हीं पोषक-पदार्थोंकी कमीसे स्कर्वीकी भयानक बीमारी उत्पन्न हो जाती है इसी पोषक-पदार्थको विटैमिनका नाम दिया गया। 'विटैमिन' एक अंग्रेजी शब्द है। जिसके माने होते हैं 'पोषकतत्त्व'।

विटैमिनकी तलाश अन्य खाद्य पदार्थोंमें की गयी है और इस सम्बन्धमें अनेक अनुसन्धान किये गये कि भिन्न-भिन्न प्रकारके विटैमिनका हमारे स्वास्थ्यपर क्या प्रभाव पड़ता है।

कुछ साल पहले जापानी सेनामें यकायक एक भयानक बीमारी फैली। इस बीमारीमें रोगीकी देह फूल जाती थी और थोड़े ही दिनोंमें रोगी मृत्युका आलिङ्गन करनेपर मजबूर होता। जापान सरकारको बड़ी परेशानी हुई। सैकड़ों रसायनज्ञोंने इस बीमारीका मूल कारण ढूँढ़नेके लिए अनुसन्धान करना शुरू किया। अन्तमें पता चला कि यह बीमारी (बेरीबेरी) पालिश किये हुए बारीक चावलके खानेसे हुई है। बस फौरन ऐसे चावलका इस्तेमाल बन्द कर दिया गया और बीमारी भी साथ ही लुप्त हो गयी। भिन्न प्रकारके चावलोंकी परीक्षा प्रयोगशालाके अन्दर कबूतरोंकी सहायतासे की गयी। देखा गया कि जब कबूतरोंको पालिश किया हुआ उम्दा चावल दिया जाता, तो उन्हें नसोंकी कमजोरी-की बीमारी हो जाती और वे बेचारे उड़नेसे भी मजबूर हो जाते। उनका हृदय भी कमजोर हो जाता। किन्तु बिना कुटा-छना चावल खानेपर वे ही कबूतर पुनः स्वास्थ्य लाभ कर लेते। अतः लोगोंने सोचा कि चावलोंके कणमें अवश्य ऐसा कोई पदार्थ है जिसकी कमीसे बेरीबेरी रोग उत्पन्न हो जाता है।

हमारे देशमें भी बङ्गालियोंको प्रायः बेरीबेरीका रोग सताता है; किन्तु भोजनमें सावधानी बरतनेसे वे भी अब इस रोगसे बच सकते हैं। मशीनका पालिश किया हुआ चावल बेरीबेरी रोगका जन्मदाता है,

इस बातको बङ्गाली लोग भी अब समझने लग गये हैं ।

कई प्रकारके विटैमिन वैज्ञानिकोंने ढूँढ़ निकाले हैं और हर श्रेणीके विटैमिनके गुण भी भिन्न होते हैं । विटैमिनोंका विस्तृत विश्लेषण भी किया गया है । ये पौधोंसे तैयार होते हैं । मछली तथा अण्डोंमें पाये जानेवाले विटैमिन भी वास्तवमें उन पौधोंके फलसे तैयार हुए होते हैं जिन्हें मछलियाँ तथा मुर्गियाँ आदि खाती हैं । इस तरह हम देखते हैं कि विटैमिन प्राप्त करनेके लिए सबसे उत्तम खाद्य पदार्थ फल तथा शाक आदि हैं, क्योंकि इनसे हमें विटैमिन सीधे प्राप्त होता है । किन्तु मांसाहार करनेमें हमें मांसमें जज्व हुआ विटैमिन ही मिल सकता है ।

भिन्न-भिन्न प्रकारके विटैमिनोंका नाम अंग्रेजी अक्षरोंके अनुसार रखा गया है । विटैमिन ए मक्खन, दूध, अण्डा, गाजर, करमकटला तथा अन्य हरी तरकारियों और चर्बीमें पाया जाता है । इसकी जरूरत बच्चोंकी वाढ़के लिए तथा अन्य बीमारियोंके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिए पड़ती है । डाक्टरोंका खयाल है कि सर्दी-जुकामसे बचनेके लिए भी विटैमिन ए-की आवश्यकता होती है । यदि दूध, मक्खन आदिका सेवन प्रचुरतासे किया जाय तो बार-बार होनेवाले जुकामसे हम बच सकते हैं । विटैमिन ए रोग-कीटोणुओंके आक्रमणसे हमारी रक्षा करता है और इसके सेवनसे हम रतौंधी आदि आँखकी बीमारियोंसे भी बच सकते हैं ।

विटैमिन 'बी' चावलके कणमें तथा गेहूँके चोकरमें बहुतायतसे पाया जाता है । इसके अभावसे नसोंमें कमजोरी आ जाती है तथा बेरीबेरी रोगका आक्रमण होता है । हमारे शरीरके स्नायुओंका स्वास्थ्य विटैमिन बी-की मात्रापर निर्भर करता है—इसकी कमीसे हमारी स्नायुशक्ति क्षीण हो जाती है और यदि खाद्य-पदार्थोंमें जल्दी ही इस विटैमिनका प्रचुर मात्रामें समावेश न किया गया तो स्वास्थ्य एकदम चौपट हो जाता है—'नर्वस ब्रेकडाउन' हो जाता है तथा मांसपेशियोंमें लकवा मारा जाता है और धीरे-धीरे तमाम शरीरमें लकवेका असर हो जाता है । यही नहीं, विटैमिन बी-का हमारी पाचन-शक्तिसे भी गहरा



सम्बन्ध है। इसकी कमीसे हमारी पाचन-शक्ति एकदम निर्वल हो जाती है। उचित मात्रासे तनिक भी कम यदि विटैमिन बी हमारे भोजनमें रहा तो हमारी पाचन-शक्ति जवाब दे देती है। आजकल भोजनमें बारीक चावल और मशीनका पिसा पतला झाटा लोग अधिकतर इस्तेमाल करते हैं—ये दोनों ही चीजें विटैमिन बी-से रहित होती हैं। इसी कारण हर तरफ आपको पाचन-शक्तिके रोगी देखनेको मिलते हैं।

विटैमिन-सी मुख्यतः ताजे फलों तथा शाक-सब्जीमें पाया जाता है। नींबू, नारंगी, टमाटरसे यह विटैमिन हमें पर्याप्त मात्रामें मिल सकता है। विटैमिन-सी हमारी त्वचाको स्वस्थ बनाये रखता है—इसकी कमी त्वचाको कमजोर बना देती है, जगह-जगह त्वचा फट जाती है और शरीरके अन्दरसे रुधिर फूट-फूटकर बाहर निकलने लगता है। त्वचाकी इस बीमारीको स्कर्वी कहते हैं। हम ऊपर जिक्र कर आये हैं कि स्कर्वीका आक्रमण अधिकांश जहाजके यात्रियोंको हुआ करता था। छोटे बच्चे, जिनका पालन-पोषण प्रायः गायके दूधपर होता है, विटैमिन-सी-की कमी साधारणतः पूरी नहीं कर पाते। अतः उन्हें ताजे फलोंका रस देना भी जरूरी है। दिमागी काम करनेवालोंके लिए भी विटैमिन सी-का प्रयोग अत्यावश्यक है।

विटैमिन डी दूध, अण्डे और मक्खनमें विशेष रूपसे पाया जाता है और कुछ अंशोंमें हरी तरकारियोंमें भी पाया जाता है। जब धूप मनुष्य शरीरकी त्वचापर पड़ती है, तो धूपकी अल्ट्रावायलेट किरणें शरीरके भीतरके खाल-पदार्थोंमें रासायनिक क्रियाएँ उत्पन्न करके विटैमिन डी-का निर्माण करती हैं। कुछ दिन पहले लन्दनकी तंग गलियोंमें रहनेवाले गरीब घरोंमें रिकेटकी बीमारी फैली हुई थी—यह बच्चोंकी बीमारी थी। इस बीमारीमें बच्चोंकी आकृति बैडौल हो जाती है, हाथ-पाँव तो दुबले-पतले किन्तु पेट मटका बन जाता है और कूबड़ भी उठ जाता है। शरीरकी हड्डियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। वैज्ञानिक बड़े हैरान थे कि इस बीमारीका कारण क्या है। अनुसन्धान करनेके बाद लोग इस निष्कर्षपर

पहुँचे कि इन गरीब बच्चोंको न तो विटैमिन-डी-युक्त पदार्थ खानेको मिलते थे और न उनके घरोंमें धूप ही प्रवेश कर पाती थी अतः इन बच्चोंको विटैमिन-डी-युक्त पदार्थ खानेको दिया जाने लगा तथा खुले हुए मकान इनके रहनेके लिए बनाये गये—इस प्रकार रिकेटसे उनकी रक्षा की जा सकी ।

प्रयोगशालामें कृत्रिम ढंगसे एक रासायनिक पदार्थ 'एर्गास्ट्रल' तैयार किया गया है । उसमें काडलिबर आयलकी अपेक्षा एक लाख गुना अधिक विटैमिन-डी पाया जाता है । रिकेटकी भयानक बीमारीमें एर्गास्ट्रल थोड़ी मात्रामें यदि रोगी बालकको दिया जाय तो वह शीघ्र आरोग्य लाभ कर सकता है ।

शरीरके अन्दर विटैमिन-डीके न पहुँचनेपर हड्डियोंमें चूनेका निर्माण नहीं हो पाता—हड्डीका तपेदिक रोगीको धर दबाता है । यूरोपके देशोंमें गरीब जनताको विशेष रूपसे विटैमिन-डी प्रविष्ट कराया हुआ दूध पीनेको दिया जाता है, ताकि इस विटैमिनकी कमी शीघ्र पूरी की जा सके ।

विटैमिन ई गेहूँके अंकुरके तेलमें पाया जाता है । चोकरमें भी विटैमिन ई थोड़ी-बहुत मात्रामें मौजूद है । यह विटैमिन सन्तानोत्पत्तिके लिए बहुत ही आवश्यक है । इसकी कमीसे वन्ध्यापनका रोग हो जाता है या यदि गर्भ रह भी गया तो शीघ्र ही गर्भपात हो जानेकी आशंका रहती है ।

विटैमिनकी अन्य और भी किस्में होती हैं किन्तु आधुनिक वैज्ञानिकोंको अभी उनके बारेमें विशेष जानकारी हासिल नहीं हो सकी है । किन्तु उपर्युक्त विटैमिनके बारेमें उनकी जानकारी बिल्कुल सही तथा काफी गहरी है ।

विटैमिन (पोषकतत्त्व) हमारे स्वास्थ्यके लिए नितान्त आवश्यक चीज है । हरे शाक, फल, दूध तथा अण्डे आदिमें ये विटैमिन प्रचुर मात्रामें मिल सकते हैं, अतः अपने भोजनमें इन पदार्थोंको सम्मिलित



करके हम विटैमिनकी चिन्तासे सर्वथा मुक्त हो सकते हैं ।

प्राकृतिक खाद्य-पदार्थोंमें विटैमिन साधारणतया पाये जाते हैं किन्तु फैक्ट्रियोंमें बने हुए खाद्य-पदार्थोंके विटैमिन फैक्टरीमें ही तैयारीके समय नष्ट हो जाते हैं । चीजोंको बढ़िया और नफीस बनानेके प्रयत्नमें भी विटैमिनसे हम हाथ धो बैठते हैं । आटेको मैदा बनानेमें या मोटे चावलको मशीनसे कूटकर पालिश करनेमें भी हम विटैमिनको नष्ट कर देते हैं । शक्कर और गुड़को भी सफेद चीनी बनाकर हम उसका विटैमिन नष्ट कर डालते हैं ।

खाद्य-पदार्थोंको आगपर पकानेसे भी उनके विटैमिन नष्ट हो जाते हैं, अतः यह नितान्त जरूरी है कि अपने भोजनके साथ टमाटर, मूली आदि जैसी चीजें हम बिना पकाये ही खाएँ । दूध, अण्डा वगैरह भी हमारी गरीब जनता पर्याप्त मात्रामें नहीं पा सकती, अतः भिन्न-भिन्न विटैमिनोंके अभावसे ये लोग किसी-न-किसी बीमारीके शिकार बारहो महीने बने रहते हैं । गर्मियोंके दिनोंमें आप देहातमें चले जाइये, १०० पीछे ६० आदमी आपको ऐसे मिलेंगे जिन्हें सूर्यास्तके उपरान्त कुछ सूझता ही नहीं । विटैमिन ए-की कमीसे उन्हें रतौंधी धर दबाती है । दूध-मक्खनसे उन्हें भेंट कहाँ जो अपनी इस कमीको वे पूरा कर सकें । किन्तु शीघ्र ही पानी बरसनेपर जब पके आम उन्हें खानेको मिलते हैं, तो विटैमिन ए-की कमी अपने आप पूरी हो जाती है और रतौंधी भी न जाने कहाँ गायब हो जाती है ।

उबालनेपर दूधका विटैमिन भी नष्ट हो जाता है, यही कारण है कि भारतीय चिकित्सापद्धतिमें धारोष्ण दूधका बड़ा महत्त्व माना गया है ।

विटैमिनके प्रश्नपर सोवियट रूसने विशेष ध्यान दिया है । रूसके वैज्ञानिकोंने प्रयोगशालाओंमें भिन्न-भिन्न प्रकारके विटैमिनोको कृत्रिम-रूपसे तैयार करनेके लिए वर्षोंतक अनवरत रूपसे परिश्रम किया है । रूसकी सरकारको जनताके हितकी सच्ची फिक्र रहती है, वहाँकी सरकार

अन्य देशोंकी साम्राज्यशाही सरकारोंकी तरह गरीबोंका शोषण करना नहीं जानती। रूसकी सरकारने विटैमिनकी कमीसे उत्पन्न हुए रोगोंसे छुटकारा दिलानेके लिए इन कृत्रिम ढंगसे तैयार किये गये विटैमिनोंको उपयुक्त मात्रामें खाद्य-सामग्रीमें डालकर गरीबोंको खिलाया है। ऐसे रोगियोंको रासायनिक गाढ़ा विटैमिन खानेको दिया जाता है। रूसमें पहाड़ी देवदार सदृश पेड़ोंकी नुकीली पत्तियोंकी फुनगियोंसे प्रयोग-शालाके अन्दर विटैमिन-सी तैयार किया जाता है। शर्वत आदिमें इस कृत्रिम विटैमिनको घोलकर देहातकी जनताके बीच उपयोगमें लानेके लिए भेज देते हैं ताकि फल और हरी तरकारियोंके अभावको देहातके लोग, जहाँतक उनके स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, महसूस न कर सकें।

डाक्टर हमें बताता है कि विटैमिनकी कमीसे उत्पन्न हुई बीमारीको दूर करनेके लिए हमें साधारणतः जितने विटैमिनकी जरूरत होती है उससे दूनी मात्रामें विटैमिन खाने पड़ेंगे। अतः एकदम दवाके रूपमें भी हमें गाढ़ा विटैमिन खाना होगा और इस कामके लिए कृत्रिम विटैमिन ही सबसे ज्यादा कारामद हो सकता है।

आँख, कान, नाक और फेफड़ेकी बीमारियोंमें भी कृत्रिम विटैमिन-ए औषधिका काम करता है। कृत्रिम विटैमिनकी गोलियाँ निहायत छोटी होती हैं किन्तु उनमें अपार शक्ति निहित होती है; अतः दवाके रूपमें उन नन्हों गोलियोंके खानेसे मनोवैज्ञानिक असर भी हमारे ऊपर अच्छा पड़ता है।

अभी हालतक लोगोंका ख्याल था कि जितना ही अधिक विटैमिन हम खायें उतना ही अच्छा हमारा स्वरूप होगा। किन्तु इस दिशामें किये गये अनुसन्धान और प्रयोग इस धारणाकी पुष्टि नहीं करते। कृत्रिम ढंगसे गाढ़ा विटैमिन तैयार करके कबूतरों तथा खरगोशोंको खिलाकर देखा गया कि विटैमिन-सी अधिक खानेसे उन्हें स्क्र्वी रोग हो गया जो विटैमिन-सीकी मात्रा घटा देनेसे अपने आप दूर हो गया।



विटैमिन ए भी कृत्रिम रूपसे अधिक खाये जानेपर स्वास्थ्यके लिए हानिकर साबित होता है। विटैमिन डी-का भी यही हाल है। इन प्रयोगोंके सिलसिलेमें कुत्ते और बिल्ली आदिके खाद्य-पदार्थोंमें विटैमिन डी काफी अधिक मात्रामें मिला दिया गया था; नतीजा यह हुआ कि धीरे-धीरे वे दुबले होने लगे और आखिर कुछ ही दिनोंके उपरान्त वे मर गये।

अतः हम देखते हैं कि एक ओर जहाँ विटैमिनका अभाव हमारे स्वास्थ्यमें खराबी पहुँचाता है, वहाँ दूसरी ओर इसकी अधिकतामें भी खतरा की सम्भावना रहती है। इसकी एक नियत मात्रा हमारे लिए लाभदायक हो सकती है। साथ ही भिन्न प्रकारके विटैमिनोंका परस्पर-का अनुपात भी संतुलित रहना चाहिये। भोजनमें हर प्रकारके विटैमिन मौजूद होने चाहिये। तभी हमारे शरीरके सभी अंग—हड्डी, खून, स्नायु, हृदय, पेशियाँ—ठीक रूपसे काम कर सकते हैं।

कृत्रिम विटैमिनका इस्तेमाल करनेमें खतरा है, इस बातको कभी भूलना नहीं चाहिये। बगैर डाक्टरसे परामर्श किये कृत्रिम विटैमिनका प्रयोग हरगिज न करना चाहिये। विटैमिन सम्बन्धी हमारी सभी जरूरतें प्राकृतिक खाद्य-पदार्थोंके खानेसे पूरी हो सकती हैं। टिनमें बन्द मुरब्बे, बिस्कुट, मैदेकी मिठाइयोंसे परहेज कीजिये और दूध, घी, फल, तरकारियाँ, हरे शाक जी-भर खाइये—फिर आपको न विटैमिन सम्बन्धी पुस्तकें पढ़नेकी आवश्यकता होगी और न कभी डॉक्टरके यहाँ दानिकके लिए जाना पड़ेगा।

## दूध और लकड़ीके बने वस्त्र

विज्ञानकी बदौलत मनुष्यने वास्तवमें अपने लिए मानो एक नये संसारकी रचना करनेकी ठान ली है। वह हर बातके लिए प्रकृतिका

आश्रित नहीं बनना चाहता । ऊन और कपास न मिले तो कपड़े ही न बनें, या जिस देशमें रेशमके कीड़े न पाये जाते हों वहाँके निवासी रेशमी कपड़ोंसे वञ्चित रहें, इन प्रतिबन्धोंका कायल होना आजके वैज्ञानिकको पसन्द नहीं ।

फिर युद्धके आजके संकटने लगभग सभी राष्ट्रोंको आर्थिक दृष्टिसे पूर्णतया स्वावलम्बी बननेके लिए मजबूर किया है । फलस्वरूप अनेक मुल्कोंमें इस बातकी जी-जानसे कोशिश की जा रही है कि जनताकी दैनिक आवश्यकताकी चीजें यदि प्राकृतिक तौरपर उन मुल्कोंमें नहीं पायी जाती हैं तो उन्हें कृत्रिम ढंगसे रासायनिक द्रव्योंकी मददसे ही तैयार कर लें । इस प्रकार आर्थिक क्षेत्रमें स्वावलम्बी बननेकी धुनने अनेक विचित्र चीजोंकी ईजाद कर ली है ।

कहीं दूध और शीशेसे वस्त्र तैयार किये जा रहे हैं तो कहीं लकड़ी-के गूदेसे कृत्रिम रेशमकी लच्छियाँ बनायी जा रही हैं । इस क्षेत्रमें निस्सन्देह जर्मनीने तो कमाल कर दिखाया—वहाँ तो ‘स्थानापन्न’ वस्तुएँ तैयार करनेका एक जवर्दस्त आन्दोलन चल खड़ा हुआ था । हिटलर और उनके साथियोंको बहुत पहलेसे ही इस बातका पता था कि उन्हें निकट भविष्यमें एक बार फिर समरांगणमें कूदना पड़ेगा । अतएव इन लोगोंने वर्षोंके अथक परिश्रमके उपरान्त कोयलेसे पेट्रोल तैयार करनेकी विधि ढूँढ़ निकाली । जर्मनीमें पेट्रोल नहीं पाया जाता, किन्तु वहाँ कोयलेकी अनेक खानें हैं । इसलिए जरूरत पड़नेपर जर्मनी अपने लिए पेट्रोल स्वयं तैयार कर सकता है । कृत्रिम रबड़ भी अनेक देशोंमें अब प्रचुर मात्रामें तैयार किया जाने लगा है । जर्मनीमें प्रति-वर्ष लगभग ५० हजार टन कृत्रिम रबड़ रासायनिक रीतिसे तैयार किया जा रहा था । कृत्रिम रबड़ तैयार करनेके लिए केवल कोयले और चूनेकी आवश्यकता पड़ती है ।

कृत्रिम रेशमके निर्माणकी कहानी भी कम विचित्र नहीं है । आजसे करीब २० वर्ष पूर्व सुप्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक रीमरने कहा



था—‘रेशम केवल गोंद सरोखे द्रव पदार्थसे कीड़े तैयार करते हैं। तो क्या यह सम्भव नहीं है कि हम भी किसी दिन गोंद और लाखसे रेशम तैयार कर सकें?’ पूरे १५० वर्ष उपरान्त रीमरकी यह अभिलाषा पूरी हुई।

जर्मनीके एक कपड़ा बुननेवाले व्यक्तिने एक दिन संयोगवश भिड़के छत्तेपर पैर दे मारा। उसका ध्यान एकाएक इस बातकी ओर आकर्षित हुआ कि भिड़का छत्ता जिस पदार्थसे बना है, वह बहुत कुछ अंशोंमें कागजसे मिलता-जुलता है, अतः कृत्रिम ढंगसे उसने लकड़ीकी लुगदीसे अखबारके लिए सस्ता कागज तैयार करनेकी तरकीब ईजाद की। किन्तु उसने स्वयं अपने आविष्कारके महत्त्वको आँकनेमें गलती की। आखिर कुछ दिनों बाद एक दूसरे जर्मन वैज्ञानिकने लकड़ीकी लुगदीसे ही कृत्रिम रेशम तैयार करनेकी विधि ढूँढ़ निकाली।

इंग्लैण्डमें कृत्रिम रेशम पहले शहतूतकी छालकी लुगदीसे तैयार किया गया था। छालको सोडेके साथ उबाल लेते हैं। फिर चूना और साबुन डालकर उसके अन्दरका मैल काट लेते हैं। अब छालके इन साफ किये हुए रेशोंको अलकोहल, ईथर और शोरेके तेजाबमें धोल लेते हैं। इस धोलमें रबड़का धोल मिलाकर द्रव रूपमें रेशम तैयार कर लेते हैं। अब इस गाढ़े द्रवको एक पतले छेदवाली पिचकारीमें भरकर जोरके साथ पतली धार बाहर निकालते हैं। यह धार सूराखसे बाहर अलकोहलमें गिरती है और अलकोहलके अन्दर यह फौरन ही धागेकी तरह कड़ी हो जाती है। ये ही कृत्रिम रेशमकी लच्छियाँ रेशमी थान बुननेके काम आने लगीं। यह घटना सन् १८५५ की है।

पिछले ५०-६० वर्षोंमें तो इस क्षेत्रमें बेहद उन्नति की जा चुकी है। कनाडाके जंगलमें मोटे-मोटे तनेवाले वृक्ष काटकर नदियोंमें बहा दिये जाते हैं। इस तरह ये फैक्टरियोंके अन्दर पहुँचते हैं। यहाँपर इनके छोटे-छोटे टुकड़े मशीनों द्वारा कर दिये जाते हैं जिन्हें रासायनिक द्रवोंमें धोलकर द्रव रेशम तैयार कर लेते हैं। तत्पश्चात् रेशमके धागे भी इन्हींसे

तैयार कर लिये जाते हैं। इन कारखानोंमें काम भी बहुत तेजीके साथ होता है। रेशमका साधारण कीड़ा चार सप्ताहोंमें एक हजार गज रेशमका धागा तैयार करता है और कारखानेकी मशीन ढाई हजार गज धागा एक घण्टेके अन्दर तैयार कर लेती है। आँकड़े देखनेसे पता चलता है कि संसारमें असली रेशमकी पैदावारसे बीस गुनी पैदावार कृत्रिम रेशमकी है। मुनाफेका यह हाल कि एक फर्ममें सन् १९०४ में जिस शेरकी कीमत १०० थी आज उसकी कीमत एक लाख बीस हजार रुपये आँकी जा रही है।

कोयला और अण्डीके तेलसे भी कृत्रिम रेशमके धागे बनाये जाने लगे हैं। ये धागे मोजे और बनिआइनके लिए विशेष उपयुक्त होते हैं। व्यावसायिक दृष्टिसे अभी कोयलेसे बने रेशमी धागोंका प्रयोग सम्भव नहीं है, क्योंकि इनके तैयार करनेमें लागत ज्यादा बैठती है। अनुसन्धान किया जा रहा है कि किस प्रकार इसकी लागतमें कमी की जाय और सम्भव है एकाध वर्षके भीतर ही हमारे और आपके पैरोंमें कोयलेसे बने हुए रेशमी धागोंके मोजे नजर आयें।

वैज्ञानिकने इतनेसे ही सन्तोष नहीं कर लिया। उसने खोज और रिसर्च करके कपड़े तैयार करनेके लिए रूईके बजाय और दूसरी स्थानापन्न चीजें भी ढूँढ़ निकालीं। इटलीके एक वैज्ञानिकने दूधसे प्राप्त 'केसीन' नामक पदार्थसे कृत्रिम ऊन तैयार करनेकी तरकीब ईजाद की। २६ गैलन दूधमें लगभग साढ़े चार सेर मक्खन होता है और ३॥ सेर केसीन। एक सेर केसीनसे एक सेर कृत्रिम ऊन बनाया जा सकता है। इस तरहसे तैयार किये गये ऊनको लेनिटलके नामसे पुकारते हैं। लेनिटलके बने कपड़ोंको असली ऊनके बने कपड़ोंसे आप जल्दी अलग नहीं कर सकते। दूधके बने ये कपड़े बरसातमें पानीसे आपकी रक्षा भी कर सकते हैं। स्नानके निमित्त जाँघिये अब भी लेनिटलके ही बनने लगे हैं।

फिर हालमें जर्मनीने तिनके और पुआलसे कृत्रिम ऊन बनानेकी तरकीब भी ईजाद की है। मछलियोंके शरीरसे निकले हुए मज्जा-तन्तुओंसे



भी ऊनके लच्छे बनाये जा रहे हैं। जापानमें सोयाबीनसे कृत्रिम धागे वस्त्र बुननेके लिए तैयार किये जा रहे हैं। चीनी, गिलसरीन, चेहरेके पाउडर आदि भी अब लकड़ीसे रासायनिक तरीकोंकी मददसे तैयार किये जा रहे हैं।

गत महायुद्धके छिड़नेसे कुछ महीने पहले कृत्रिम प्रणालीसे विभिन्न वस्तुओंके तैयार करनेके सम्बन्धमें वैज्ञानिकोंकी एक कान्फरेन्स हुई थी। इस कान्फरेन्समें भाग लेनेके लिए एक जर्मन प्रोफेसर बर्लिनसे मोटरकारमें बैठकर आया था। रास्तेभर उसने लकड़ीसे प्राप्त किये गये पेट्रोलका ही इस्तेमाल किया था और कान्फरेन्सकी बैठकमें उसने सदस्योंको लकड़ीसे बनाये गये मीठे चाकलेट भी खानेको दिये थे।

हम देखते हैं कि लकड़ीका प्रयोग बीसियों तरहके विभिन्न पदार्थोंकी स्थानापन्न चीजें तैयार करनेके लिए हो रहा है। अतः बहुत सम्भव है कि दो-चार सौ वर्षके अन्दर ही संसारके बहुतेरे वृक्ष धराशायी हो जायँ। फिर तो शायद लकड़ीका एकदम टोटा ही पड़ जायगा। वृक्षको काट गिरानेमें मुश्किलसे चन्द मिनट लगते हैं, जब कि प्रौढ़ वृक्ष कई वर्षोंमें तैयार हो पाता है।

वैज्ञानिक इस कठिनाईका सामना करनेके लिए भी जैसे तैयार बैठे हैं। उसने रासायनिक तरीकोंसे कृत्रिम लकड़ी बनाना भी शुरू कर दिया है। वैज्ञानिकोंका दावा है कि कृत्रिम लकड़ी जंगलकी लकड़ीसे ज्यादा हलकी और मजबूत होती है। इसमें न तो दीमक जल्द लगते हैं, न घुन। नमीका भी जल्द कृत्रिम लकड़ीपर प्रभाव नहीं पड़ता। बहुत सम्भव है कि निकट-भविष्यमें हमारे मकानोंमें लगनेवाली लकड़ियाँ जंगलसे न आकर विज्ञानशालाओं और फैक्ट्रियोंमें तैयार हुआ करेंगी।

काँचके धागे भी अब बहुत बारीक साइजके बनने लगे हैं। सिरके वालसे भी पतले धागे काँचसे तैयार किये जाते हैं। इन धागोंसे बने वस्त्रोंमें तरह-तरहके सुन्दर रंगोंका समावेश किया जा सकता है। इन्हें धो-पोंछकर आसानीसे साफ भी रख सकते हैं और इनमें आग लगनेका

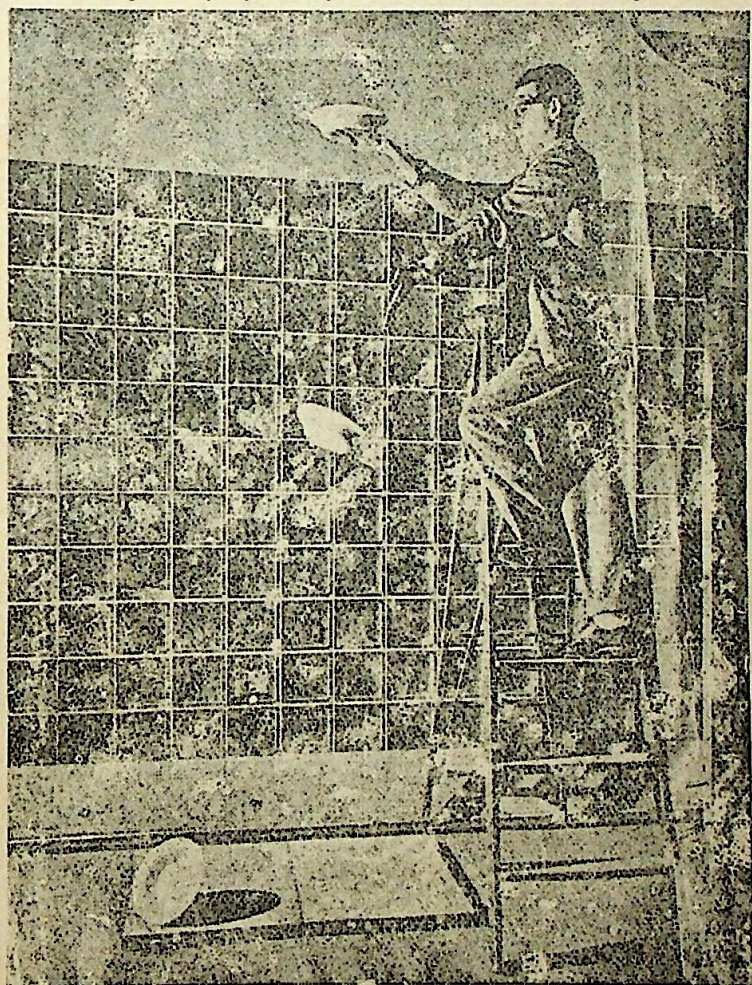
भी खतरा नहीं। जर्मनीमें स्त्रियोंके परिधान प्रायः काँचके बने कपड़ोंसे तैयार किये जाते हैं—किन्तु काँचके कपड़ोंसे आप अपनेको सर्दोंसे नहीं बचा सकते।

वैज्ञानिकने निस्सन्देह अपने लिए एक दूसरी दुनियाके निर्माणकी शान ली है। वृक्षोंके तने और छालसे उसने चमकीला रेशम तैयार किया, दूधसे भी उसने तरह-तरहके पदार्थ बना डाले हैं। कृत्रिम रबड़, कृत्रिम पेट्रोल, कृत्रिम चीनी, कृत्रिम धी—इस कृत्रिम जगत्की कोई सीमा ही नजर नहीं आती।

## काँच—एक अद्भुत पदार्थ

साधारण लोगोंकी धारणा है कि काँच एक अत्यन्त ही नाजुक चीज होती है। जरा-सी ठोकर लगी कि इसके टुकड़े-टुकड़े हो गये। किन्तु आधुनिक युगमें दस बीस नहीं, हजारों किस्मके काँच तैयार किये जा रहे हैं। इन विभिन्न श्रेणियोंके काँचके गुणोंमें आकाश-पातालका अन्तर है। उदाहरणके लिए, अमेरिकामें काँचकी चदरें इतनी मजबूत बनायी जा रही हैं कि तीन फुटकी ऊँचाईसे सेर भर वजनकी लोहेकी गेंद गिराने-पर भी वे नहीं चिटखतीं। तीन-चौथाई इंच मोटी काँचकी चदर बनी टेबुलपर एक हाथीको खड़ा कर दिया गया। चदर जरा-सी लच गयी, किन्तु वह टूटी नहीं। काँचके गिलासमें गर्म चाय उँडेलकर आपने कितने ही गिलास तोड़े होंगे, किन्तु आधुनिक विज्ञानने अपने अध्यवसाय और अनुसन्धानकी सहायतासे अब ऐसे काँच भी तैयार कर लिये हैं जिनपर गर्मी-सर्दीका असर होता ही नहीं। इस सिलसिलेमें एक दिलचस्प प्रयोग किया गया। काँचका गिलास बर्फकी सिल्लीपर रखकर उसमें पिघला हुआ तप्त सीसा उँडेला गया, गिलास टूटा नहीं।





काँचकी रकावियाँ आठ फुटकी ऊँचाईपरसे नीचे सीमेण्टके धरातलपर गिरायी जानेपर भी नहीं टूटतीं। इस ढंगके मजबूत काँच तैयार करनेके लिए उसे भट्टीमें विशेष विधियों द्वारा तपाते हैं। चित्रमें सामनेकी दीवाल भी धुँधले काँचकी बनी है। पाश्चात्य देशोंमें नये ढंगके मकान, काँचकी दीवाल प्रचुरतासे बनने लगी हैं। धुँधले काँचकी दीवालोंनेसे होकर बाहरसे छानकर रोशनी भी आती है, किन्तु इस दीवालोंनेसे एक तरफसे दूसरी तरफकी वस्तुएँ दिखलाई नहीं पड़तीं।



पिछली शताब्दीतक लाख प्रयत्न करनेपर भी कारीगर पूर्णतया पारदर्शक शीशी नहीं बना पाये थे। अब उत्तम श्रेणीकी फैक्टरियाँ अदृश्य काँचका निर्माण करने लग गयी हैं। खिड़कीमें ऐसे काँचके पदें लगा देनेपर निकटसे भी नहीं जान पड़ता है कि उसमें काँच लगा भी है या नहीं।

साधारण किस्सके काँच आजकल सर्वत्र सस्ते दामोंपर मिलते हैं, किन्तु दो हजार वर्ष पूर्व शीशा एक विलासकी सामग्री समझा जाता था। फारस तथा मिस्रके रईस ही काँचके पैमानेमें साकीके हाथों सुरापान करके स्वर्गका सुख भोग सकते थे। शीशेका निर्माण उन दिनों उच्च कला समझा जाता था। आठ दस वर्षोंके अनवरत परिश्रमके उपरान्त कारीगर इस व्यवसायका हुनर सीख पाते। ये लोग अपने व्यवसायके भेदकी प्राणकी भाँति रक्षा करते। उन दिनों वेनेशियन काँचकी फैक्टरीके कई कारीगर मैनेजरकी आज्ञासे जानसे इसलिए मार डाले गये थे कि उन्होंने विदेशियोंको वेनेशियन काँचके निर्माणका रहस्य बतला दिया था।

स्वच्छ चमचमाते हुए काँचका निर्माण एक साधारणसे पदार्थ रेत (बालू) से होता है। अकेले रेतको ही भट्टीकी तेज आँचमें यदि गर्म किया जाय तो यह पिघलकर पारदर्शक काँचका रूप धारण कर लेगी। किन्तु रेतको पिघलानेके लिए भट्टीको बहुत ही अधिक तप्त बनानेकी आवश्यकता होती है। यदि रेतमें कुछ क्षारीय पदार्थ या विभिन्न धातुओंकी 'आक्साइड' मिला दें तो रेत कम तापक्रमपर भी आसानीसे पिघल जाती है।

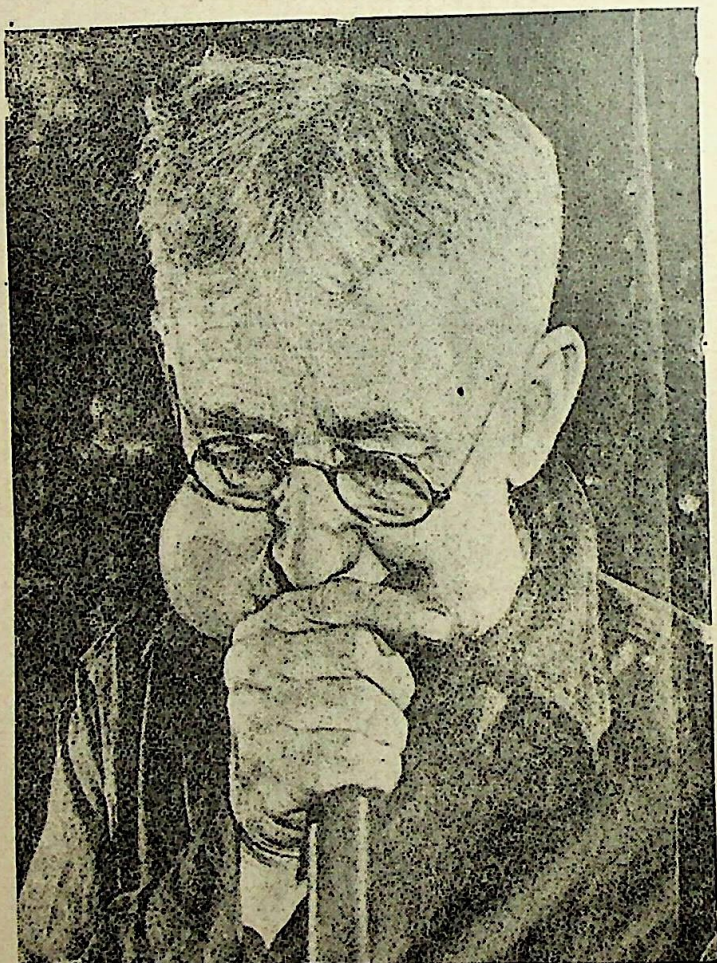
अतः तोली हुई रेतमें एक नियत मात्रामें साधारण सोडा या पोटाश मिलाते हैं। मशीनसे इसे कूटकर इसमें काँचके नन्हें-नन्हें टुकड़े मिला देते हैं। अब विद्युत् भट्टियोंमें इस सूखे मिश्रणको डालते हैं। कुछ समय उपरान्त यह मिश्रण पिघलकर पारदर्शक द्रव बन जाता है। भट्टीके दूसरे छोरपर पिघले हुए काँचको लम्बे नलकेके सिरेपर



आवश्यकतानुसार मात्रामें उठाकर नलकेकी दूसरी ओरसे फूक मारते हैं और बोतल या शीशी आदि साँचेके अन्दर तैयार कर लेते हैं। नलकेसे अलग करनेपर काँचकी इन चीजोंको तुरन्त ठण्डी नहीं होने देते, बल्कि इन वस्तुओंको नलकेसे अलग करनेपर एक लम्बी माँदमेंसे धीरे-धीरे गुजारते हैं। माँदकी दूसरी ओर पहुँचते-पहुँचते ये वस्तुएँ क्रमशः ठण्डी हो जाती हैं। काँचकी वस्तुओंकी तैयारीमें यह क्रिया विशेष महत्त्व रखती है। यदि वर्तनको जल्दी ही ठंडा कर दिया जाय तो वर्तनकी दीवारोंमें बल पड़ जाता है—जरा-से आघातसे वर्तन टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।

आधुनिक फैक्टरियोंमें नलकेके स्थानपर मशीनें काम करती हैं। उदाहरणके लिए, बोतल बनानेवाली मशीन चक्कीकी तरह गोल होती है। इसकी अनेक भुजाएँ होती हैं। मशीन गतिसे घूमती रहती है और बारी-बारीसे इसकी भुजाएँ भट्टीमेंसे पिघले हुए काँचका एक नपा-तुला लोंदा उठाती हैं। इतनेमें मशीनकी भाथीसे भुजाकी नलिकामें हवाकी साँस आती है जो काँचके लोंदेको फुलाकर साँचेके अन्दर बोतलका रूप दे देती है। तदुपरान्त मशीन स्वयं ही बोतलको अपनी भुजासे काटकर अलग करती है, उन्हें तश्तपर सजाती है और फिर तश्त भर जानेपर उसे अलग भी सरका देती है। यह तश्त अब ठण्डी करनेवाली लम्बी माँदके अन्दर धीमी गतिसे गर्म सिरसे ठण्डे सिरैकी ओर सरकाया जाता है। एक मशीन प्रति मिनट ५००० बोतलें आसानीसे तैयार कर लेती है जब कि मुँहसे फूँकनेवाला कारीगर सारे दिन काम करनेपर भी मुश्किलसे २०० बोतलें तैयार कर पाता है। अमेरिकाके काँचकी फैक्टरियोंमें स्वयंक्रिय मशीनें प्रति मिनट ६०० बिजलीके बलव तैयार करती हैं। खिड़कियोंमें लगनेवाले काँचके पर्दे भी तेजीके साथ इन मशीनों द्वारा तैयार किये जाते हैं—एक दिनमें एक मशीन एक लाख पचीस हजार वर्गफुट काँचका पर्दा तैयार करती है। किन्तु इस यन्त्र-युगमें भी मुँहसे फूँकनेवाले कुशल कारीगरोंको

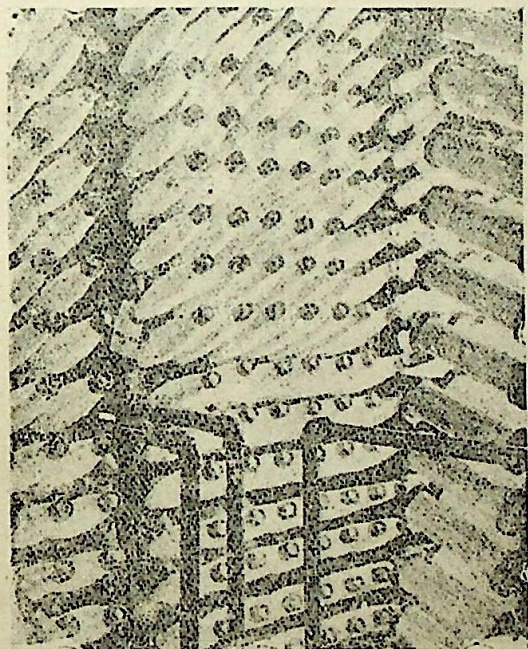




काँचके निर्माणमें यद्यपि मशीनोंका उपयोग एक बड़े पैमानेपर होने लगा है किन्तु पुरानी रीतिसे फूँककर काँचकी वस्तुएँ तैयार करनेवाले कुशल कारीगरोंकी माँग आधुनिक कारखानोंमें अभी है। अमेरिकाके इस कुशल कारीगरको देखिये—इसके गाल गुब्बारेकी तरह फूल रहे हैं।



महत्त्वकी दृष्टिसे देखा जाता है, क्योंकि प्रयोगशालाओंमें प्रयुक्त होनेवाले काँचके विभिन्न नलिकाओंयुक्त वर्तनोंका निर्माण इन्हीं कुशल कारीगरों द्वारा होता है। प्रायः सभी प्रयोगशालाओंमें काँच फूकनेवाला एक कारीगर अवश्य नियुक्त होता है।



सूती कारखानेका यह पुतलीघर नहीं है। इन गिरियोंपर काँचके धागे लिपटे हैं। प्रत्येक गिरीपर ८००० गज काँचका धागा लिपटा हुआ है। इन्हींसे काँचके वस्त्र बुने जाते हैं।

काँचमें अद्भुत गुणोंका समावेश करनेके लिए विज्ञानके नूतनतम अनुसन्धानोंका उपयोग किया जा रहा है। अमेरिकाके सुप्रसिद्ध

कोर्निंग ग्लास बक्समें विभिन्न किस्मके काँच तैयार करनेके निमित्त ३००० नुस्खे आजमाये जा रहे हैं। फलस्वरूप इस ग्लास बक्समें ऐसे काँच भी तैयार हो रहे हैं जिनमेंसे होकर सूर्यके प्रकाशकी स्वास्थ्यप्रद अल्ट्रावायलेट रश्मियाँ तो भीतर कमरेमें पहुँच सकती हैं, किन्तु तापकी किरणें उसे भेदकर भीतर नहीं जा सकतीं। सेनिटोरियम या अस्पतालोंमें इस ढंगके काँच विशेष उपयोगी साबित होंगे।

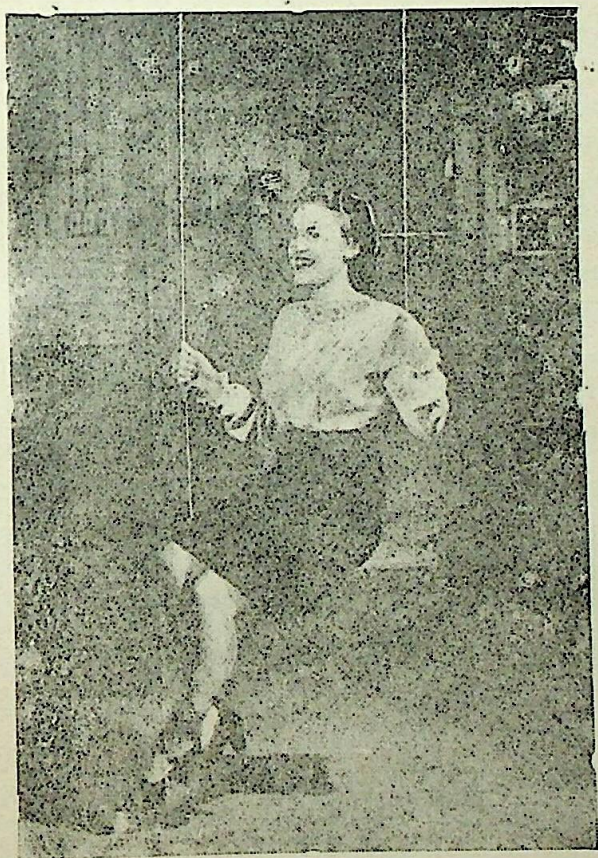
काँचके विभिन्न गुणोंका समावेश करके आधुनिक इंजीनियरोंने उसकी उपयोगिताका क्षेत्र बृहत्तर बना दिया है। फलस्वरूप आजकल काँचसे पम्प, बिजलीकी इस्तरी, टेबुल, कुर्सी, ग्रामोफोनके रेकार्ड तथा रसोईके बर्तन आदि बनने लग गये हैं। इमारतोंमें ऐसे काँच लगाये जा रहे हैं जिनपर आँधी, पानी या ओलेका कुछ असर नहीं होता। आश्चर्य नहीं कि कुछ ही वर्षोंके अन्दर रसोईघरोंके अन्दर काँचकी देगचियोंमें भोजन भी तैयार किया जाय। तेजसे तेज आँचपर चढ़ानेपर भी ये देगचियाँ टूटेंगी नहीं।

दूरवीक्षण तथा अणुवीक्षण यंत्रोंमें भी काँचके लेन्स द्वारा हमें दिव्यदृष्टि प्राप्त होती है। काँचके लेन्स द्वारा दूरवीक्षण यन्त्रका निर्माण करके ज्योतिषज्ञ आज अनन्त अन्तरिक्षके रहस्योद्घाटन करनेका साहस दिखा सका है। फिर अणुवीक्षण यन्त्रकी आँखें भी तो शीशेके लेन्ससे बनी हैं—इन खुर्दवीनोंकी सहायतासे वैज्ञानिक सूक्ष्म जगत्में प्रवेश पा सका है।

पिछले पन्द्रह वर्षोंके भीतर एक नये किस्मके काँचका निर्माण पाश्चात्य देशोंकी फैक्टूरियोंने किया है। इसे फायबर-ग्लास या रेशेदार काँचके नामसे पुकारते हैं। रूईके गोलेकी तरह फुलफुले रूपमें रेशेदार काँच तैयार किया जाता है। यह रबड़की भाँति लचीला होता है। साथ ही ध्वनि, ताप या विद्युत्का प्रवाह इसमेंसे होकर नहीं गुजर सकता। अतः कोलाहलमय सबकोंपर मकानकी दीवारोंमें रेशेदार काँच लगाकर शोरको भीतर पहुँचनेसे रोक सकते हैं। ताप और विद्युत्का प्रवाह



रोकनेके लिए रबड़ या कार्ककी जगह रेशेदार काँचका प्रयोग अमेरिकामें एक बड़े पैमानेपर हो रहा है। काँचके बारीक धागे भी अब काते जा रहे हैं। ये धागे सिरके वालसे बीस गुना अधिक पतले होते हैं।



काँचके रेशेसे बनी डोरीके सहारे यह अमेरिकन युवती झूला झूल रही है।

धागे बनानेके लिए पहले काँचको पिघलाकर छोटी-छोटी गोलियाँ बना लेते हैं। इन गोलियोंको पुनः पिघलाकर उससे बारीक रेशे काते जाते हैं। पिघले हुए काँचके धागे बड़ी तेजीके साथ खींचे जाते हैं—प्रति मिनट एक मीलकी रफ्तारसे। आध सेर पिघले हुए काँचसे इतना लम्बा धागा काता जा सकता है कि उसे पृथ्वीके चारों ओर कमसे कम एक बार लपेट सकते हैं।

अब तक, एसबेस्टास तथा लैम्पकी बत्तियोंकी जगह रेशेदार काँचका इस्तेमाल अब किया जा रहा है। काँचके धागोंकी बटी रस्सी तनाव सहनेमें इस्पातका मुकाबला कर सकती है। काँचकी बनी पतली डोरी-से झूला लटकानेका काम भी लिया जाता है। कोनिंग ग्लास बक्सने एक हलके किस्मका काँच भी तैयार किया है जिसके अन्दर हवाके बबूले बन्द रहते हैं। इस जातिकी काँचकी सिल पानीपर बखूबी तैरती है और यह आदमीका बोझ भी आसानीसे सँभाल सकती है। काँचके रेशेसे बुने कपड़े छूनेमें रेशम ऐसे लगते हैं। ऐसे कपड़ोंकी टाईयाँ, मेजपोश आदि बनते हैं। इनमें आग लगनेका भय नहीं होता। और न तेजाव आदिका ही इसपर असर होता है। काँचके धागेसे आपरेशनके उपरान्त जख्मपर टाँका भी लगाया जाता है। इससे घावके विपाक्त होनेका खतरा नहीं रहता।

इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं कि गुणोंकी विभिन्नता तथा उपयोगिताकी दृष्टिसे काँच अन्य सभी पदार्थोंसे बढ़कर है।

## गोल सूराखमें चौकोर खूँटा

हम विज्ञानके इस युगमें एक बहुत ही पेचीदा जिन्दगी बिता रहे हैं। विज्ञानके आविष्कार बहुत दूरतक आगे पहुँच चुके हैं। किन्तु हमारी मानसिक तथा सामाजिक उन्नतिकी रफ्तार बहुत मन्द रही है।



फलस्वरूप हमारे सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवनमें हर कहीं एक जबरदस्त असामंजस्य दीखता है। मौजूदा विज्ञान-विरचित दुनियामें हम अपनेको फिट नहीं पा रहे हैं। हमारी नैतिक, मानसिक तथा शारीरिक व्यवस्था तो १९वीं सदीकी है और हमारे आसपासके सामान बीसवीं सदीके।

प्रतिभा आपके अन्दर ऊँचे दर्जेका साहित्यज्ञ और कलाकार होनेकी है, किन्तु समाजके बन्धनोंमें पड़कर आप कलकत्तेके बाजारमें दलाली करते फिरते हैं। विज्ञानके अन्वेषण करनेकी योग्यता आपके अन्दर मौजूद है, किन्तु आप वेतनके लोभसे आई. ए. एस. बनकर ताजिया और रामलीलामें भीड़का प्रबन्ध कर रहे हैं। इसी प्रकार अनेकों व्यक्ति गलत जगहोंमें पड़े हुए हैं जहाँ अपने पेशेमें उनका मन नहीं लगता। बस, तेलीके बैलकी तरह एक छोटेसे वृत्तमें वे चक्कर लगाया करते हैं। जिन्दगीका वास्तविक मजा वे कभीका खो चुके होते हैं।

गलत स्थानपर होनेके कारण अनेक व्यक्ति अपना काम भलीभाँति पूरा नहीं कर पाते और काम तथा जिम्मेवारीके बोझसे वे जब बहुत ही ज्यादा दब जाते हैं, तब एकाएक उनके धैर्यका बाँध टूट जाता है। और ऐसे संकटकालमें ये हतभाग्य व्यक्ति अकसर आत्महत्या सदृश जघन्य अपराधकी शरण लेते हैं। मनोवैज्ञानिकोंका कहना है कि कामका बोझ बढ़ जानेसे कोई इतना घबरा नहीं सकता कि वह आत्महत्याकी शरण ढूँढ़े, वरन् कामकी जिम्मेवारी निभा सकनेकी योग्यता तथा रुचि न होनेके कारण ही लोग यह जघन्य रास्ता अख्तियार करते हैं। गोल सूराखमें चौकोर खँटा जिस प्रकार ठीक नहीं बैठ सकता उसी तरह ये व्यक्ति भी अपने पेशेमें कभी सन्तोषजनक प्रगति नहीं कर सकते।

इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर मनोविज्ञानके विशेषज्ञोंने काफी गौर किया है और अमेरिकामें तो गत १५ वर्षोंसे हावर्ड यूनिवर्सिटीके मनोविज्ञानके एक प्रोफेसरने इसके लिए एक प्रयोगशाला ही खोल रखी है। इस प्रयोगशालामें इस बातकी विशेष रूपसे जाँच की जाती है कि अमुक

व्यक्तिके अन्दर अमुक काम करनेकी क्षमता मौजूद है या नहीं। पिछले १५ सालके अन्दर इस प्रयोगशालामें सैकड़ों व्यक्तियोंकी मनोवैज्ञानिक तरीकेपर जाँच की गयी है और इन जाँचोंकी बदौलत कितने ही व्यक्तियोंकी जिन्दगी सुधर गयी।

उदाहरणके लिए, एक बड़ी फैक्टरीके मैनेजरने अपने क्लर्कको इस प्रयोगशालामें भेजा कि इसका पता लगाया जाय कि क्लर्क अपना काम सुचारुरूपसे क्यों नहीं कर पाता। प्रयोगशालामें जाँच करनेपर मालूम हुआ कि उस व्यक्तिकी दिलचस्पी गणित तथा इक्षीनियरिंगमें पर्याप्त मात्रामें थी, किन्तु उसे आफिसमें टोटल मिलानेका काम मिला था और इस काममें उसकी गणित सम्बन्धी प्रतिभाके विकासके लिए कोई मौका न था। उसकी तबीयत ही इस काममें नहीं लगती थी और इसी कारण वह प्रायः टोटल मिलानेमें अशुद्धियाँ भी कर देता था। जाँचके उपरान्त प्रयोगशालाके अधिकारियोंने उक्त फैक्टरीके मैनेजरसे सिफारिश की कि इस क्लर्कको टोटल मिलानेका काम न देकर जरा ऊँचे दर्जेका काम दिया जाय। फलस्वरूप वह क्लर्क इक्षीनियरिंग विभागमें नियुक्त कर दिया गया जहाँपर प्लान बनाने तथा ग्राफ वगैरहका काम उसे मिला। कुछ ही दिनोंके उपरान्त उस विभागमें उन्नति करके वह एक निरीक्षक बन गया और पाँच वर्षके बाद उसे अध्यक्षका पद मिला। उसके नीचे वे अफसर काम करते थे जो ६ वर्ष पहले उसे क्लर्कसे बर्खास्त करना चाहते थे।

पिछले १५ वर्षोंके दमियान इस प्रयोगशालामें २० हजार व्यक्तियोंकी योग्यताकी वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा परख की गयी है। इनमेंसे १३००० व्यक्ति तो भिन्न-भिन्न कारखानोंमें काम करते हैं। ये लोग प्रयोगशालामें इसलिए भेजे गये थे कि ये औसतसे कम काम करते थे। इनके अतिरिक्त ३५०० विद्यार्थी ऐसे थे जो क्लासमें अन्य विद्यार्थियोंकी अपेक्षा मन्दबुद्धि मालूम पड़ते थे और शेष ३५०० अन्य पेशेके थे।

प्रयोगशालामें विभिन्न प्रयोगोंकी मददसे मनुष्यकी वास्तविक



योग्यताका क्षेत्र मालूम करते हैं। वास्तविक योग्यता और रुचि किस पेशेके लिए है, इसका पता लगानेके लिए अनेक बातोंकी जाँच करनी होती है। निरीक्षणकी क्षमता, व्यक्तित्वकी रुझान, मिलनसार प्रकृति या शान्तिप्रिय, इर्जानियरिङ्गकी क्षमता, हिसाब-किताब रखनेकी योग्यता, हाथों और उँगलियोंकी चपलता, स्मरणशक्ति और फुर्ती, इन सभी बातोंकी परख प्रयोगों द्वारा की जाती है। केवल दिलचस्पी ही इस बातकी निर्णायक नहीं हो सकती कि आपके अन्दर अमुक पेशेके लिए वास्तविक योग्यता है या नहीं। इस प्रयोगशालामें किये गये प्रयोगोंसे मालूम हुआ है कि कुछ लोग महसूस करते हैं कि वे लेख लिखनेमें या चित्रकारीमें दिलचस्पी रखते हैं अतः उनके अन्दर इन चीजोंके लिए वास्तविक योग्यता भी मौजूद है। पर वे सालोंतक इन चीजोंसे लगे-वझे रहते हैं, किन्तु कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर पाते। वे अपनी वास्तविक योग्यतासे सर्वथा अनभिज्ञ रहते हैं। यदि वे उन पेशोंको अख्तियार कर लें जिनके प्रति उनके अन्दर वास्तविक भूख और प्रेरणा है, तो वे निस्सन्देह अपने प्रयत्नमें कामयाब हो सकेंगे।

व्यक्तित्वकी जाँचके लिए विद्युत्-यन्त्रकी मददसे पता लगा लेते हैं कि आपके मस्तिष्कके अन्दर भिन्न-भिन्न शब्दोंके सुननेपर किस तरहके विचार उत्पन्न होते हैं और उनकी प्रतिक्रियासे आपके अन्दर किस प्रकारके भाव पैदा होते हैं। आपके शरीरसे दो तार छुआकर एक गल्वानोमीटरसे सम्बद्ध कर दिये जाते हैं और विभिन्न शब्द आपके सामने बोले जाते हैं। इन शब्दोंकी प्रतिक्रियासे उत्पन्न हुए भावके साथ-साथ आपके शरीरकी विद्युत्-अवरोधक शक्ति (रेजिस्टेंस) भी बदलती है। फलस्वरूप गल्वानोमीटरकी सुई कम-बेश मात्रामें डोलती है। इस सुईको देखकर पता लगाया जा सकता है कि किस प्रकारके शब्द सुननेपर आपके अन्दर उत्तेजना पैदा हुई और किन शब्दोंको सुनकर आप शान्त रहे। इस तरह मनोवैज्ञानिक फौरन पता लगा लेता है कि अमुक व्यक्ति गम्भीर स्वभावका है या चंचल अथवा चिड़चिड़े स्वभावका। फिर यह

देखनेके लिए कि आप मिलनसार प्रकृतिके हैं या शान्तिप्रिय, वैज्ञानिक आपके सामने एक-एक शब्दका उच्चारण करता है और आपसे कहा जाता है कि इन शब्दोंको सुननेपर आपके मनमें जो शब्द सबसे पहले आयें उन्हें बता दें। जैसे परीक्षकने कहा बिल्ली, छाता। बिल्लीके बाद आपके मनमें आया 'पूसी' आपकी बिल्लीका नाम और 'छाता'के बाद आपको याद आयी 'विमला' आपको बच्ची जिसके लिए शायद कल ही रेशमी छतरी आप खरीदकर ले आये हैं। फौरन ही परीक्षक फैसला देगा कि आप शान्तिप्रिय आदमी हैं, अन्य लोगोंसे अधिक मिलना-जुलना आपको पसन्द नहीं। अतः आप एक कुशल कलाकार, लेखक या वैज्ञानिक हो सकते हैं, राजनीतिज्ञ, पुजेण्ट या वकील नहीं, क्योंकि बिल्ली शब्दने फौरन आपको अपनी बिल्लीकी और छाता शब्दने आपको अपनी पुत्री विमलाकी याद दिलायी। आपका सारा व्यक्तित्व जैसे आपके अन्दर ही सीमित है।

फिर इसके प्रतिकूल यदि आपके मनमें बिल्लीके बाद कुत्ता शब्द आया और छाताके बाद 'बारिश' तो इसके माने हुए कि आप हर बातमें केवल अपनेसे सम्बन्ध रखनेवाली चीजोंके बारेमें नहीं सोचते, आपके विचार ममत्वके तंग दायरेमें बन्द नहीं हैं। अतः आप अवश्य एक मिलनसार व्यक्ति हैं और उन पेशोंमें जिनमें नित्य लोगोंसे मिलना-जुलना पड़ता है, आप अवश्य सफल होंगे।

इसी प्रकार इंजीनियरिंगकी योग्यताकी जाँचके लिए इमारतके प्लान करनेकी क्षमताकी परख की जाती है और लकड़ीके भिन्न-भिन्न शक्लके छोटे-छोटे टुकड़ोंको एकके ऊपर एक रखकर मन्दिर या अन्य ऊँची इमारतका नमूना खड़ा किया रहता है। फिर आपके सामने धीरे-धीरे एक-एक करके इन टुकड़ोंको परीक्षक उतारता है और आप गौरसे देखते हैं कि कौन-सा टुकड़ा कहाँ फिट करेगा। तब आपसे कहा जाता है कि अब आप पुनः उसी इमारतका निर्माण कर दीजिये। परीक्षक हाथमें घड़ी लेकर बैठता है और देखता है कि कितनी देरमें आप उस इमारतको



फिर खड़ा कर लेते हैं। अच्छे इंजीनियर दो मिनटके अन्दर बिखरे हुए टुकड़ोंकी फिट कर देते हैं। सर्जन, दाँतसाज तथा राजगीर इस प्रयोगमें सबसे कम समय लगाते हैं।

हिसाब-किताब तथा कुर्कीकी योग्यताकी परखके लिए लम्बी-लम्बी संख्याके जोड़े कागजपर लिख दिये जाते हैं। प्रत्येक जोड़ेमें प्रायः एक-से ही अंक रहते हैं। कभी-कभी इन संख्याओंमें एकाध सैकड़े या दहाईके स्थानपरके अंक दूसरी संख्यासे भिन्न रख दिये जाते हैं। प्रत्येक जोड़ेके सामने खाने बने रहते हैं। आपको लिखना होता है कि जोड़ेके दोनों अंक एक-से हैं या भिन्न। ५८७४२३८२३, ५८७४२८३२३, इसी तरहकी दो-दो संख्याएँ एक लाइनमें रहती हैं। इस प्रयोगमें सफल होनेवाले व्यक्तिकी हिसाब-किताब, टाइपिंग, नकलके काम तथा बैकिंगके लिए सिफारिश की जाती है।

दस्तकारीकी योग्यताकी जाँचके लिए उँगलियोंकी फुर्ती देखी जाती है। भिन्न-भिन्न आकारकी आलपीनें मिलाकर रख दी जाती हैं। आपको उँगलियोंकी मददसे एक-सी आलपीनोंकी तीन-तीनकी गड्डी करके लकड़ी-के बक्समें बने हुए सूराखोंमें डालना होता है। इस प्रयोगमें केवल एक ही हाथका इस्तेमाल करना होता है। चपल उँगलीवाले कमसे कम समयमें यह प्रयोग पूरा कर लेते हैं।

इन विभिन्न प्रयोगोंके उपरान्त प्रयोगशालाके अध्यक्ष आपके सामने आपकी योग्यताका तख्तीना रखते हैं ताकि आपको पता लग सके कि आपके अन्दर कौनसा काम करनेकी वास्तविक योग्यता मौजूद है ; कहीं आप गलत जगहमें तो अपनी शक्ति नहीं खो रहे हैं । इस प्रयोगशालाके डाइरेक्टरका कहना है कि हम केवल यह बताते हैं कि अमुक व्यक्ति अमुक प्रकारका काम अच्छी तरह कर सकता है और अमुक प्रकारका काम कम खूबीके साथ । हम उस व्यक्तिके लिए उपयुक्त क्षेत्र चुन सकते हैं, जहाँपर वह अवश्य उन्नति कर सकता है ।

एक कुशाग्रबुद्धि नवयुवक रेडियो इन्जीनियरिंगमें लगा हुआ था,

किन्तु उसकी प्रगति असन्तोषजनक थी। प्रयोगशालामें जाँच करनेके उपरान्त पता चला कि उस व्यक्तिके अन्दर संगीत सीखनेकी क्षमता मौजूद है, इञ्जीनियरिंगके लिए वह व्यक्ति एकदम उपयुक्त नहीं है। संगीत की चाहके कारण उत्पन्न हुई उत्कण्ठाको उसने गलत समझा था और इसी कारण वह रेडियोके इञ्जीनियरिंग विभागमें चला गया था। जब उसने अपनी गलती महसूस की, और फौरन ही रेडियोके संगीतके पहलूमें जी लगाया। शीघ्र ही वह अपने काममें दक्ष गिना जाने लगा।

स्कूल और कालेजमें अकसर विद्यार्थी गलत विषय ले बैठते हैं। उक्त प्रयोगशालाने इस बातमें भी विद्यार्थियोंको समुचित सहायता पहुँचायी है। लेखक स्वयं एक ऐसे सहपाठीको जानता है जिसने बी. एस-सी. में तृतीय श्रेणी पायी और एम. एस-सी में फेल हो गया। फौरन ही पढ़ना छोड़कर उसने सरकारी प्रतियोगिताकी परीक्षाओंमें बैठना शुरू किया और शीघ्र ही केन्द्रीय सेक्रेटेरियटमें ४००)की जगहपर नियुक्ति हो गया। हिसाब-किताब, ड्रैफ्टिंग वगैरहमें उसकी विशेष योग्यता थी। इसके प्रतिकूल कितने ही फर्स्ट क्लासके विद्यार्थी वकालतके पेशेमें झूठ मारते हैं। वे ऊँचे दर्जेके स्कालर या वैज्ञानिक बन सकते थे, किन्तु परिस्थितियोंके वश उन्हें गलत पेशेमें आना पड़ा।

हर साल विभिन्न पेशेके लोग इस प्रयोगशालामें आकर अपनी जाँच कराते हैं और इस तरह यह प्रयोगशाला चौकोर, पट्कोण या गोल हर शकलके खूँटेके लिए उपयुक्त सूराख ढूँढ़नेमें मदद देती है।

## विज्ञानको दोषी मत ठहराइये

प्रायः पढ़े-लिखे लोग भी आधुनिक युगके युद्धकी भीषणताका सारा उत्तरदायित्व विज्ञानके मध्ये मढ़नेमें जरा भी आनाकानी नहीं करते।



उनका कहना है कि पहले जमानेमें इतने भयानक किस्मके हथियार न थे, अतः युद्धमें आजकी अपेक्षा भयानकता और उत्पीड़न भी कम था। अब विज्ञानने अपनी शक्ति बढ़ाकर तरह-तरहके ऐसे अस्त्र-शस्त्र ईजाद कर डाले हैं, जिनका युद्धस्थलमें प्रयोग करके आदमी अपने ही भाई-बन्धुओंपर गजब डा रहा है।

किन्तु वास्तविकता हमें किसी और ही दिशामें ले जाती है। जहरीली गैसें, बम, डायनामाइट, हवाई जहाज, जो युद्धमें लन्दनपर अग्नि-वर्षा कर रहे थे, आदि चीजोंकी खोज और ईजाद क्या वैज्ञानिकने युद्धकी भावनासे प्रेरित होकर की थी? विज्ञानके विकासका इतिहास आप उठाकर देखें, दो ही चार पन्ने उलटनेपर आप अनायास इस निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि इन चीजोंकी ईजाद और खोज करते वक्त वैज्ञानिकोंको स्वप्नमें भी युद्ध सम्बन्धी खयालात नहीं आ पाये थे। वैज्ञानिकोंको अन्वेषणके पथपर ज्ञानकी एक तीव्र पिपासा ले जाती है; वह तो भिन्न-भिन्न वस्तुओंके गुणोंकी परख करता रहता है। रसायनविज्ञानका सच्चा विद्यार्थी जानना चाहता है कि अमुक पदार्थका संयोग यदि अमुक पदार्थके साथ कराया जाय तो किन नये पदार्थोंका निर्माण होगा? उनका गुण क्या होगा? यदि जस्तेका टुकड़ा शोरेके तेजाबमें डालें तो कौन-सी गैस निकलेगी या तँबेके टुकड़ोंको गन्धकके तेजाबमें डालनेका क्या नतीजा होता है? पोटासको गन्धकके साथ मिला देनेपर जो चीज बनती है, वह जरा-सी चोट लगते ही धड़ाके साथ विस्फोट कर बैठती है, तो क्या कुछ दूसरे पदार्थ भी ऐसे पाये जाते हैं जिनको आपसमें मिलानेपर विस्फोटक संयुक्त पदार्थ बन सकते हैं?

विज्ञानके पथका पथिक ज्ञानोपार्जनकी नृणासे प्रेरित होकर रास्तेकी इन उलझनोंको एक-एक करके सुलझानेकी कोशिश करता है। कार्बन (कोयले) का अध्ययन करते समय रसायनज्ञको प्रयोग करके यह देखनेकी जरूरत महसूस हुई कि बेन्जीन, टाल्वीन, ग्लिसरीन और सूतके रेशे, जिनमें कार्बनका प्रतिशत अनुपात काफी ज्यादा है, शोरेके

तेजाबमें घुलनेपर किन पदार्थोंके रूपमें परिवर्तित होते हैं और उनके क्या गुण हैं। कोई भी पहलेसे बता नहीं सकता था कि शोरेके तेजाबके साथ इनका संयोग होनेपर किस तरहकी चीजें बनेंगी। बेन्जीनको तेजाबमें घोलनेपर वैज्ञानिकको नाइट्रो-बेन्जीन नामका पदार्थ मिला जो कृत्रिम रंग बनानेमें बहुतायतसे इस्तेमाल होता है। दुनियाके सभी सम्भ्य देशोंमें कृत्रिम रंगका इस्तेमाल कितने बड़े पैमानेपर होता है, यह किसीसे छिपा नहीं है। किन्तु जब ग्लिसरीनको शोरेके तेजाबमें मिलाते हैं, तब एक खतरनाक विस्फोटक पदार्थ 'नाइट्रोग्लिसरीन' मिलता है। सन् १८४६ ई० में एक वैज्ञानिक सा त्रिरोने सबसे पहले नाइट्रोग्लिसरीन अपनी प्रयोगशालामें तैयार किया था। इस सम्बन्धमें यह जानकारी हासिल करनेके १६ वर्ष बाद तक किसी व्यक्तिके दिमागमें यह बात नहीं आयी कि युद्धस्थलमें नाइट्रोग्लिसरीन इस्तेमाल किया जा सकता है।

सन् १८६३ में स्वीडेनके निवासी नोबेलने नाइट्रोग्लिसरीनको रुई तथा सन आदिमें मिलाकर डायनामाइट तैयार किया। डायनामाइटकी विस्फोटक शक्ति बहुत प्रबल होती है। खान और पहाड़ोंकी सुरंगोंके खोदनेके काममें डायनामाइटकी बजहसे बड़ी मदद मिली। अवश्य इतने दिनों बाद युद्धमें भिड़नेवाले राष्ट्रोंने अपने स्वार्थवश डायनामाइटका प्रयोग शक्तिशाली बम तैयार करनेमें किया। डायनामाइटवाले बमकी ईजादके लिए वैज्ञानिकको दोषी ठहराना उतना ही अन्यायपूर्ण होगा जितना इस्पातकी खोज करनेवालोंको तलवारके लिए दोषी ठहराना।

इसी प्रकार जहरीली गैसकी खोजके पीछे भी युद्ध-सम्बन्धी किसी भावनाकी प्रेरणा नहीं थी। लगभग दो हजार वर्ष हुए इटलीमें विसूवियस ज्वालामुखीके उद्गारमें निकली हुई गन्धकी बाससे प्लाडनी नामक एक व्यक्तिका देहान्त हो गया था। इस घटनाके आधारपर पिछले क्रीमियन युद्धमें एडमिरल लार्ड डण्डोनाल्डने गन्धकके धुँएँका प्रयोग करनेकी बात सोची थी, किन्तु उनकी योजना कबूल नहीं की जा



सकी। गत जर्मन-महायुद्धमें क्लोरिन गैसका इस्तेमाल बहुत बड़े पैमानेपर हुआ था। युद्धमें विपाक्त गैसोंके प्रयोगका यही सबसे पहला उदाहरण है। किन्तु क्या आपको मालूम है कि वैज्ञानिकने लगभग १४० वर्ष पूर्व ही क्लोरिन गैसका पता साधारण नमकके गुणोंके अध्ययनके सिलसिलेमें लगा लिया था। वैज्ञानिक-जगत्में १४० वर्षसे लोग इस गैसके गुणोंसे परिचित थे, किन्तु किसी भी वैज्ञानिकने इसको युद्धमें इस्तेमाल करनेकी बात नहीं सोची थी। जर्मनीमें कैसर तथा उनके साथियोंने युद्धमें आतंकका पुट लानेके लिए इस अमानुषिक अस्त्रका सबसे पहले इस्तेमाल किया था।

मस्टर्ड गैस भी वैज्ञानिक अनुसन्धान और प्रयोगोंके सिलसिलेमें तैयार की गयी थी। इसके गुणोंकी परीक्षा की गयी तो पता चला कि यह अत्यन्त ही विषैली चीज है तथा त्वचाके स्पर्शमें आनेपर यह छाले उत्पन्न कर देती है। इन्हीं प्रयोगोंके सिलसिलेमें और भी कई गैसें तैयार की गयी थीं। तब किसीको गुमान भी न था कि उनमेंसे कोई गैस युद्धके लिए इस्तेमाल की जा सकती है। किन्तु राजनीतिज्ञ और अपनेको युद्धकलाके विशेषज्ञ कहनेवालोंने शत्रुपक्षको हद दर्जेकी यंत्रणा पहुँचानेके उद्देश्यसे मस्टर्ड गैसका भी प्रयोग कर ही डाला। अब इनकी इस आसुरी मनोवृत्तिके लिए आप विज्ञानके मत्थे क्यों दोष मढ़ते हैं ?

जिन दिनों मस्टर्ड गैस तैयार हुई थी, उन्हीं दिनों क्लोरोफार्मका भी पता चला था। आप जानते हैं कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानमें क्लोरोफार्मने एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। शल्य चिकित्सा आज जिस चरमसीमापर पहुँच चुकी है, वहाँतक क्लोरोफार्मकी सहायताके बिना इसका पहुँचना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था। निस्सन्देह क्लोरोफार्म मानव-समाजके लिए एक वरदानके रूपमें अवतीर्ण हुआ है इसकी खोजके लिए संसार सदैव विज्ञानका ऋणी रहेगा।

क्लोरोफार्मकी खोज करनेवाले वैज्ञानिकने जिस भावनासे उत्प्रेरित होकर अपने अनुसन्धान शुरू किये थे, ठीक उसी भावनासे प्रेरणा पाकर

विपाक्त गैस तैयार करनेवाले वैज्ञानिकोंने भी अपने अनुसन्धान शुरू किये थे और वह भावना थी—जानकारी हासिल करनेकी एक तीव्र लालसा। अतः क्लोरोफार्मके ढूँढ़नेवाले वैज्ञानिकों ने हम ऊँचा स्थान दे सकते हैं और न विपाक्त गैसके ढूँढ़नेवालेको नीचा स्थान।

आग लगानेवाले वम जो क्षणमात्रमें समूचे शहरमें आग फैला देते हैं, उनकी शक्ति उनके अन्दर भरे हुए 'थर्माइट' से प्राप्त होती है लेकिन थर्माइटका पता वैज्ञानिकने इस उद्देश्यसे हरगिज नहीं लगाया था कि वह इसका प्रयोग आग्नेय वम बनानेमें करेगा। सन् १९०१ में जब पहली बार विज्ञानशालामें थर्माइट तैयार किया गया था तो लोगोंने इससे उत्पन्न होनेवाली बेहद उपणताको देखकर यह सोचा था कि अवश्य ही धातुओंको गलानेके लिए थर्माइट एक बहुमूल्य चीज साबित होगा। थर्माइटके सिलसिलेमें युद्धकी बातें सोचनेका कोई अनुमान भी नहीं कर सकता था। किन्तु आज वही थर्माइट युद्धकालमें निपुण व्यक्तियोंके हाथमें पड़कर यमका दूत बन रहा है।

वर्तमान युगके युद्ध आकाशमें ही प्रायः लड़े जाते हैं। अग्निवर्षा, वमवर्षा तथा विपाक्त गैसकी वर्षा—सबमें वायुयानका जबर्दस्त हाथ है। अतः विज्ञानने वायुयानकी रचना करके मानव-समाजको बेहद क्षति पहुँचायी है—साधारण जनताके दिमागमें इसी किसके विचार भरे हैं। तनिक वायुयान-विकासकी कहानीपर भी ध्यान दीजिये। १७ दिसम्बर सन् १९०३ को अमेरिकाके ओहियो प्रान्तके निवासी राइट-बन्धुओंने अपने वायुयानमें बैठकर जब पहली बार आकाशमें १२ सेकेण्डतक सैर की थी, तो उन बेचारोंके दिमागमें आजकलके वम बरसानेवाले हवाई जहाज न थे। उन्होंने तो मनुष्यका युगोंका संचित, पक्षियोंकी भाँति आकाशमें विचरनेका स्वप्न सच बनाया था। उसके दूसरे साल सन् १९०४ में किसीने इंग्लैण्डके जलसेना-सचिवको यह बात सुझायी थी कि युद्धके कामके लिए वायुयान निस्सन्देह अत्यन्त कारगर साबित हो सकते हैं, इसपर उक्त सचिवने उपेक्षाभरे शब्दोंमें उत्तर



दिया था कि हमारी गवर्नमेण्टके पास शेखचिल्लीकी इन स्क्रीमोंपर विचार करनेके लिए समय नहीं है ।

अवश्य ही सन् १९१४ में वायुयानोंका प्रयोग युद्धस्थलमें शुरू हुआ था, किन्तु इसके लिए राइट-बन्धुओंको दोषी ठहराना नितान्त अन्याय होगा । इस प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्यके अन्दर नयी-नयी बातोंकी खोज और जानकारी प्राप्त करनेकी एक तीव्र लालसा निहित है । इसी लालसाकी प्रेरणा पाकर वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाकी दीवारोंके भीतर अपनी समूची जिन्दगी खत्म कर देता है । इतना त्याग करके जिस ज्ञानको वह हासिल करता है, यदि राजनीतिज्ञ तथा अन्य लोग उस ज्ञानसे अनुचित लाभ उठाकर उसका प्रयोग नरसंहार-लीलाके लिए करने लगे तो इसमें उस वैज्ञानिक वैचारिका क्या दोष ? देहातोंमें अकसर देखनेमें आता है कि कुछ नरपिशाच गड़ाँसेसे अपने शत्रुकी हत्या कर डालते हैं, तो क्या इसी कारण यह उचित है कि हम गड़ाँसा बनाने वालेको जी भरकर कोसें ?

## अन्तरिक्षमें प्रवेशका साधन—स्पूतनिक

आजसे लगभग ६० पूर्व राइट-बन्धुओंने प्रथम वायुयानका निर्माण करके मनुष्यकी आकाशकी उड़ानकी चिरसंचित आकांक्षाको साकार किया था । इसके उपरान्त वायुयानकी रफ्तार बढ़ानेके लिए भाँति-भाँतिके प्रयत्न किये जाने लगे । वायुयानके अग्रभागमें लगे प्रोपेलरके हस्थे जब तेजीके साथ घूमते हैं तो वे आकाशकी हवाको पीछे फेंकते हैं, फलस्वरूप वायुयानको आगे बढ़नेका वेग प्राप्त होता है । अतः स्पष्ट था कि शक्तिशाली इंजिनकी मददसे प्रोपेलरको यदि अधिक तेजीके साथ घुमाएँ तो वायुयानका वेग भी बढ़ेगा ।

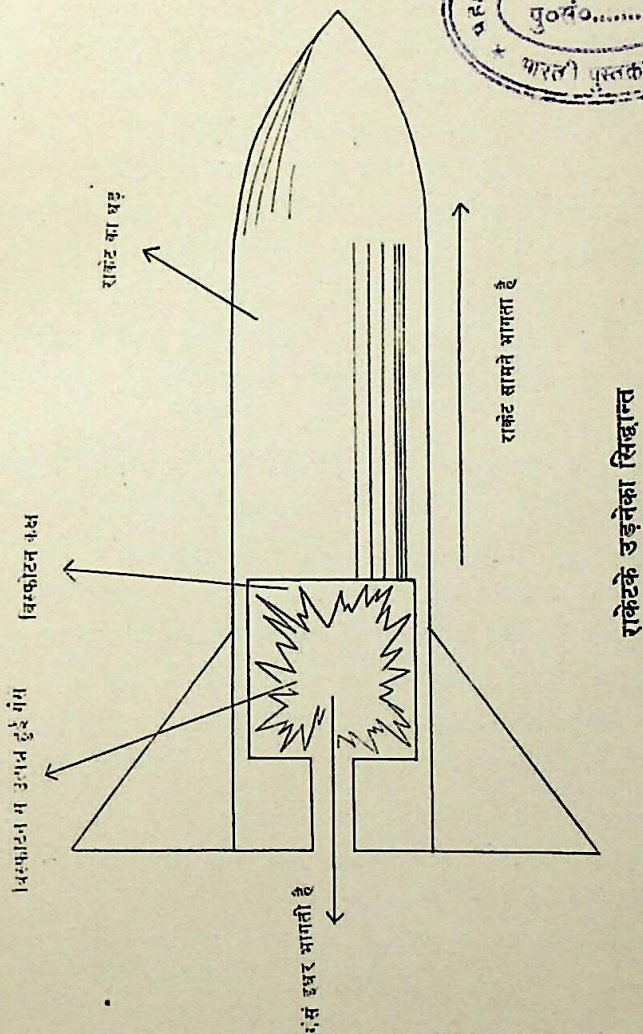
किन्तु आकाशकी हवा वायुयानपर अपनी रुकावटका बल भी डालती है। वायुयानका वेग जितना बढ़ता है उसी अनुपातमें हवाकी रुकावटका बल भी बढ़ता है, अतः हवामें उड़नेवाले वायुयानका वेग बहुत अधिक बढ़ाना सम्भव नहीं है। स्वभावतः वैज्ञानिकोंने सोचा कि यदि वायुयान ऊँचे आकाशमें उड़े तो वहाँकी पतली हवा रुकावटका बल उतना अधिक नहीं डाल सकेगी जितना पृथ्वीके निकटकी घनी हवा डालती है। अतः ऊर्ध्वाकाशमें वायुयानकी रफ्तार विशेष रूपसे बढ़ायी जा सकेगी। किन्तु इस प्रदेशमें एक नवीन कठिनाईका सामना करना पड़ता है—ऊर्ध्वाकाशमें प्रोपेलरके ब्लेड पतली हवाको ठीक तरहसे पकड़ नहीं पाते हैं अतः ये वायुयानको आगे बढ़ानेमें असमर्थ रहते हैं।

### राकेटका सिद्धान्त

इसलिए ऊँचे आकाशमें उड़नेवाले ऐसे यान बनाये गये जिनमें प्रोपेलर होते ही नहीं हैं। इन्हें राकेट-यानका नाम दिया गया है। इनके उड़नेका सिद्धान्त साधारण वायुयानसे सर्वथा भिन्न होता है। आतिशबाजीके बाणसे सभी परिचित होंगे। बाणकी पूँछमें बारूद भरी होती है, इसे दागनेपर बारूद विस्फोट करता है तो विस्फोटसे उत्पन्न हुई गैसों तीव्र वेगसे पीछे भागती हैं और इनकी प्रतिक्रियासे बाणको सामनेकी ओर बढ़नेका बल मिलता है।

ठीक इसी सिद्धान्तपर राकेट-यान बनाये गये हैं। इनकी शक्त एक बड़े सिगारकी तरह गावदुम होती है। इनकी पूँछमें विस्फोटक पदार्थ 'ईंधन' तथा उसे जलानेवाला पदार्थ 'आक्सीजन' अलग-अलग कक्षमें रखे रहते हैं। ईंधन और आक्सीजनका स्पर्श करा कर उसे विस्फोट कराते हैं तो विस्फोटसे उत्पन्न होनेवाली गैसों तीव्र वेगसे पीछे भागती हैं और उनकी प्रतिक्रियाके फलस्वरूप राकेट सामने भागता है। स्पष्ट है कि आकाशमें वायु जितनी हलकी या कम घनी होगी उतने ही अधिक वेगसे राकेट उड़ सकेगा। जर्मनीके युद्ध-विशेषज्ञोंने द्वितीय महायुद्धके दौरानमें इस तरहके वी२ राकेटोंका निर्माण किया था। इनमें ईंधनके लिए





अलकोहल प्रयुक्त होती थी, तथा उसे विस्फोट करानेके लिए द्रव आक्सीजन। ये दोनों अलग-अलग कक्षोंमें रखे जाते थे तथा पम्प द्वारा इन्हें सही अनुपातमें राकेटकी पूँछमें स्थित विस्फोटन-कक्षमें पहुँचाया जाता था। वी<sub>२</sub> राकेट आकाशमें ६० मीलकी ऊँचाईतक पहुँचते और इनकी रफ्तार प्रति घण्टे ३००० मीलसे भी अधिक थी।

राकेटके बारेमें कुछ लोगोंने यह गलत धारणा बना रखी है कि पूँछसे बाहर निकलनेवाली गैसों पीछेकी हवाको धक्का देती हैं तब इस धक्केके जोरसे राकेट आगे बढ़ता है। वास्तवमें ऐसी बात नहीं है। पूर्ण शून्य आकाशमें जहाँ हवा नाममात्रकी भी नहीं है, राकेट और भी अधिक तेजीसे उड़ पाते हैं क्योंकि पीछे निकलनेवाली गैसके मार्गमें हवाकी रुकावट न होनेसे उसका वेग विशेष प्रबल होता है, अतः प्रतिक्रिया भी प्रबल होती है।

राकेट धुर ऊपरकी ओर दागे जाते हैं, और जब ये महत्तम वेग प्राप्त कर लेते हैं तब राकेटकी धड़के अग्रभागमें रखे स्वयं-चालित यंत्र उसे लक्ष्यकी दिशाकी ओर घुमा देते हैं। अवश्य राकेटको दागनेसे पहले ही इस नियन्त्रक यन्त्रको पूर्ण रूपसे उसी दिशाकी ओर ले जानेके लिए व्यवस्थित कर लिया जाता है। इसमें तनिक-सी असावधानी हुई तो राकेट अपने लक्ष्यसे मीलों दूर जा गिरेगा। राकेटके सिरेपर बम सरीखे विध्वंसक पदार्थ भरे रहते हैं जो लक्ष्यसे टकरानेपर उसे नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं। राकेटके झुकावका कोण, वह ऊँचाई जिसपर इसकी ईंधन सप्लाई बन्द करनी है, तथा उड़ानकी दूरी, इन सबका पहलेसे ही हिसाब कर लेना आवश्यक होता है और उसीके अनुसार नियन्त्रक यन्त्रकें कल-पुर्जे सेट किये जाते हैं।

राकेट वजनमें अत्यन्त भारी-भरकम होते हैं। राकेटके वजनका लगभग दो-तिहाई तो केवल ईंधन और आक्सीजनका भार होता है। उदाहरणके लिए, जर्मनीके वी<sub>२</sub> राकेटकी सिरेसे पूँछतक लम्बाई ४६ फीट थी और इसकी धड़का व्यास लगभग ५.३ फुट; किन्तु इसका वजन

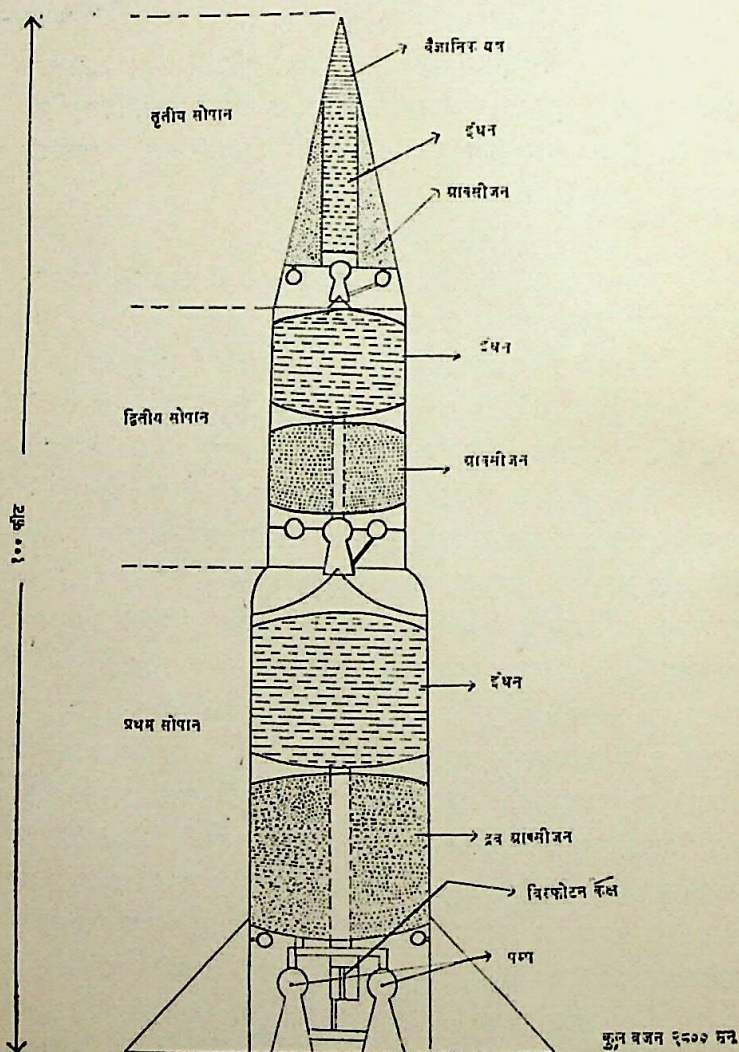


लगभग ३०० मन था जिसमें से २०० मनसे अधिक वजत ईंधन और आक्सीजन का था !

और अधिक ऊँचाई तक पहुँच सकने योग्य राकेटके लिए आवश्यक होगा कि इसमें ईंधन और आक्सीजनकी मात्रा बढ़ायी जाय, किन्तु ऐसा करनेपर राकेटका कुल वजन इतना अधिक हो जायगा कि राकेट जमीनसे ऊपर उठ ही नहीं सकेगा ।

### तीन सोपानके राकेट

इस समस्याको अमेरिका और रूसके इंजीनियरोंने सफलतापूर्वक हल किया है । राकेटकी उड़ानकी ऊँचाई बढ़ानेके लिए दो या तीन राकेट एक दूसरेके पीछे जोड़े जाते हैं । यदि दो राकेट इस तरह जोड़े गये हैं तो इसे 'दो सोपानका राकेट' कहते हैं और यदि तीन राकेट जोड़े गये हैं तो इसे 'तीन सोपान (तीन स्टेज) का राकेट' कहते हैं । सबसे नीचेवाला प्रथम राकेट आरम्भमें दागा जाता है अतः समस्त यान आकाश में ऊपरको उठता है और इसका वेग तेजीसे बढ़ता है । लगभग एक मिनटमें प्रथम राकेटका ईंधन जल चुकता है और यह ४० मीलकी ऊँचाईपर पहुँचकर महत्तम वेग प्राप्त कर लेता है, ठीक उसी क्षण द्वितीय राकेट अपने आप दगता है और यह प्रथम राकेटकी गोदसे ऊँचा उठ जाता है । अवश्य इसके उपरान्त भी प्रथम राकेटका ऊपर उठना जारी रहता है, किन्तु इसका वेग निरन्तर कम होता जाता है, यहाँतक कि लगभग ९० मीलकी ऊँचाईतक चढ़नेके बाद यह नीचे गिरना आरम्भ करता है । इस बीच द्वितीय राकेट लगभग ३०० मीलकी ऊँचाईतक पहुँचकर अपना महत्तम वेग प्राप्त कर लेता है और तबतक इसका ईंधन भी जल चुकता है, इसी क्षण तृतीय राकेट दगता है और द्वितीयकी गोदसे ऊपर उठ जाता है और जबतक इसका ईंधन जलता रहता है तबतक इसका वेग भी बराबर बढ़ता ही जाता है । इस तरह यह तृतीय राकेट लगभग ५००-१००० मीलकी ऊँचाईतक पहुँच सकता है ।



तीन सोपानका राकेट



सन् १९४९में अमेरिकाके सैनिक अधिकारियोंने दो सोपानका राकेट 'वम्पर' परीक्षणके लिए छोड़ा था जो आकाशमें २५० मीलकी ऊँचाईतक पहुँचा था। इसके अग्रभागमें अनेक वैज्ञानिक यन्त्र रखे गये थे जो ऊर्ध्वाकाशकी वायुके ताप, दबाव तथा नमी आदिके बारेमें महत्वपूर्ण जानकारी दे सके थे।

### अन्तर्महाद्वीपीय प्रक्षेपणास्त्र

युद्धमें राकेटका उपयोग अन्तर्महाद्वीपीय प्रक्षेपणास्त्रके रूपमें किया जा सकता है। अवश्य इसके लिए आवश्यक होगा कि इनकी उड़ानकी क्षैतिज दूरी बढ़ायी जा सके। अनुमान किया जाता है कि एक सोपानका राकेट लगभग ६०० मीलकी दूरीतक मार कर सकता है, दो सोपानका लगभग १५०० मीलतक और तीन सोपानका राकेट ३००० मीलतक जा सकता है। राकेट प्रक्षेपणास्त्रके निर्माणमें सबसे अधिक सावधानी इस बातके लिए बरतनी पड़ती है कि इसके मार्गनिर्देशनके लिए नियन्त्रक यन्त्र पूर्णतया निर्दोष और एकदम सही हों। राकेट इंजिन दगनेके बाद बस लगभग एक मिनटतक ही चालू रहता है, बस इसी दौरानमें नियन्त्रक यन्त्रको उसके मार्ग-निर्देशनका कार्य पूरा करना होता है। यह एक दुस्तर कार्य है और इस सम्बन्धमें अनुसन्धान-कार्य अभी जारी हैं।

ऊर्ध्वगामी राकेटके अग्रभागमें रखे वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा ऊर्ध्वाकाशके सम्बन्धमें अनेक नवीन तथ्योंका पता लगाया जा सकता है। राकेटमें लगे रेडियो यन्त्रमें इस बातका प्रबन्ध रहता है कि थोड़ी-थोड़ी देरपर ऊँचे आकाशकी हवाके ताप, दबाव आदिकी जानकारी रेडियो द्वारा ब्राडकास्ट होती रहे। धरतीपर रखे रेडियो-सेट द्वारा इन संकेतोंको ग्रहण किया जा सकता है।

### कृत्रिम उपग्रह

राकेट द्वारा आकाशके उच्च प्रदेशके सम्बन्धमें वैज्ञानिक जानकारी केवल उस थोड़ेसे समयके लिए प्राप्त हो पाती है जबतक वह उड़ान

करता है। किन्तु क्रतुज्ञान आदिके लिए आवश्यक है कि ऊर्ध्वाकाशके बारेमें अधिक विस्तारमें जानकारी हासिल की जाय। अतः वैज्ञानिकोंने सोचा कि यदि वे एक ऐसा राकेट आकाशमें भेज सकें जो एक निश्चित ऊँचाईपर धरतीकी परिक्रमा कुछ दिनोंतक लगाता रहे तो उसमें लगे यन्त्रों द्वारा उस प्रदेशकी वायुके बारेमें यह जानकारी प्राप्त कर सकेंगे कि उस अवधिमें वायुके ताप, दबाव, बहाव और नमी आदिमें क्या-क्या परिवर्तन हुए। राकेट द्वारा भेजे गये इस ढंगके संस्थानको कृत्रिम उपग्रह या कृत्रिम चन्द्रमाका नाम दिया गया है।

आकाशमें जब किसी चीजको ऊपर फेंकते हैं तों कुछ दूरतक ऊपर चढ़कर यह पृथ्वीके आकर्षणके कारण फिर नीचे आ गिरती है। धरती-के खिंचावकी पकड़से बाहर जा सकनेके लिए यह आवश्यक है कि ऊपर फेंकी जानेवाली वस्तुकी रफ्तार कमसे कम ७ मील प्रति सेकेण्ड हो। इतनी तेज रफ्तार अकेले एक राकेटसे नहीं मिल सकती है; इसके लिए तीन सोपानके राकेटकी आवश्यकता होगी।

### सोवियत निर्मित कृत्रिम चन्द्रमा—स्पूतनिक नं० १

४ अक्टूबर १९५७ का दिन अन्तरिक्ष प्रवेश सम्बन्धी अनुसन्धानके इतिहासमें चिरस्मरणीय रहेगा। आजके दिन ही सोवियत वैज्ञानिकोंने प्रथम कृत्रिम चन्द्रमा आकाशमें छोड़ा। मानो आजके दिन आकाश-यात्राके एक नवीन युगका सूत्रपात हुआ। सोवियत वैज्ञानिकोंने इस कृत्रिम चन्द्रमाको 'स्पूतनिक नं० १' का नाम दिया है।

यह कृत्रिम चन्द्रमा अल्यूमिनियमका बना एक गोला था जिसका व्यास २३ इंच था। इसीके अन्दर वैज्ञानिक यन्त्र रखे गये थे तथा रेडियो ट्रान्समीटर और उसके संचालनके लिए बैटरी भी। इन सबका कुल वजन २½ मन था। तीन सोपानवाले राकेटके अग्रभागमें यह रखा गया था। बारी-बारीसे तीनों राकेट दगते गये और एक-एक करके प्रथम और द्वितीय राकेट अलग होकर गिर गये। अन्तिम राकेटने गोलेको ५६० मीलकी ऊँचाईपर पहुँचा कर उसे ऊर्ध्व दिशासे बगलमें इस



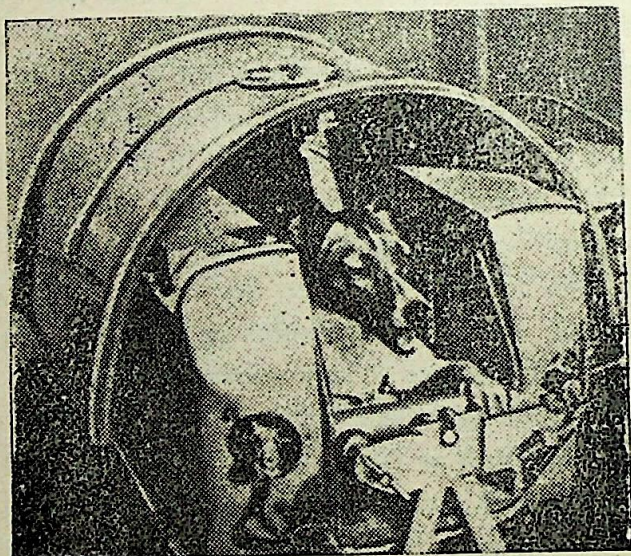
तरह झुकाया कि राकेट तथा गोला धरतीकी सतहके समानान्तर लगभग १८००० मील प्रति घण्टेकी रफ्तारसे चलने लगे। तदुपरान्त पृथ्वीके आकर्षण-बलके कारण ये दोनों ही धरतीके गिर्द दीर्घवृत्त मार्गमें परिक्रमा लगाने लगे।

आकारमें बड़ा होनेके कारण तृतीय राकेटकी रफ्तार हवाकी रुकावटसे अपेक्षाकृत अधिक तेजीसे कम होने लगी किन्तु स्पूतनिकका गोला लगभग उसी रफ्तारसे एक कृत्रिम चन्द्रमाकी तरह परिक्रमा लगाता रहा। ऊपरकी विरल हवाके घर्षणके कारण गोलेके वेगमें बहुत शनैः-शनैः हास होता रहा। आरम्भमें यह ९० मिनटमें एक परिक्रमा पूरी करता था। स्पूतनिक नं० १ से कई सप्ताहतक निरन्तर रेडियो संकेत ब्राडकास्ट होते रहे, जो ऊर्ध्वाकाशके वायुस्तरों तथा वहाँ पहुँचनेवाली सूर्य-किरणोंके बारेमें आवश्यक जानकारी देते रहे। पूरे तीन महीनेतक स्पूतनिक नं० १ परिक्रमा लगाता रहा और जनवरी ४, १९५८ को वायुमण्डलके घने स्तरोंमें प्रवेश करनेपर यह वायुके घर्षणकी गर्मीसे जलभुन कर राख हो गया। अपने जीवन-कालमें इसने पृथ्वीके गिर्द १४०० परिक्रमाएँ पूरी कीं और इस प्रकार कुल ९ करोड़ ६० लाख मीलका फासला इसने तय किया !

प्रथम उपग्रहके छोड़नेके एक महीने बाद सोवियत रूसने ३ नवम्बर १९५७ को स्पूतनिक नं० २ छोड़ा जो प्रथम स्पूतनिकसे लगभग ६ गुना भारी है; इसका वजन १३½ मन है। द्वितीय स्पूतनिकमें रेडियो ट्रान्समीटर तथा अन्य यन्त्रोंके अतिरिक्त एक बन्द कक्षमें जीवित कुत्ता 'लाइका' भी रखा गया था। इस स्पूतनिकमें एक्स-रश्मियों, अल्ट्रावायलेट किरणों तथा ब्रह्माण्ड-रश्मियोंकी शक्ति नापनेवाले यन्त्र, रेडियो ट्रान्समीटर और बैटरी तथा वायुतापमापी आदि रखे गये हैं। चारों ओरसे 'एयरटाइट' बन्द कक्षमें कुत्ता रखा गया तथा उसके अन्दर ही उसके लिए विशेष प्रकारका भोजन, श्वासके लिए वायु, ताप-नियन्त्रक यन्त्र तथा कुत्तेके शरीरका ताप नापनेवाला यन्त्र,



उसके हृदयकी धड़कन नापनेका विद्युत्-यन्त्र, श्वासकी गतिका यन्त्र तथा रक्तचाप यन्त्र भी रखे गये थे। इन यन्त्रोंके रखनेका उद्देश्य यह था कि ऊर्ध्वाकाशकी परिस्थितियोंमें जीवधारियोंकी प्रतिक्रियाको सही-सही ढंगपर नापा जा सके। इन यन्त्रोंके निदेशन-फल संकेत-रूपमें रेडियो ट्रान्समीटर द्वारा ७३ तथा १५ मीटरकी लहर लम्बाईपर ब्राडकास्ट



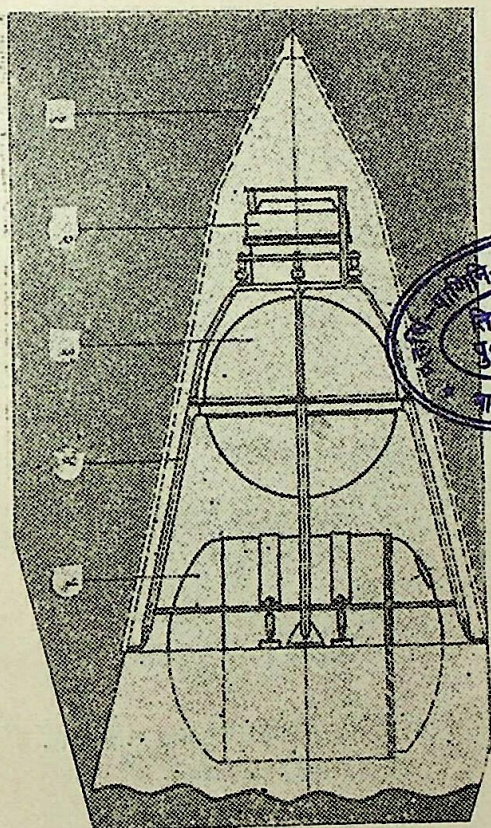
स्पूतनिक नं० २ में

जानेवाला कुत्ता 'लाइका' अपने सुरक्षाकक्षमें

होते रहे और इन्हें पृथ्वीपर स्थित रेडियोसेट द्वारा ग्रहण किया गया। इस स्पूतनिककी बैटरी पूरे सात दिनोंतक रेडियो यन्त्रका संचालन कर सकी थी, तदुपरान्त बैटरीकी शक्ति समाप्त हो गयी।

स्पूतनिक नं० २ लगभग १००० मीलकी ऊँचाईपर पृथ्वीकी परिक्रमा लग रहा है। यह एक चक्र १०४ मिनटमें पूरा करता है।

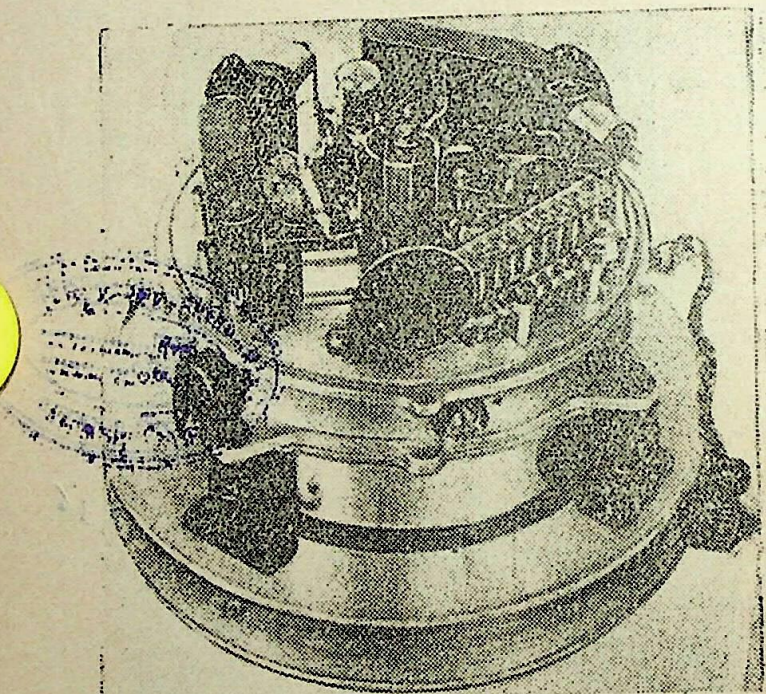




स्पूतनिक नं० २ का अग्रभाग

१. बाहरी शंकु आकारका आवरण जो अन्तमें अलग हो जाता है ।
२. सौर किरणोंकी शक्ति नापनेका यन्त्र तथा कास्मिक रश्मिमापी यन्त्र ।
३. रेडियो ट्रान्समीटर ।
४. मजबूत इस्पातका फ्रेम जो यन्त्र-संस्थानको जकड़े रखता है ।
५. कुत्ते 'लाइका'के रखनेके लिए सुरक्षाकक्ष ।



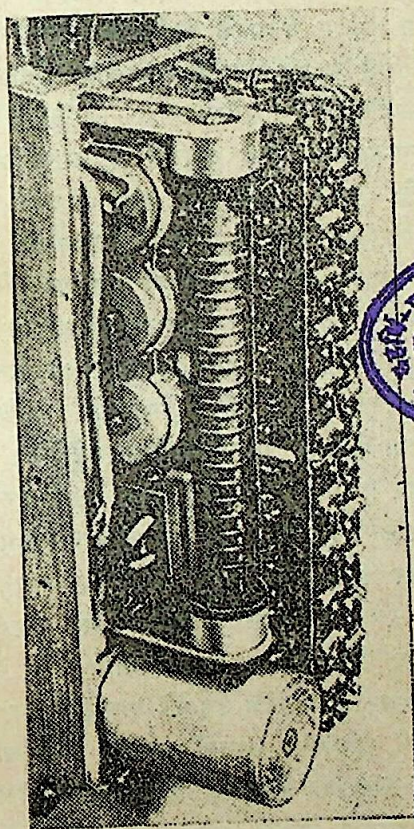


### स्पूतनिक नं० २ के अग्रभागमें रखा गया सौर-किरणोंकी शक्ति नापनेवाला यन्त्र

इसका परिभ्रमण-मार्ग अधिक ऊँचाईपर स्थित है, अतः यहाँ वायु अत्यन्त ही पतली (विरल) है और इस कारण हवाकी रुकावट स्पूतनिक नं० १ की अपेक्षा द्वितीय स्पूतनिकपर कम पड़ेगी। फलस्वरूप यह आशा की जाती है कि स्पूतनिक नं० २ का जीवनकाल प्रथम स्पूतनिककी तुलनामें कहीं अधिक होगा।

रेडियो संकेत बन्द हो जानेके बादसे द्वितीय स्पूतनिककी गतिविधि-का निरीक्षण दूरबीन तथा रैडर यन्त्रों द्वारा किया जा रहा है। भूमण्डल-





536

स्पूतनिक नं० २ में रखा गया

कास्मिक किरणकी शक्ति नापनेवाला यन्त्र

पर स्थित अनेक वेधशालाओंसे यह निरीक्षण-कार्य सुव्यवस्थित तथा नियमित रूपसे पूरा किया जा रहा है और आशा की जाती है कि इस प्रकार संकलित किये गये निरीक्षणफल ऊर्ध्वाकाश सम्बन्धी अनेक समस्याओंको सहज ही हल कर लेंगे।

## चन्द्रलोककी यात्राकी योजना

राकेट तथा कृत्रिम उपग्रहके आविष्कारने मनुष्यके मनमें यह आशा भी जगायी है कि वह शीघ्र ही राकेट-यानमें बैठकर चन्द्रमा तथा अन्य आकाश-पिण्डोंतक पहुँच सकेगा।

धरतीसे चन्द्रमातककी दूरी लगभग २३ लाख मील है। अतः अकेला एक राकेट अपने बलसे इस लम्बी यात्राको पूरा नहीं कर सकेगा। इसके लिए यह आवश्यक होगा कि आकाशमें पहले लगभग १००० मीलकी ऊँचाईपर कृत्रिम चन्द्रमाकी तरह एक कृत्रिम प्लैटफार्म स्थापित किया जाय। यह प्लैटफार्म चन्द्रलोककी यात्राके लिए बीचके स्टेशनकी काम देगा। अब पृथ्वीतलसे एक-एक करके तीन राकेट छोड़े जायेंगे जो संकुशल इस प्लैटफार्मपर पहुँच जायँ। राकेटके साथ ही कुशल करिगर तथा वैज्ञानिक भी प्लैटफार्मपर पहुँचेंगे। ये लोग तीन या चार राकेटोंको एकके पीछे दूसरे जोड़कर तीन-चार सोपानवाला राकेट-यान तैयार करेंगे। इस यानको प्लैटफार्मपरसे दागा जायगा जो तीव्र वेगसे चलकर चन्द्रमातक पहुँच जायगा। इस राकेट-यानकी रफ्तार प्रति घण्टे २५००० मीलके करीब होगी और चन्द्रमातक पहुँचनेमें इसे एक दिनसे भी कम समय लगेगा।

अनन्त अन्तरिक्षकी इस लम्बी उड़ानमें यानमें बैठनेवाले यात्रियोंकी रक्षाके लिए भी पूरी सावधानी बरतनी पड़ेगी। ऊँचे आकाशमें बेहद ठण्ड पड़ती है अतः आवश्यक होगा कि यात्री चारों ओरसे बन्द कक्षमें बैठें। इस कक्षमें विद्युत् अँगीठी जलाकर ठण्ड कम की जा सकेगी। श्वासके लिए पीपेमें बन्द आक्सीजनको भी साथ ले जाना होगा। यात्री-कक्षमें हवाका दबाव भी विशेष तरीकोंसे लगभग धरतीकी वायुके दबावके बराबर रखना होगा। ऊर्ध्वाकाशमें हवाका दाब इतना कम होता है कि वहाँ खुले प्रदेशमें कोई जीवधारी जिन्दा नहीं रह सकता। बाहरी दबाव कम होनेके कारण उसकी नाक, कानसे रक्तकी धारा फूटकर बाहर निकल पड़ती है और उसकी तुरन्त मृत्यु हो जाती है।



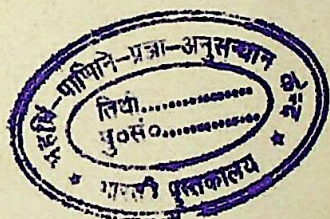
अन्तरिक्ष में प्रवेश का साधन — स्पूतनिक

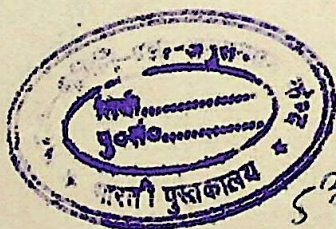
फिर भी यह तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि दस-बीस वर्षके अन्दर ही चन्द्रलोककी यात्राका स्वप्न मनुष्य अवश्य पूरा कर लेगा और तब चन्द्रमाको अन्तरिक्ष यात्राका द्वितीय स्टेशन बनाया जा सकेगा और वहाँसे शक्तिशाली राकेट-यान अन्य ग्रह-नक्षत्रोंके लिए रवाना हो सकेंगे।













## विज्ञानकी प्रगति

(ले०-श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव)

विज्ञानके नवीनतम आविष्कारोंकी झलक इस सचित्र पुस्तकमें देखिये । इसमें हाइड्रोजन बम, रैडार, राकेटयान आदि महत्वपूर्ण आविष्कारोंका खासा वर्णन है । भारतके पुनर्निर्माणमें भारतीय विज्ञान कितना महत्वपूर्ण योग दे रहा है, इसका आभास आपको इस पुस्तकमें मिलेगा ।

मूल्य  
३/७५  
न०पै०



करने जा रहे  
पके जीवन ३  
सी डी डॉन  
ए.

ग्रो वास्तविक घड़ियों  
जानकारी के लिए 3

TAR PRADESH: A  
LS 2525828, 2525828  
, 252551, BADAUN  
AUTO SALES 232  
433, BAHRAICH:  
ORS 272540, 220140  
ABAD: CHANDRA  
GHAZIABAD: (CLO  
MOBILES 2337531, M  
BILES 2333193, 23309  
HERI: VIJAY AUTOM  
TO SALES 2258419, 5  
40, MAU: RAJPUT AUT  
MITTAL AGENCIES 24  
MOBILES 232100, NO  
4, PRATAPGARH: JAN  
SITAPUR: AGARWAL  
MOBILES 222223, SULT  
O AGENCIES 2370455, 2